॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

ॐ

विशद श्रमण चर्या

संकलन/सम्पादन-समन्वयक

आचार्य विशद सागरजी महाराज

कृति : विशद श्रमण चर्या (स्त्रोत पाठ संग्रह)
संकलन : **आचार्य विशद सागर महाराज ससंघ**
: **मुनि विशाल सागर महाराज**
: **क्षु. विसोम सागर महाराज**
: **आर्यिका भक्ति भारती**
: **क्षु. वात्सल्य भारती माता जी**
संस्करण : पूर्व 3 संस्करण – 6000
: चतुर्थ – 1000

द्रव्यदाता :
श्री अनिल कुमार जैन चुड़ीवाल
A-118 मनु पथ, श्याम नगर, जयपुर
Mob. : 9829061354, 9829081304

शुद्धिकरण :
गौतमप्रसाद शास्त्री 'व्याकरणाचार्य', देवली

प्राप्ति स्थान :
✻ **आचार्य श्री विशद सागर जी संघस्थ दीदी**
9829076085, 9660996425, 9829127533, 8700876822, 7568840873
http://www.vishadsagar.com, App,,, vishad sagar ji

✻ **सुरेश जैन** पी–958, शान्ति नगर, जयपुर मो. 9413336017
✻ **श्री महेन्द्र जैन** सेक्टर–3, रोहिणी दिल्ली मो. 9810570747
✻ **विशद साहित्य केन्द्र, रेवाड़ी** मो. 9812502062

मुद्रक: **नवजीवन ऑफसेट**, निवाई (राज.)
फोन : 01438–222127, मो. : 9414348316

अपनी कलम से

दैनिक चर्या पूर्ण हो, करके प्रभु गुणगान।
निज आतम का ध्यानकर, करूँ विशद कल्याण॥

अनादि काल से संसार का परिणमन अपनी गति से चलता आ रहा है अनन्त काल तक चलता रहेगा। संसार अनन्त है संसार में रहने वाले जीव भी अनन्त हैं, किन्तु यदि इंसान रत्नत्रय को पालन करे तो अपने अनन्त संसार का अन्त अवश्य कर सकता है। रत्नत्रय का पालन करने के लिए मोक्ष मार्ग की साधना करनी होगी, रत्नत्रय के मार्ग पर गमन करने के लिए हमें अपने आवश्यक कर्त्तव्यों का पालन, पथ का पाथेय साथ लेकर चलना होगा तभी हमारी यात्रा पूर्ण हो सकेगी।

आवश्यक कर्त्तव्यों का पालन करने के लिए एवं मार्ग पर बढ़ने के लिए सही मार्ग दर्शक की आवश्यकता होगी। इस हेतु प्रथम मार्ग दर्शक अर्हन्त देव हैं, जो इस काल दोष के कारण साक्षात् हमें प्राप्त नहीं हैं। दूसरा सोपान है शास्त्र जिसके सहारे हम मार्ग पर बढ़ सकते हैं। इस हेतु मोक्ष मार्गी साधक के लिए शास्त्र ही नेत्र है। आ. कुन्द कुन्द स्वामी ने प्रवचन सार में कहा भी है –

आगम चक्खू साहू, इन्दिय चक्खूणि सव्वभूदाणि।
देवा य ओहि चक्खू, सिद्धा पुण सव्वदा चक्खू॥

साधु का नेत्र आगम (शास्त्र) है संसारी प्राणियों के नेत्र इन्द्रियाँ हैं। देवों का नेत्र अवधि ज्ञान है तथा सिद्धों का सर्वांग शरीर नेत्र है। इस आधार पर अपने आवश्यक कर्त्तव्यों का पालन करने के लिए **"विशद श्रमण चर्या"** पुस्तक आपके समक्ष प्रस्तुत है। संकलन में मेरे द्वारा कहीं त्रुटि रह गई हो ज्ञानी जन मुझे मार्ग दर्शन देने की कृपा करें।

– आचार्य विशद सागर

अनुक्रमणिका

खण्ड-अ (स्त्रोत)

क्र.	शीर्षक	पृष्ठ सं.
1.	श्री सिद्ध भक्ति	1
2.	मंगलाष्टकम्	2
3.	श्री नवदेवता स्तोत्रम् (मंगलाष्टकम्)	4
4.	अथ सुप्रभात स्तोत्रम्	7
5.	अथ घण्टाकरण मंत्र	10
6.	अथ महावीराष्टक स्तोत्रम्	11
7.	अथ वर्धमानाष्टक स्तोत्रम्	13
8.	अथ भक्तामर स्तोत्रम्	15
9.	अथ वीतराग स्तोत्रम्	27
10.	अथ लघु स्वयंभू स्तोत्रम्	29
11.	अथ कल्याणमन्दिर स्तोत्रम्	32
12.	अथ परमानन्द स्तोत्रम्	42
13.	अथ एकीभाव स्तोत्रम्	45
14.	विपत्ति नाशक चन्द्र प्रभः स्तोत्रम्	51
15.	अथ जिन चतुर्विंशतिका स्तोत्रम्	52
16.	अथ विषापहार स्तोत्रम्	59
17.	अथ नवग्रह शांति स्तोत्रम्	64
18.	अथ अद्याष्टक स्तोत्रम्	65
19.	अथ अकलंक स्तोत्रम्	67
20.	अथ विशद जिन स्तोत्रम् (आ. श्री द्वारा)	71

क्र.	शीर्षक	पृष्ठ सं.
21.	अथ बृहद स्वयंभू स्तोत्रम्	77
22.	तीर्थंकर वन्दना	99
23.	नवदेव रक्षा स्तोत्रम्	102
24.	श्री भगवज्जिनअष्टोत्तर-सहस्रनाम स्तोत्रम्	103
25.	चतुर्विंशति स्तव	123
26.	अथ गोम्मटेस-थुदि	125
27.	अथ श्री सरस्वती स्तोत्रम्	127
28.	अथ श्री सरस्वती नाम स्तोत्रम्	129
29.	अथ चैत्यालयाष्टक-स्तोत्रम्	130
30.	अथ करुणाष्टक	132
31.	अथ निरंजन स्तोत्रम्	133
32.	अथ आध्यात्म शयन गीतिका	134

खण्ड-ब (प्रतिक्रमण)

33.	श्रमण रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमण	135
34.	अथ पाक्षिकादि प्रतिक्रमणम्	163
35.	बृहद्-आलोचना	167
36.	लघु योगी भक्ति	178
37.	गणधर-वलय	186
38.	बृहद-आचार्य-भक्ति	220
39.	श्रावक-प्रतिक्रमणम्	235
40.	आचार्य वन्दना	260
41.	सामायिक विधि	265

क्र.	शीर्षक	पृष्ठ सं.
42.	पंचमहागुरु भक्ति (प्राकृत)	269
43.	द्वात्रिंशतिका (सामायिक पाठ)	271

खण्ड-स (भक्ति पाठ)

44.	श्री ईर्यापथ भक्ति	276
45.	श्री सिद्ध भक्ति	282
46.	श्री चैत्य भक्ति	285
47.	श्री श्रुत भक्ति	293
48.	श्री चारित्र भक्ति	297
49.	श्री योगि भक्ति	300
50.	श्री पञ्चमहागुरु भक्ति	302
51.	श्री शांति भक्ति	304
52.	श्री समाधि भक्ति	309
53.	श्री नन्दीश्वर भक्ति	312
54.	श्री अर्हन्तदेव की महिमा (समोशरण महिमा)	320
55.	श्री निर्वाण भक्ति	324
56.	तत्त्वार्थ सूत्रम्	331
57.	इष्टोपदेशः	352
58.	द्रव्य-संग्रह	359
59.	रत्नकरण्ड-श्रावकाचारः	367
60.	ऋषि मण्डल स्तोत्रम् (संस्कृत)	386
61.	अथ श्री वज्रपंजर स्तोत्रम्	398
62.	उवसग्गहरं स्तोत्रम्	399

क्र.	शीर्षक	पृष्ठ सं.
63.	जैन रक्षा स्तोत्रम्	400
64.	लघुसहस्त्रनाम स्तोत्रम्	403
65.	श्री पार्श्वनाथ स्तोत्रम्	407
66.	विशद सिद्ध अर्चा	409
67.	मंगलाष्टकम्	410
68.	लघु सुप्रभात स्तोत्रम्	411
69.	नवदेव स्तोत्रम्	412
70.	पञ्च परमेट्ठी थुदि	414
71.	श्री बाहुबली स्तवन	415
72.	श्री बाहुबली स्तोत्रम्	417
73.	श्री वृषभदेव स्तुति	418
74.	श्री वृषभनाथ रक्षा स्तोत्रम्	420
75.	श्री पद्मप्रभ रक्षा स्तोत्रम्	421
76.	श्री चन्द्रप्रभ रक्षा स्तोत्रम्	422
77.	श्री पुष्पदन्त रक्षा स्तोत्र	423
78.	श्री वासुपूज्य रक्षा स्तोत्रम्	424
79.	श्री शांतिनाथ स्तोत्रम्	425
80.	श्री शांतिनाथ रक्षा स्तोत्रम्	427
81.	श्री शांतिनाथ स्तवन	428
82.	श्री मुनिसुव्रतनाथ रक्षा स्तोत्रम्	429
83.	श्री नेमीनाथ रक्षा स्त्रोतम्	430
84.	संकट निवारक पार्श्वनाथ स्तोत्रम्	431
85.	श्री महावीर रक्षा स्तोत्रम्	432
86.	गणधर स्तवन	433

क्र.	शीर्षक	पृष्ठ सं.
87.	पार्श्वनाथ स्तोत्रम्	434
88.	परमेश्वर स्तोत्रम्	435
89.	जिनेन्द्र शरण स्तोत्रम्	436
90.	दशलक्षण स्तोत्रम्	437
91.	वैराग्याष्टक	439
92.	विशद द्वादश अनुप्रेक्षा	441
93.	सोलहकारण भावना	443
94.	नवदेव भक्ति	445
95.	लघु चारित्र भक्ति	448
96.	विशद चारित्राष्टकं	451
97.	चारित्र स्तुति	453
98.	श्री पंच परमेष्ठि भक्ति	454
99.	लघु नंदीश्वर भक्ति	456
100.	लघु शांति भक्ति	459
101.	सिद्धचक्र-स्तुति	461
102.	कल्याणालोचना	462
103.	मंगल गोचर माध्याह्न क्रिया विधि	469

*****

कौन-कौन सी भक्ति कहाँ-कहाँ करनी चाहिए

कार्य	भक्ति
जिन प्रतिमावंदन	चैत्यभक्ति, पंचगुरुभक्ति
आचार्य वंदना (गवासन से)	लघु सिद्धभक्ति, आचार्य भक्ति
सिद्धांतवेत्ता आचार्य की वंदना	सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति, आचार्य भक्ति
साधारण मुनियों की वंदना	सिद्धभक्ति
सिद्धांतवेता मुनियों की वंदना	सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति
स्वाध्याय का प्रारम्भ	लघुश्रुत भक्ति, आचार्य भक्ति
स्वाध्याय की समाप्ति	लघु श्रुत भक्ति
आचार्य की अनुपस्थिति में पहले दिन उपवास व आहार के लिये गमन	सिद्ध भक्ति पढ़कर उसका त्याग
आचार्य की उपस्थिति में आहार लिये जाने के पहले	लघुसिद्धभक्ति, लघुयोगी भक्ति

कार्य	भक्ति
आहार के अनंतर प्रत्याख्यान व उपवास की प्रतिज्ञा को	लघु सिद्धभक्ति, लघुयोगि भक्ति
चतुर्दशी के दिन त्रिकाल वंदना के लिये	सिद्धभक्ति, चैत्यभक्ति, श्रुतभक्ति, पंचगुरु भक्ति, शांतिभक्ति और समाधिभक्ति
नंदीश्वर पर्व में	सिद्धभक्ति, नंदीश्वरभक्ति, पंचगुरुभक्ति, शांतिभक्ति, समाधिभक्ति
सिद्धप्रतिमा के सामने	सिद्धभक्ति
तीर्थंकर के जन्म दिन	सिद्धभक्ति, चैत्यभक्ति, श्रुतभक्ति, पंचगुरुभक्ति, शान्तिभक्ति
अष्टमी-चतुर्दशी की क्रिया में अपूर्व चैत्यवंदना व त्रिकाल नित्यवंदना के समय	चैत्यभक्ति, पंचगुरुभक्ति, शान्तिभक्ति
अभिषेक वंदना	सिद्धभक्ति, चैत्यभक्ति, पंचगुरुभक्ति, शांतिभक्ति

कार्य	भक्ति
स्थिर बिंब प्रतिष्ठा	सिद्धभक्ति, शांतिभक्ति
चल बिंब प्रतिष्ठा	सिद्धभक्ति, शांतिभक्ति
चल बिंब प्रतिष्ठा के चतुर्थ अभिषेक में	सिद्धभक्ति, चैत्यभक्ति, पंचमहागुरुभक्ति शांतिभक्ति
तीर्थंकरों के गर्भ-जन्मकल्याणक में	सिद्धभक्ति, चरित्रभक्ति, शांतिभक्ति
दीक्षाकल्याणक	सिद्धभक्ति, चारित्रभक्ति, योगीभक्ति, शांतिभक्ति।
ज्ञानकल्याणक	सिद्ध, श्रुत चारित्र, योगी, निर्वाण और शांति-भक्ति।
निर्वाणकल्याणक	सिद्ध, श्रुत, चारित्र, योगी निर्वाण और शांति भक्ति।
वीरनिर्वाण-सूर्योदय के समय	सिद्धभक्ति, निर्वाणभक्ति, पंचगुरुभक्ति, शांतिभक्ति।
श्रुतपंचमी के दिन गृहस्थों को सिद्धान्त वाचना	बृहद्श्रुतभक्ति, श्रुतस्कंध की स्थापना, बृहद् वाचना, बृहद्

कार्य	भक्ति
	श्रुत भक्ति, आचार्य भक्ति पूर्वक स्वाध्याय, श्रुत भक्ति
गृहस्थों को सन्यास के प्रारंभ में	सिद्ध, श्रुत, शांतिभक्ति
गृहस्थों को सन्यास अन्त में	सिद्ध, श्रुत, शांतिभक्ति।
वर्षायोग धारण समाप्ति के समय	सिद्ध, योगि, चैत्यभक्ति।
वर्षायोग धारण की प्रदक्षिणा में	यावंति जिनचैत्यानि, स्वयंभूस्तोत्र की स्तुति, चैत्यभक्ति
वर्षायोग स्वीकार करते समय	गुरुभक्ति, शांतिभक्ति
आचार्यपद ग्रहण करते समय	सिद्ध, आचार्य, शांतिभक्ति
प्रतिमायोग धारण करने वाले मुनि की वेदना करते समय	सिद्ध, योगि, शांतिभक्ति
दीक्षा ग्रहण करते समय	बृहद्सिद्धभक्ति, योगिभक्ति
दीक्षा के अन्त में	सिद्धभक्ति
केशलोंच करते समय	लघुसिद्धभक्ति, लघुयोगिभक्ति
केशलोंच के अन्त में	सिद्धभक्ति

कार्य	भक्ति
प्रतिक्रमण में	सिद्ध, प्रतिक्रमण, वीरभक्ति, चतुर्विंशति तीर्थंकर भक्ति
रात्रियोग धारणत्याग	योगिभक्ति
देववंदना में दोष लगने पर	समाधिभक्ति
सामान्य ऋषि के स्वर्गवास होने पर निषद्या की क्रिया में	सिद्ध, योगि, शांतिभक्ति
सिद्धान्तवेत्ता साधु के स्वर्गवास में	सिद्ध, श्रुत, योगि, शांतिभक्ति
उत्तरगुणधारी सिद्धांतवेत्ता साधु के स्वर्गवास पर	सिद्ध, चारित्र, योगि, शांतिभक्ति
आचार्य के स्वर्गवास होने पर	सिद्ध, श्रुत, आचार्य, योगि, शांति भक्ति
पाक्षिक प्रतिक्रमण में चातुर्मासिक प्रतिक्रमण में वार्षिक प्रतिक्रमण में	सिद्ध, चारित्र, प्रतिक्रमण, वीर भक्ति, चतुर्विंशति भक्ति, चारित्रालोचना, गुरुभक्ति, बृहदालोचना, गुरुभक्ति, लघु आचार्य भक्ति

किस गाँव को एवं किस व्यक्ति को कौन से तीर्थंकर मूलनायक मन्दिर में या घर में रखना चाहिए?

ये राशि वाले (गाँव या व्यक्ति)	ये तीर्थंकर रखें
तुला, मकर, मीन	भगवान आदिनाथ
वृषभ, वृश्चिक, कुंभ, मीन	भगवान अजितनाथ
वृषभ, वृश्चिक, सिंह, मकर, कुंभ	भगवान संभवनाथ
मेष, मिथुन, सिंह, कन्या, धनु, मीन	भगवान अभिनंदननाथ
मिथुन, सिंह, वृश्चिक	भगवान सुमतिनाथ
मिथुन, कन्या, वृश्चिक, धनु, मीन	भगवान पद्मप्रभु
मेष, तुला, धनु, मकर	भगवान सुपार्श्वनाथ
वृषभ, सिंह, वृश्चिक, मकर, कुंभ	भगवान पुष्पदन्त
तुला, मकर, मीन	भगवान शीतलनाथ
तुला, मकर, मीन	भगवान श्रेयांसनाथ
वृषभ, धनु, कुंभ	भगवान वासुपूज्य
धनु, मकर, मीन	भगवान विमलनाथ
धनु, मकर, मीन	भगवान अनन्तनाथ
मेष, वृषभ, कर्क, कन्या, तुला, मकर	भगवान धर्मनाथ

ये राशि वाले (गाँव या व्यक्ति)	ये तीर्थंकर रखें
मेष, कर्क, तुला, मकर, कुंभ	भगवान शांतिनाथ
वृष, वृश्चिक, कुंभ, मीन	भगवान कुंथुनाथ
वृषभ, वृश्चिक, कुंभ, मीन	भगवान अरहनाथ
मेष, कर्क, तुला, मकर, कुंभ	भगवान मल्लिनाथ
तुला, मकर, मीन	भगवान मुनिसुव्रतनाथ
मेष, तुला, धनु, मकर	भगवान नमिनाथ
मिथुन, कन्या, वृश्चिक, धनु, मीन	भगवान नेमिनाथ
मेष, तुला, धनु, मकर	भगवान पार्श्वनाथ
मिथुन, कन्या, वृश्चिक, धनु, मीन	भगवान महावीर

तिथि विचार

नाम	तिथि	तिथि फल	सिद्धि योग	मृत्यु योग
नंदा	1,6,11	आनंद व लाभ	शुक्रवार	रवि, मंगल
भद्रा	2,7,12	कल्याण व शुभ	बुध	सोम, शुक्र
जया	3,8,13	विजय व यश	मंगल	बुध
रिक्ता	4,9,14	क्लेश व संताप	शनिवार	गुरु
पूर्णा	5,10,15	इच्छित सिद्धि	बृहस्पति	शनिवार

दिशा शूल विचार

दिशा शूल को बायें एवं पीछे की ओर एवं चन्द्रमा के सम्मुख होने से यात्रा में सफलता मिलती है।

दिशाएँ	बार शूल	शुभ तिथि योगिनी	सम्मुख शुभ चन्द्रमा
पूरब	शनि-सोम	1-9	मेष, सिंह
आग्नेय	सोम-गुरु	3-11	धनु
दक्षिण	गुरु	5-13	वृषभ, कन्या
नैऋत्य	सूर्य	4-12	मकर
पश्चिम	शुक्र-सूर्य	6-14	मिथुन-तुला
वायव्य	मंगल	7-15	कुंभ
उत्तर	मंगल-बुध	2-10	कर्क-वृश्चिक

चौघड़िया

चौघड़िये दिन के आठ और रात्रि के आठ होते है। हर चौघड़िया डेढ़ घण्टे का होता है उसमें से बल अमृत लाभ और शुभ चौघड़िया उपयोगी माना जाता है। ऐसी मान्यता है कि हर अच्छे कार्य के बारे में चौघड़िये का उपयोग होता है। चौघड़िये की गिनती सूर्योदय से सूर्यास्त, सूर्यास्त से सूर्योदय तक के आठवें भाग से करनी चाहिए। चौघड़िये का प्रमाण दिवस के प्रमाण अनुसार ज्यादा कम होता है। सामान्यतः 1½ घण्टे का एक होता है।

दिन का चौघड़िया

समय	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
प्रातः 6.00 से 7.30	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल	काल
प्रातः 7.30 से 9.00	चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ
प्रातः 9.00 से 10.30	लाभ	शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग
प्रातः 10.30 से 12.00	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल	काल	उद्वेग
दोपहर 12.00 से 1.30	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल
दोपहर 1.30 से 3.00	शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ
दोपहर 3.00 से 4.30	रोग	लाभ	शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत
सायं 4.30 से 6.00	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल	काल

रात्रि का चौघड़िया

समय	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
सायं 6.00 से 7.30	शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ
रात्रि 7.30 से 9.00	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल	काल	उद्वेग
रात्रि 9.00 से 10.30	चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ
रात्रि 10.30 से 12.00	रोग	लाभ	शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत
रात्रि 12.00 से 1.30	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल
रात्रि 1.30 से 3.00	लाभ	शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग
रात्रि 3.00 से 4.30	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल	काल
प्रातः 4.30 से 6.00	शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ

अनन्त वीर्य

(अनुष्टुप छन्दः)

विशदं वृष चक्रांकं, धर्म तीर्थ प्रभावकं।
सुताय वृषभं वन्दे, प्रथमं मोक्ष गामिनम् ॥१ ॥

(दुतविलिम्बित छन्द)

मुनि वन्दित पाद पयोज युगं, जनता हृदयाम्बुज भानुसमं।
जितमोहमहारि अनन्तजिनं, प्रणमामि अनन्त सुवीर्य पदं ॥२ ॥

जय अनन्त वीर्य सदा जय भो, जिन शासन सूर्य मुदंकुरुकौ।
कुमतिहर भव्य जनस्य विभो! जिन वीर्य सदा जय वीर विभोः ॥३ ॥

जयतात् जिन शासन वृद्धि करः, तनुतात् त्वरितं शिव सौख्यसुधा।
कुरु तात् करुणामयि दुःखगते, धिनुतात् ममकर्म रजः कलिलं ॥४ ॥

निज साम्य सुखामृत पान करः, विरतोऽपि विमुक्ति रमारमणः।
सदयोपिकषायरिपून् हतवान्, कनकाभ ततुश्च वपुर्विगतः ॥५ ॥

सहज शुद्ध चिदात्मनि यः स्थितः, सकल बोध कला रमणः सदा।
सहज सौख्य सुधारसतृप्तिकः, जयतु जिनवर हि जगत्त्रये ॥६ ॥

(मालिनी छन्द)

अतुल सुख यतो योऽनन्त वीर्यस् त्रिलोक्यां,
प्रथित सुख करीयं अयोध्या पूः पृथिव्यां।
जिनवर जनकोऽयं आदिनाथः प्रसिद्धः,
मम भवतु सदायं मुक्ति लक्ष्म्यै जिनेशः ॥७ ॥

॥ श्री सिद्ध भक्ति॥

असरीरा जीव घणा उवजुत्ता दंसणेय णाये य।
सायार मणायारा-लक्खण मेयं तु-सिद्धाणं॥१॥
मूलोत्तरपयडीणं बंधोदय सत्तकम्म उम्मुक्का।
मंगल भूदा सिद्धा-अट्ठ गुणा-तीद संसारा॥२॥
अट्ठ विह कम्म वियला सीदीभूदा णिरंजणा णिच्चा।
अट्ठ गुणा किदकिच्चा लोयग्ग णिवासिणो सिद्धा॥३॥
सिद्धा णट्ठट्ठमला विसुद्धबुद्धी य लद्धि सब्भावा।
तिहुअण सिरि सेहरया पसियंतु भंडारया सव्वे॥४॥
गमणा-गमण विमुक्के विहडिय कम्मपयडिसंघारा।
सासय सुह संपत्ते-ते-सिद्धा-वंदिमो णिच्चं॥५॥
जय मंगल भूदाणं विमलाणं णाण-दंसणमयाणं।
तइलोइ सेहराणं णमो-सया-सव्व-सिद्धाणं॥६॥
सम्मत्त णाणदंसण वीरिय सुहुमं तहेव अवगहणं।
अगुरु-लघु मव्वावाहं-अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं॥७॥
तव सिद्धे णय सिद्धे संजम सिद्धे चरित्त सिद्धे य।
णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमस्सामि॥८॥

इच्छामि भंते! सिद्धभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण सम्मदंसण सम्मचरित जुत्ताणं अट्ठविहकम्म विप्पमुक्काणं, अट्ठगुणसंपण्णाणं, उड्ढलोय मत्थयम्मि पयट्ठियाणं तव सिद्धाणं, णय सिद्धाणं, संजम सिद्धाणं, चरित्त सिद्धाणं, अतीताणागद वट्टमाण कालत्तय सिद्धाणं सव्व सिद्धाणं, सया णिच्चकालं अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगईगमणं, समाहि मरणं, जिण गुण सम्पति होऊ मज्झं।

मंगलाष्टकम्

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्र-महिताः, सिद्धाश्च सिद्धीश्वराः,
आचार्या जिन शासनोन्नतिकराः, पूज्या उपाध्यायकाः।
श्री सिद्धान्त-सुपाठका मुनिवरा रत्नत्रयाराधकाः,
पञ्चैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं, कुर्वन्तु ते (मे) मंगलम्॥१॥

श्री मन्नम्र-सुरासुरेन्द्र-मुकुट-प्रद्योत-रत्नप्रभा-,
भास्वत्पाद-नखेन्दवः प्रवचनाऽम्भोधीन्दवः स्थायिनः।
ये सर्वे जिन सिद्ध-सूर्यनुगतास्-ते पाठकाः साधवः,
स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्चगुरवः, कुर्वन्तु ते (मे) मंगलम्॥२॥

सम्यग्दर्शन-बोध-वृत्त ममलं रत्नत्रयं पावनम्,
मुक्ति-श्री-नगराऽधिनाथ-जिनपत्युक्तोऽपवर्गप्रदः।
धर्मः सूक्तिसुधा च चैत्य मखिलं चैत्यालयं श्र्यालयम्,
प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विंशतिः, कुर्वन्तु ते (मे) मंगलम्॥३॥

नाभेयादि-जिनाधि-पास्त्रिभुवन-ख्याताश्-चतुर्विंशतिः,
श्रीमन्तो भरतेश्वरप्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश।
ये विष्णु प्रतिविष्णु-लांगलधराः सप्तोत्तरा विंशतिस्,
त्रैकाल्ये प्रथितास्त्रि षष्टिपुरुषा कुर्वन्तु ते(मे) मंगलम्॥४॥

सर्पो हारलता भवत्यसिलता, सत्पुष्पदामायते,
सम्पद्येत रसायनं विषमपि, प्रीतिं विधत्ते रिपुः।
देवा यान्ति वशं प्रसन्नमनसः, किं वा बहु ब्रूमहे,
धर्मादेव नभोऽपि वर्षति नगैः, कुर्वन्तु ते (मे) मंगलम्॥५॥

ये सर्वौषधऋद्धयः सुतपसो वृद्धिंगताः पञ्च ये,
ये चाष्टांग-महानिमित्त-कुशला येऽष्टौ वियच्चारिणः।
पञ्चज्ञान-धरास्त्रयोऽपि बलिनो ये बुद्धिऋद्धीश्वराः,
सप्तैते सकलार्चिता गणभृता, कुर्वन्तु ते (मे) मंगलम्॥६॥

कैलासे वृषभस्य निर्वृत्तिमही, वीरस्य पावापुरे,
चंपायां वसुपूज्य-सज्जिनपतेः, सम्मेदशैलेऽर्हताम्।
शेषाणामपि चोर्जयन्त शिखरे, नेमीश्वरस्यार्हतो,
निर्वाणाऽवनयः प्रसिद्ध विभवाः कुर्वन्तु ते(मे) मंगलम्॥७॥

ज्योतिर्व्यन्तर-भावनाऽमरगृहे, मेरौ कुलाद्रौ तथा,
जम्बू-शाल्मलि-चैत्यशाखिषु तथा, वक्षार-रूप्याद्रिषु।
इष्वाकार-गिरौ च कुण्डलनगे, द्वीपे च नन्दीश्वरे,
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः, कुर्वन्तु ते (मे) मंगलम्॥८॥

यो गर्भाऽवतरोत्सवो भगवतां, जन्माऽभिषेकोत्सवो,
यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो, यः केवलज्ञानभाक्।
यः कैवल्य पुरप्रवेश महिमा, संभावितः स्वर्गिभिः,
कल्याणानि च तानि पञ्च सततं कुर्वन्तु ते (मे) मंगलम्॥९॥

इत्थं श्री जिन मंगलाष्टकमिदं, सौभाग्य-संपत्प्रदम्,
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थंकराणामुषः।
ये श्रण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनै-, धर्मार्थ-कामान्विता,
लक्ष्मीराश्रयते व्यपाय रहिता, निर्वाण लक्ष्मीरपि॥१०॥

॥ इति मंगलाष्टकम्॥

* * *

श्री नवदेवता स्तोत्रम् (मंगलाष्टकम्)

(शार्दूल विक्रीडित छन्दः)

अर्हन्तः

श्रीमन्तो जिनपाजगत् त्रयनुता, दोषैर्-विमुक्तऽत्मकाः,
लोकाऽलोक विलोकनैक चतुराश्-शुद्धाः परं निर्मलाः।
दिव्याऽनन्त चतुष्टयाऽदिकयुताः-सत्यस्वरूपात्मकाः,
प्राप्तायैर्-भुवि प्रातिहार्यविभवाः-कुर्वन्तु ते मंगलम्॥१॥

सिद्धाः

श्रीमन्तो नृ सुरा-सुरेन्द्र महिता, लोकाग्र संवासिनः,
नित्याः सर्व सुखाकराः भय हरा, विश्वेषु कामप्रदाः।
कर्माऽतीत विशुद्ध भाव सहिताः, ज्योतिः स्वरूपात्मकाः,
श्री सिद्धा जननार्ति मृत्युरहिताः, कुर्वन्तु ते मंगलम्॥२॥

आचार्याः

पञ्चाऽचार परायणाः सुविमलाश्- चारित्र संद्योतकाः,
अर्हद्-रूपधराश्च निस्पृहपराः, कामादि दोषोज्झिताः।
बाह्याऽभ्यंतर संग-मोहरहिताः, शुद्धाऽत्म संराधकाः,
आचार्या नर देव पूजित पदाः, कुर्वन्तु ते मंगलम्॥३॥

उपाध्यायाः

वेदांगं निखलाऽगमं शुभतरं, पूर्णं पुराणं सदा,
सूक्ष्मासूक्ष्म समस्त तत्त्वकथकं, श्री द्वादशांगं शुभम्।
स्वात्मज्ञान विवृद्धये गतमलाः, येऽध्यायपन्तीश्वराः,
निर्द्वन्द्वावर पाठकाः सुविमलाः, कुर्वन्तु ते मंगलम्॥४॥

साधवः

त्यक्त्वाऽशां भव भोग पुत्रतनुजां मोहं परं दुस्त्यजं,
निःसंगा करुणालयाश्च विरता, दैगम्बरा धीधनाः।
शुद्धाऽचार रता निजाऽत्मरसिका, ब्रह्म-स्वरूपाऽत्मका,
देवेन्द्रै-रपि पूजिताः सुमुनयः, कुर्वन्तु ते मंगलं॥५॥

जिनधर्मः

जीवाना-मभयप्रदः सुसदयः, संसार दुःखापहः,
सौख्यं योनित्तरां ददाति सकलं, दिव्यं मनोवाञ्छितं।
तीर्थेशै-रपि धारितोह्यनुपमः, स्वर्मोक्ष संसाधकः,
धर्मः सोऽत्र जिनोदितो हितकरः, कुर्यात्सदा मंगलम्॥६॥

जिनागमः

स्याद्वादांक धरं त्रिलोकमहितं, देवैः सदा संस्तुतम्,
सन्देहाऽदिविरोध भाव रहितं, सर्वार्थ सन्देशकम्।

याथातथ्य-मजेय-माप्तकथितं, कोटिप्रभा-भासितम्,
श्री मज्जैन सुशासनं हितकरं, कुर्यात्सदा मंगलम्॥७॥

जिनप्रतिमाः

सौम्याः सर्वविकार भावरहिताः, शान्ति स्वरूपात्मकाः,
शुद्धध्यानमयाः प्रशान्तवदनाः, श्री प्रातिहार्याऽन्विताः।
स्वात्माऽनन्द विकाशकाश्च सुभगाश्-चैतन्य भावावहाः,
पञ्चानां परमेष्ठिनां हि कृतयः, कुर्वन्तु ते मंगलम्॥८॥

जिनालयाः

घण्टा तोरणदाम धूपघटकै, राजन्ति सन्मंगलैः,
स्तोत्रैश्चित्त हरैर्-महोत्सवशतैश्-वादित्र संगीत कैः।
पूजाऽरंभ महाऽभिषेक यजनैः, पुण्योत्करैः सत्क्रियैः,
श्री चैत्याऽयतनानि तानि कृतिनां, कुर्वन्तु सन्मंगलम्॥९॥

निखिल नवदेवता

इत्थं मंगलदायका जिनवराः, सिद्धाश्च सूर्यादयाः,
पूज्यास्ता नवदेवता अघहरास्-तीर्थोत्तमास्-तारकाः।
चारित्रोज्ज्वलतां विशुद्ध शमतां, बोधि समाधिं तथा,
श्री जैनेन्द्र 'सुधर्म'- मात्मसुखदं, कुर्वन्तु सन्मंगलम्॥१०॥

॥ इति वीतराग-तपोनिधि स्व. आचार्य श्री सुधर्मसागरजी महाराज
विरचितं नवदेवता स्तोत्रम्॥

अथ सुप्रभात स्तोत्रम्

(शार्दूल विक्रीडित छन्दः)

यत्-स्वर्गाऽवतरोत्सवे-यदभवज्-जन्माऽभिषेकोत्सवे,
यद्दीक्षा ग्रहणोत्सवे- य-दखिल ज्ञान प्रकाशोत्सवे।
यन्-निर्वाणऽगमोत्सवे जिनपतेः, पूजाऽद्भुतं तद्भवैः,
संगीत-स्तुति मंगलैः प्रसरतां- मे सुप्रभातोत्सवः ॥१॥

(बसन्त तिलका छन्दः)

श्री मन् नतामर किरीट मणिप्रभाभि-,
रालीढ पाद युग दुर्द्धर कर्मदूर।
श्री नाभिनन्दन ! जिनाऽजित ! शम्भवाख्य!,
त्वद्-ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम्॥२॥

छत्रत्रय प्रचल चामर वीज्यमान,
देवाभिनन्दन मुने! सुमते जिनेन्द्र!
पद्मप्रभा-ऽरुणमणि द्युति-भासुरांग,
त्वद्-ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम्॥३॥

अर्हन् सुपार्श्व कदलीदलवर्ण गात्र,
प्रालेयतार गिरि मौक्तिक वर्ण गौर।
चन्द्रप्रभ स्फटिक पाण्डुर पुष्पदन्त,
त्वद्-ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम्॥४॥

संतप्त कांचनरुचे जिन! शीतलाख्य,
श्रेयान्-विनष्ट दु-रिताऽष्ट कलंक पंक।
बंधूक बंधुर-रुचे जिन! वासुपूज्य,
त्वद्-ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम्॥५॥

उद्दण्डदर्प करिपो विमलाऽमलांग,
स्थेमन्-ननन्त जिदनन्त सुखाऽम्बुराशे।
दुष्कर्म-कल्मष विवर्जित धर्मनाथ!,
त्वद्-ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम्॥६॥

देवाऽमरी - कुसुम - सन्निभ - शान्तिनाथ!,
कुन्थो ! दयागुण विभूषण भूषितांग।
देवाधिदेव भगवन्-नर! तीर्थनाथ!,
त्वद्-ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम्॥७॥

यन्मोह मल्लमद भञ्जन मल्लिनाथ!,
क्षेमंकरा वितथ-शासन सुव्रताख्य।

सत्संपदा प्रशमितो नमि नामधेय,
त्वद्-ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम्॥८॥

तापिच्छ गुच्छ-रुचिरोज्ज्वल नेमिनाथ!,
घोरोपसर्ग - विजयन् जिन-पार्श्वनाथ!।
स्याद्वाद सूक्ति मणिदर्पण वर्द्धमान,
त्वद्-ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम्॥९॥

प्रालेय-नील- हरिताऽरुण- पीतभासं,
यन्मूर्ति-मव्यय सुखाऽवसथं मुनीन्द्राः!।
ध्यायन्ति सप्ततिशतं जिनवल्लभानाम्,
त्वद्-ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम्॥१०॥

(अनुष्टुप छन्द)

सुप्रभातं सुनक्षत्रं, मांगल्यं परिकीर्तितम्।
चतुर्विंशति तीर्थाणां, सुप्रभातं दिने दिने॥११॥

सुप्रभातं सुनक्षत्रं, श्रेयः प्रत्यभिनन्दितम्।
देवता ऋषयः सिद्धाः, सुप्रभातं दिने दिने॥१२॥

सुप्रभातं तवैकस्य, वृषभस्य महात्मनः।
येन प्रवर्तितं तीर्थं, भव्यसत्व सुखावहम्॥१३॥

सुप्रभातं जिनेन्द्राणां, ज्ञानोन्मीलित चक्षुषाम्।
अज्ञान तिमिरांधानां, नित्यमस्तमितो रविः॥१४॥

सुप्रभातम् जिनेन्द्रस्य, वीरः कमललोचनः।
येन कर्माटवी दग्धा, शुक्लध्यानोग्र वह्निना॥१५॥

सुप्रभातं सुनक्षत्रं, सुकल्याणं सुमंगलम्।
त्रैलोक्यहित कर्त्तृणां, जिनानामेव शासनम्॥१६॥

॥ इति सुप्रभातं स्तोत्रम्॥

अथ घण्टाकरण मंत्र

ॐ घण्टाकर्णो महावीरः, सर्वव्याधि विनाशकः।
विस्फोटकभयं प्राप्ते, रक्ष रक्ष महाबलः ॥1॥

यत्र त्वं तिष्ठसे देव, लिखितोक्षर पंक्तिभिः।
रोगास्-तत्र प्रणश्यन्ति, वात पित्त कफोद्भवाः॥2॥

तत्र राज्यभयं नास्ति, यान्ति कर्णे जपात्क्षयम्।
शाकिनी भूतवेताला, राक्षसाः प्रभवन्ति न ॥3॥

नाकाले मरणं तस्य, न च सर्पेण दंश्यते।
अग्नि चौरभयं नास्ति, ॐ ह्रीं क्लीं घण्टाकर्णः
नमोस्तु ते। ॐ ठः ठः ठः स्वाहा॥4॥

*****

शांति सुकांति सु सुरेन्द्र ऋद्धि, स्फूति सुकीर्ति वर वृद्धि लब्धिः।
सत्कार्य सिद्धि धृति मा दिशन्तु, यः स्तोत्र 'विशदं' सु घण्टाकर्णः।।5।।

*****

अथ महावीराष्टक स्तोत्रम्

(शिखरिणी छन्द)

यदीये चैतन्ये मुकुर इव, भावाश्चि-दचितः,
समं भांति ध्रौव्य व्यय जनिलसंतोऽन्त रहिताः।
जगत्-साक्षी मार्ग प्रकटन परो भानुरिव यो,
महावीर स्वामी नयन-पथगामी भवतु मे (नः) ॥१॥

अताम्रं यच्चक्षुः कमल-युगलं स्पन्द रहितम्,
जनान्कोपापायं प्रकटयति वाभ्यन्तरमपि।
स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वातिविमला,
महावीरस्वामी नयन-पथगामी भवतु मे (नः) ॥२॥

नमन्नाकेन्द्राली मुकुटमणि भाजाल जटिलं,
लसत्-पादाम्भोज द्वयमिह यदीयं तनुभृताम्।
भवज्वाला शान्त्यै प्रभवति जलं वा-स्मृतमपि,
महावीरस्वामी नयन-पथगामी भवतु मे (नः) ॥३॥

यदर्चाभावेन प्रमुदितमनाः दर्दुर इह,
क्षणादाऽसीत्-स्वर्गी गुणगण समृद्धः सुखनिधिः।
लभन्ते सद्भक्ताः शिवसुख समाजं किमुतदा,
महावीरस्वामी नयन-पथगामी भवतु मे (नः) ॥४॥

कनत्-स्वर्णाभासोप्-यपगत तनुर्ज्ञान निवहो,
विचित्राऽत्माप्येको नृपति वर सिद्धार्थ तनयः।
अजन्माऽपि श्रीमान् विगतभव रागोद्भुत गतिः,
महावीरस्वामी नयन-पथगामी भवतु मे (नः) ॥५॥

यदीया वाग्गंगा विविधनय कल्लोल-विमला,
बृहज्ज्ञानांऽभोभिर्-जगति जनतां या स्नपयति।
इदानी-मप्येषा बुधजन-मरालैः परिचिता,
महावीरस्वामी नयन-पथगामी भवतु मे (नः) ॥६॥

अनिर्वारोद्रेकस्-त्रिभुवनजयी कामसुभटः,
कुमाराऽवस्थाया-मपि निजबलाद्येन विजितः।
स्फुरन्-नित्याऽनन्द प्रशमपद राज्याय स जिनः,
महावीरस्वामी नयन-पथगामी भवतु मे (नः) ॥७॥

महामोहाऽतंक प्रशमन परा-कस्मिक्-भिषङ्,
निरापेक्षो बन्धुर्-विदित महिमा मंगलकरः।
शरण्यः साधूनां भवभय भृता-मुत्तम गुणो,
महावीरस्वामी नयन-पथगामी भवतु मे (नः) ॥८॥

महावीराऽष्टकं स्तोत्रं, भक्त्या भागेन्दुना कृतम्।
यः पठेच्-छ्रणुयाच्-चाऽपि, स याति परमां गतिम्॥९॥

॥ इति श्री भागचन्द भागेन्दु विरचितं महावीराष्टक स्तोत्रम् ॥

अथ वर्धमानाष्टक स्तोत्रम्

(अनुष्टुप छन्दः)

जनन-जलधि-सेतुः, दुःख-विध्वंस-हेतुः,
निहितमकर केतुर्, वारितानिष्ट-हेतुः।
कुमत- समर हेतुर्, नष्ट निःशेष धातुः,
जयति जगति चन्द्रो, वर्धमानो जिनेन्द्रः॥१॥

सम दम यम कर्ता, ऽसार संसार हर्त्ता,
सकल भुवन भर्ता, भूरि कल्याण कर्त्ता।
परम सुख समर्ता, सर्व संदेह हर्त्ता,
जयति जगति चन्द्रो, वर्धमानो जिनेन्द्रः॥२॥

कुगति पथ मनेता, मोक्ष मार्गस्य नेता,
प्रकृति गहन हंता, तत्त्व संताप शंता।
गगन गमन गंता, मुक्ति रामाभिकंता,
जयति जगति चन्द्रो, वर्धमानो जिनेन्द्रः॥३॥

सजल जलद नादो, निर्जिताऽशेष वादो,
जयति चरण पादो, वस्तु तत्त्व जगादो।

जय भुवन कृपादो, ऽनेककोपाऽग्नि-कंदो,
जयति जगति चन्द्रो, वर्धमानो जिनेन्द्रः ॥४॥

प्रबल बल विशालो, मुक्ति कांता रसालो,
विमल गुण मरालो, नित्य कल्लोल मालो।
विगति सरण लीलो, धारिता नित्य शीलो,
जयति जगति चन्द्रो, वर्धमानो जिनेन्द्रः ॥५॥

मदन मद विदारी, चारु चारित्रधारी,
नरक गति निवारी, स्वर्ग मोक्षाऽवतारी।
विदित भुवन सारी, कैवल्य ज्ञान धारी,
जयति जगति चन्द्रो, वर्धमानो जिनेन्द्रः ॥६॥

विषय विष विनासो, भूरि भाषा निवासो,
गत भव नय पासो, मुक्ति-कांता विकाशो।
करण सुख निवासो, कर्ण सम्पूर्ण तासो,
जयति जगति चन्द्रो, वर्धमानो जिनेन्द्रः ॥७॥

वचन रचन धीरः, पाप धूलि समीरः,
कनक निकन गौरः, क्रूर कर्मारि सूरः।
कलुष दहन नीरः, पातिता नंग वीरः,
जयति जगति चन्द्रो, वर्धमानो जिनेन्द्रः ॥८॥

॥ इति समाप्तम् ॥

अथ भक्तामर स्तोत्रम्

बसन्ततिलका छंद

भक्तामर-प्रणत मौलि-मणि-प्रभाणा-,
मुद्योतकं दलित पाप तमो वितानम्।
सम्यक् प्रणम्य जिन-पाद युगं युगादा,
वाऽलम्बनं भव जले पततां जनानाम्॥१॥

यः संस्तुतः सकल वाङ्मय तत्त्व-बोधा-,
दुद्भूत - बुद्धि - पटुभिः सुरलोक नाथैः।
स्तोत्रैर्-जगत्-त्रितय - चित्त - हरै - रुदारैः,
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम्॥२॥

बुद्ध्या विनापि विबुधाऽर्चित-पाद-पीठ,
स्तोतुं - समुद्यत - मतिर्विगत - त्रपोऽहम्।
बालं विहाय जल संस्थित मिन्दु-बिम्ब,
मन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम्॥३॥

वक्तुंगुणान्-गुण समुद्र शशांक-कान्तान्,
कस्तेक्षमः सुरगुरु प्रतिमोऽपि बुद्ध्या।

कल्पान्तकाल पवनोद्धत-नक्र चक्रम्,
को वा तरीतु-मलमम्बु निधिं भुजाभ्यां ॥४॥

सोऽहं तथापि तव भक्ति-वशान्मुनीश,
कर्तुंस्तवं विगत - शक्ति-रपि प्रवृत्तः।
प्रीत्यात्म-वीर्य-मविचार्य मृगी मृगेन्द्रम्,
नाभ्येति किं निजशिशोः परिपालनार्थम् ॥५॥

अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहास धाम,
त्वद्भक्ति-रेव-मुखरी कुरुते बलान्माम्।
यत्कोकिलः किलमधौ मधुरं विरौति,
तच्चाम्र चारु कलिकानिकरैक हेतु ॥६॥

त्वत् संस्तवेन भव-सन्तति सन्निबद्धम्,
पापं क्षणात्क्षय-मुपैति शरीर भाजाम्।
आक्रान्त लोकमलिनील-मशेष-माशु,
सूर्यांशुभिन्न-मिव शार्वर-मन्धकारम् ॥७॥

मत्वेति नाथ ! तव संस्तवनं मयेद-,
मारभ्यते तनुधियापि तवप्रभावात्।
चेतो हरिष्यति सतां नलिनी दलेषु,
मुक्ताफल द्युति-मुपैति ननूद-बिन्दुः ॥८॥

आस्तां तव-स्तवन-मस्त-समस्त दोषम्,
त्वत्संकथापि जगतां दुरितानि हन्ति।
दूरे सहस्र - किरणः कुरुते प्रभैव,
पद्माकरेषु जलजानि विकास-भाञ्जि॥९॥

नात्यद्भुतं भुवन-भूषण ! भूतनाथ!,
भूतैर्-गुणै-र्-भुवि भवन्त-मभिष्टुवन्तः।
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा,
भूत्याश्रितं य इह नात्म समं करोति॥१०॥

दृष्ट्वा भवन्त मनिमेष विलोकनीयम्,
नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षुः।
पीत्त्वा पयः शशिकर द्युति-दुग्धसिन्धोः,
क्षारं जलं जलनिधे-रसितुं क-इच्छेत्॥११॥

यैः शान्तराग रुचिभिः परमाणुभिस्-त्वम्,
निर्मापितस्-त्रिभुवनैक-ललामभूत।
तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्याम्,
यत्ते समानम-परं नहि रूप-मस्ति॥१२॥

वक्त्रं क्व ते सुर-नरोरग नेत्र-हारि,
निःशेष-निर्जित जगत्-त्रितयोपमानम्।
बिम्बं कलंक-मलिनं क्व निशाकरस्य,
यद्वासरे भवति पाण्डु-पलाश-कल्पम्॥१३॥

संपूर्ण - मण्डल - शशांक कला-कलाप,
शुभ्रा गुणास्-त्रिभुवनं तव लंघयन्ति।
ये संश्रितास्-त्रिजगदीश्वर ! नाथ-मेकम्,
कस्तान्-निवारयति संचरतो यथेष्टम्॥१४॥

चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशांग-नाभिर्-,
नीतं मनागपि मनो न विकार-मार्गम्।
कल्पान्त-काल-मरुता चलिताऽचलेन,
किं मन्दराद्रि-शिखरं चलितं कदाचित्॥१५॥

निर्धूम - वर्ति - रपवर्जित - तैल - पूरः,
कृत्स्नं जगत् त्रयमिदं प्रकटी करोषि।
गम्यो न जातु मरुतां चलिता चलानाम्,
दीपोऽपरस्त्व- मसिनाथ! जगत् प्रकाशः॥१६॥

नास्तं कदाचि-दुपयासि न राहु गम्यः,
स्पष्टी करोषि सहसा युगपज्जगन्ति।
नाम्भो - धरोदर - निरुद्ध - महा - प्रभावः,
सूर्याऽतिशायि-महिमाऽसि मुनीन्द्र! लोके॥१७॥

नित्योदयं दलित-मोह-महान्धकारम्,
गम्यं न राहु-वदनस्य न वारिदानाम्।
विभ्राजते तव मुखाऽब्ज-मनल्प-कान्ति,
विद्योत यज्जग-दपूर्व-शशांक बिम्बम्॥१८॥

किं शर्वरीषु शशिनाह्नि विवस्वता वा?,
युष्मन् मुखेन्दु-दलितेषु तमः सु नाथ!।
निष्पन्न शालि-वन-शालिनि जीव लोके,
कार्यं कियज्जल धरैर्-जल भार नम्रैः॥१९॥

ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृताऽवकाशम्,
नैवं तथा हरि हरादिषु नायकेषु।
तेजो महामणिषु याति यथा महत्त्वम्,
नैवं तु काच-शकले किरणाकुलेऽपि॥२०॥

मन्ये वरं हरि - हरादय एव दृष्टा,
दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति।
किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः,
कश्चिन् मनो हरति नाथ ! भवान्तरेऽपि ॥२१॥

स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्,
नाऽन्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता।
सर्वा दिशो दधति भानि सहस्र रश्मिम्,
प्राच्येव दिग्-जनयति स्फुर-दंशु-जालम् ॥२२॥

त्वामा-मनन्ति मुनयः परमं पुमांस-,
मादित्य - वर्ण - ममलं तमसः पुरस्तात्।
त्वामेव सम्य-गुपलभ्य जयन्ति मृत्युं,
नाऽन्यः शिवः शिवपदस्य मुनीन्द्र ! पन्थाः ॥२३॥

त्वाऽमव्ययं विभु-मचिन्त्य-मसंख्य-माद्यम्,
ब्रह्माण-मीश्वर - मनन्त - मनंग - केतुम्।
योगीश्वरं विदित योग - मनेक - मेकम्,
ज्ञान-स्वरूप-ममलं प्रवदन्ति सन्तः ॥२४॥

बुद्धस्-त्वमेव विबुधार्चित-बुद्धि-बोधात्,
त्वं शंकरोऽसि भुवन-त्रय - शंकरत्वात्।
धातासि धीर ! शिवमार्ग-विधेर्-विधानात्,
व्यक्तं त्वमेव भगवन्! पुरुषोत्तमोऽसि॥२५॥

तुभ्यं नमस्-त्रिभुवनार्ति - हराय नाथ!
तुभ्यं नमः क्षिति - तलामल भूषणाय।
तुभ्यं नमस्-त्रिजगतः परमेश्वराय,
तुभ्यं नमो जिन भवोदधि-शोषणाय॥२६॥

को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणै-रशेषैस्-,
त्वं संश्रितो निरवकाश-तया मुनीश!।
दोषै-रुपात्त-विविधाऽश्रय-जात गर्वैः,
स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचि-दपीक्षितोऽसि॥२७॥

उच्चै-रशोक - तरु - संश्रित - मुन्मयूख-,
माभाति रूप-ममलं भवतो नितान्तम्।
स्पष्टोल्लसत् किरण- मस्त-तमो-वितानम्,
बिम्बं रवे-रिव पयोधर-पार्श्ववर्ति॥२८॥

सिंहासने मणि-मयूख-शिखा-विचित्रे,
विभ्राजते तव वपुः कनकाऽवदातम्।
बिम्बं वियद्-विलस-दंशु-लता-वितानम्,
तुंगोदयाऽद्रि-शिरसीव सहस्ररश्मेः॥२९॥

कुन्दाऽवदात-चलचामर चारु शोभम्,
विभ्राजते तव वपुः कल धौत-कान्तम्।
उद्यच्छशांक-शुचि-निर्झर-वारिधार-,
मुच्चै-स्तटं-सुरगिरे-रिव शातकौम्भम्॥३०॥

छत्र-त्रयं तव विभाति शशांक कान्त-,
मुच्चै-स्थितं स्थगित भानुकर - प्रतापम्।
मुक्ताफल - प्रकर - जाल -विवृद्ध-शोभम्,
प्रख्यापयत् त्रिजगतः परमेश्वरत्वम्॥३१॥

गम्भीर-तार-रव-पूरित-दिग्विभागस्-,
त्रैलोक्य-लोक-शुभ-संगम-भूति-दक्षः।
सद्-धर्मराज-जय-घोषण-घोषकः-सन्,
खे दुन्दुभिर्-ध्वनति ते यशसः प्रवादी॥३२॥

मन्दार - सुन्दर - नमेरु - सुपारिजात-,
सन्तानकाऽदि-कुसुमोत्कर-वृष्टि रुद्धा।
गन्धोद-बिन्दु-शुभ-मन्द-मरुत्-प्रपाता,
दिव्यादिवः पतति ते वचसां ततिर्-वा॥३३॥

शुम्भत्-प्रभा-वलय-भूरि विभा विभोस्ते,
लोकत्रये द्युतिमतां द्युति-माक्षिपंती।
प्रोद्यद्-दिवाकर-निरन्तर-भूरि-संख्या,
दीप्त्या जयत्यपि निशा-मपि सोम-सौम्याम्॥३४॥

स्वर्गापवर्ग - गम - मार्ग - विमार्गणेष्टः,
सद्धर्म तत्त्व-कथनैक-पटुस्-त्रिलोक्याः।
दिव्यध्वनिर्-भवति ते विशदार्थ-सर्व-,
भाषा-स्वभाव-परिणाम-गुणैः प्रयोज्यः॥३५॥

उन्निद्र - हेम - नव - पंकज-पुञ्जकान्ति-,
पर्युल्लसन् नख-मयूख सिखाऽभिरामौ।
पादौपदानि तव यत्र जिनेन्द्र! धत्तः,
पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति॥३६॥

इत्थं यथा तव-विभूति-रभूज्जिनेन्द्र,
धर्मोपदेशन-विधौ न तथा परस्य।
यादृक्प्रभा दिनकृतः प्रहताऽन्धकारा,
तादृक्कुतो-गृह-गणस्यविकासिनोऽपि ॥३७॥

श्च्योतन् मदा-विल-विलोल-कपोल मूल-,
मत्त - भ्रमद् - भ्रमर - नाद-विवृद्ध-कोपम्।
ऐरावताभ-मिभ-मुद्धत- मापतन्तम्,
दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाऽश्रितानाम् ॥३८॥

भिन्नेभ-कुम्भ-गल-दुज्ज्वल शोणिताक्त,
मुक्ताफल - प्रकर - भूषित - भूमिभागः।
बद्धक्रमः क्रमगतं हरिणाऽधिपोऽपि,
नाऽक्रामति क्रमयुगाचल-संश्रितं ते ॥३९॥

कल्पान्त-काल-पवनोद्धत-वह्नि-कल्पम्।
दावानलं-ज्वलित-मुज्ज्वल-मुत्स्फुलिंगम्।
विश्वं जिघत्सुमिव सम्मुख मापतन्तम्,
त्वन्नाम्-कीर्तन जलं शमयत्-यशेषम् ॥४०॥

रक्तेक्षणं समद-कोकिल-कंठ-नीलम्,
क्रोधोद्धतं फणिन-मुत्फण-मापतन्तम्।
आक्रामति क्रमयुगेण निरस्त-शंकस्-,
त्वन्नाम-नागदमनी-हृदि यस्य पुंसः॥४१॥

वल्गत्तुरंग - गज - गर्जित - भीमनाद-,
माजौबलं बलवतामपि - भूपतीनाम्।
उद्यद्दिवाकर - मयूख - शिखापविद्धम्,
त्वत् कीर्त्तनात्तम इवाशु भिदा-मुपैति॥४२॥

कुन्ताग्र भिन्न - गज शोणित वारिवाह-,
वेगावतार - तरणातुर - योध - भीमे।
युद्धे जयं विजित-दुर्जय-जेय-पक्षास्-,
त्वद्पाद-पंकज-वनाऽश्रयिणो लभन्ते॥४३॥

अम्भोनिधौ क्षुभित-भीषण-नक्र-चक्र-,
पाठीन - पीठ - भय-दोल्वण-वाडवाग्नौ।
रंगत्तरंग - शिखर - स्थित- यान-पात्रास्-,
त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद् व्रजन्ति॥४४॥

उद्भूत-भीषण - जलोधर-भार-भुग्नाः,
शोच्यां दशामुपगताश्-च्युत-जीविताशाः।
त्वत्-पाद-पंकज-रजोऽमृत-दिग्ध-देहा,
मर्त्या भवन्ति मकरध्वज-तुल्य-रूपाः॥४५॥

आपाद कण्ठ-मुरु-श्रृंखल-वेष्टिताङ्गा,
गाढं बृहन्-निगड-कोटि-निघृष्ट-जङ्घा।
त्वन्-नाम-मंत्र-मनिशं मनुजाः स्मरन्तः,
सद्यः स्वयं विगत-बन्ध-भया भवन्ति॥४६॥

मत्त - द्विपेन्द्र - मृगराज - दवान-लाहि-,
संग्राम - वारिधि - महोदर - बन्धनोत्थम्।
तस्याशु नाश - मुपयाति भयं भियेव,
यस्तावकं स्तव-मिमं मतिमा-नधीते॥४७॥

स्तोत्रस्रजं तव जिनेन्द्र! गुणैर्-निबद्धाम्,
भक्त्या मया विविध-वर्ण-विचित्र-पुष्पाम्।
धत्ते जनो य इह कण्ठगता-मजस्रम्,
तं मानतुंग-मवशा-समुपैति लक्ष्मीः॥४८॥

॥ इति श्री मानतुङ्गाचार्य विरचितं भक्तामर (आदिनाथ) स्तोत्रम्॥

अथ वीतराग स्तोत्रम्

शिवं शुद्ध बुद्धं परं विश्वनाथम्,
न देवो न बन्धुर् न कर्मा न कर्त्ता।
न अंगं न संगं न स्वेच्छा न कायम्,
चिदाऽनन्द रूपं नमो वीतरागम्॥१॥

न बंधो न मोक्षो न रागादिदोषः,
न योगं न भोगं न व्याधिर् न शोकम्।
न कोपं न मानं, न माया न लोभम्,
चिदाऽनन्द रूपं नमो वीतरागम्॥२॥

न हस्तौ न पादौ न घ्राणं न जिह्वा,
न चक्षुर् न कर्णं न वक्त्रं न निद्रा।
न स्वामी न भृत्यः न देवो न मर्त्यः,
चिदाऽनन्द रूपं नमो वीतरागम्॥३॥

न जन्मं न मृत्युं न मोहं न चिंता,
न क्षुद्रो न भीतो न कार्श्यं न स्थूलं।
न स्वेदं न खेदं न वर्णं न मुद्रा,
चिदाऽनन्द रूपं नमो वीतरागम्॥४॥

त्रिदण्डे त्रिखण्डे हरे विश्वनाथम्,
हृषीकेश विध्वस्त कर्माऽदिजालम्।
न पुण्यं न पापं न चाऽक्षादि गात्रम्,
चिदाऽनन्द रूपं नमो वीतरागम्॥५॥

न बालो न वृद्धो न तुच्छो न मूढो,
न स्वेदं न भेदं न मूर्तिर् न स्नेहः।
न कृष्णं न शुक्लं न मोहं न तन्द्रा,
चिदाऽनन्द रूपं नमो वीतरागम्॥६॥

न आद्यं न मध्यं न अंतं न मन्या,
न द्रव्यं न क्षेत्रं न कालो न भावः।
न शिष्यो गुरुर्नाऽपि हीनं न दीनम्,
चिदाऽनन्द रूपं नमो वीतरागम्॥७॥

इदं ज्ञान रूपं स्वयं तत्त्व वेदी,
न पूर्णं न शून्यं न चैत्यं स्वरूपी।
न चाऽन्यो न भिन्नं न परमार्थ-मेकम्,
चिदाऽनन्द रूपं नमो वीतरागम्॥८॥

आत्माराम गुणाकरं गुणनिधिं चैतन्य रत्नाऽकरं।
सर्वे भूतगताऽगते सुख दुखे ज्ञाते त्वया सर्वगे॥
त्रैलोक्याऽधिपते स्वयं स्वमनसा ध्यायंति योगीश्वराः।
वंदे तं हरिवंश हर्ष हृदयं श्रीमान् हृदाऽभ्युद्यताम्॥९॥

****

अथ लघु स्वयंभू स्तोत्रम्

(उपजाति छन्दः)

येन स्वयंबोध-मयेन लोका, आश्वासिताः केचन वित्तकार्ये।
प्रबोधिताः केचन मोक्ष-मार्गे, तमाऽदिनाथं प्रणमामि नित्यम्॥१॥

इन्द्रादिभिः क्षीरसमुद्र-तोयैः, संस्नापितो मेरुगिरौ जिनेन्द्रः।
यः कामजेता जन-सौख्यकारी, तं शुद्ध-भावा-दजितं नमामि॥२॥

ध्यान-प्रबन्धः प्रभवेन येन, निहत्य कर्म-प्रकृतिः समस्ताः।
मुक्ति-स्वरूपां पदवीं प्रपेदे, तं संभवं नौमि महाऽनुरागात्॥३॥

स्वप्ने यदीया जननी क्षपायां, गजादि वह्न्यन्त-मिदं ददर्श।
यत्तात इत्याह गुरुः परोऽयं, नौमि प्रमोदा-दभिनंदनं तम्॥४॥

कुवादिवादं जयता महान्तं, नय प्रमाणैर्-वचनैर्जगत्सु।
जैनं मतं विस्तरितं च येन, तं देवदेवं सुमतिं नमामि॥५॥

यस्यावतारे सति पितृधिष्ण्ये, ववर्ष रत्नानि हरे-र्निदेशात्।
धनाधिपः षण्णव-मास पूर्वं, पद्मप्रभं तं प्रणमामि साधुम्॥६॥

नरेन्द्र-सर्पेश्वर नाक-नाथैर्-वाणी भवन्ती जगृहे स्वचित्ते।
यस्मात्म-बोधः प्रथितः सभाया-महं सुपार्श्वं ननु तं नमामि॥७॥

सत्प्रातिहार्याऽतिशय-प्रपन्नो, गुण-प्रवीणो हत-दोष संगः।
यो लोक-मोहान्ध-तमः प्रदीपश्, चन्दप्रभं तं प्रणमामि भावात्॥८॥

गुप्तित्रयं-पंच महाव्रतानि-पंचोपदिष्टाः-समितिश्च येन।
बभाण यो द्वादशधा तपांसि, तं पुष्पदंतं प्रणमामि देवम्॥९॥

ब्रह्मा-व्रतांतो जिन नायकेनोत्-तम क्षमादिर्-दशधापि धर्मः।
येन प्रयुक्तो व्रत-बंध-बुद्ध्या, तं शीतलं तीर्थकरं नमामि॥१०॥

गणे जनाऽनंदकरे धरान्ते, विध्वस्त-कोपे प्रशमैक-चित्ते।
यो द्वादशांगं श्रुतमादि-देश, श्रेयांस-मानौमि जिनं तमीशम्॥११॥

मुक्त्-यंगनाया रचिता विशाला, रत्नत्रयी-शेखरता च येन।
यत्कंठ-मासाद्य बभूव श्रेष्ठा, तं वासुपूज्यं प्रणमामि वेगात्॥१२॥

ज्ञानी-विवेकी-परम-स्वरूपी-ध्यानी-व्रती-प्राणि-हितोपदेशी।
मिथ्यात्व-घाती शिवसौख्य भोजी, बभूव यस्तं विमलं नमामि॥१३॥

आभ्यंतरं-बाह्य-मनेकधा-यः, परिग्रहं सर्व-मपाचकार।
यो मार्ग-मुद्दिश्य हितं जनानां, वन्दे जिनं तं प्रणमाम्-यनंतम्॥१४॥

सादृर्धं पदार्था नव-सप्त तत्त्वैः- पंचास्तिकायाश्च न कालकायाः।
षड्द्रव्य निर्णीति-रलोक युक्तिर्, येनोदिता तं प्रणमामि धर्मम्॥१५॥

यश्चक्रवर्ती भुवि पञ्चमोऽभूच्-छ्री नंदनो द्वादशको गुणानाम्।
निधि प्रभुः षोडशको जिनेन्द्रस्, तं शांतिनाथं प्रणमामि भेदात्॥१६॥

प्रशंसितो यो न बिभर्ति हर्षं, विराधितो यो न करोति रोषं।
शीलं-व्रताद् ब्रह्मपदं गतो यस्, तं कुंथुनाथं प्रणमामि हर्षात्॥१७॥

न संस्तुतो न प्रणतः सभायां, यः सेवितोऽन्तर्गण-पूरणाय।
पदच्युतैः केवलिभिर्-जिनस्य, देवाधिदेवं प्रणमाम्-यरं तम्॥१८॥

रत्नत्रयं पूर्व-भवाऽन्तरे यो, व्रतं पवित्रं कृतवा-नशेषम्।
कायेन-वाचा-मनसा विशुद्ध्या, तं मल्लिनाथं प्रणमामि भक्त्या॥१९॥

ब्रुवन्नमः सिद्ध-पदाय वाक्य-मित्यग्रहीद्यः स्वयमेव लोचम्।
लौकान्तिकेभ्यः स्तवनं निशम्य, वन्दे जिनेशं मुनिसुव्रतं तम्॥२०॥

विद्यावते तीर्थकराय तस्मा-दाहार दानं ददतो विशेषात्।
गृहे नृपस्या-जनि रत्नवृष्टिः, स्तौमि प्रमाणान्-नयतो नमिं तम्॥२१॥

राजीमतीं यः प्रविहाय मोक्षे, स्थितिं चकारा-पुनरागमाय।
सर्वेषु जीवेषु दया दधानस्, तं नेमिनाथं प्रणमामि भक्त्या॥२२॥

सर्पाधिराजः कमठारि तोयैर्, ध्यान स्थितस्यैव फणावितानैः।
यस्योपसर्गं निरवर्त-यत्तं, नमामि पार्श्वं- महताऽदरेण॥२३॥

भवार्णवे जन्तु-समूहमेन- माकर्षयामास-हि-धर्म-पोतात्।
मज्जन्त-मुद्-वीक्ष्य य येन सापि- श्री वर्द्धमानं प्रणमाम्यहं तं॥२४॥

(शार्दूल विक्रीडित छन्दः)

यो धर्मं दशधा करोति पुरुषः स्त्री वा कृतोपस्कृतं,
सर्वज्ञ-ध्वनि-संभवं त्रिकरण-व्यापार-शुद्ध्याऽनिशम्।
भव्यानां जयमालया विमलया पुष्पांजलिं दापयन्,
नित्यंस श्रियमातनोति सकलं स्वर्गाऽपवर्ग-स्थितम्॥२५॥

(इति स्वयंभू स्तोत्र)

*****

अथ कल्याणमन्दिर स्तोत्रम्

(बसन्त तिलका छन्दः)

कल्याणमन्दिर - मुदार - मवद्य - भेदि,
भीताऽभय-प्रद-मनिन्दित - मङ्घ्रि पद्मम्।
संसार सागर निमज्ज- दशेष जन्तु,
पोतायमान-मभिनम्य जिनेश्वरस्य॥१॥

यस्य स्वयं सुरगुरुर्-गरिमाऽम्बुराशेः,
स्तोत्रं सुविस्तृत-मतिर्-न-विभुर्-विधातुम्।
तीर्थेश्वरस्य कमठ-स्मय धूमकेतोस्,
तस्याह-मेष किल संस्तवनं करिष्ये॥२॥

सामान्यतोऽपि तव वर्णयितुं स्वरूप-
मस्मादृशाः कथ-मधीश! भवन्त्-यधीशाः।
धृष्टोऽपि कौशिक शिशुर्-यदि वा दिवान्धो,
रूपं प्ररूपयति किं किल घर्मरश्मेः॥३॥

मोह-क्षया-दनुभवन्नपि नाथ! मर्त्यो,
नूनं गुणान् गणयितुं न तव क्षमेत्।
कल्पान्त-वान्त-पयसः प्रकटोऽपि यस्मान्-,
मीयेत केन जलधेर्-ननु रत्नराशिः॥४॥

अभ्युद्यतोऽस्मि तव नाथ ! जडाशयोऽपि,
कर्तुं स्तवं लस-दसंख्य - गुणाकरस्य।
बालोऽपि किं न निज-बाहु-युगं वितत्य,
विस्तीर्णतां कथयति स्वधियाऽम्बुराशेः ॥५ ॥

ये योगिना-मपि न यान्ति गुणास्तवेश !,
वक्तुं कथं भवति तेषु ममाऽवकाशः।
जाता तदेव - मस-मीक्षित - कारितेयं,
जल्पन्ति वा निजगिरा-ननु पक्षिणोऽपि ॥६ ॥

आस्ता-मचिन्त्य-महिमा जिन! संस्तवस्ते,
नामापि पाति भवतो- भवतो जगन्ति।
तीव्राऽऽतपो-पहत-पान्थ-जनान्-निदाघे,
प्रीणाति पद्म-सरसः स-रसोऽनिलोऽपि ॥७ ॥

हृद्वर्तिनि त्वयि विभो ! शिथिली भवन्ति,
जन्तोः क्षणेन निबिडा अपि कर्म-बन्धाः।
सद्यो भुजङ्गम-मया इव मध्य-भाग-,
मभ्या-गते वन-शिखण्डिनि चन्दनस्य ॥८ ॥

मुच्यन्त एव मनुजाः सहसा जिनेन्द्र !,
रौद्रै - रुपद्रव - शतैस्-त्वयि वीक्षितेऽपि।

गो-स्वामिनि स्फुरित - तेजसि दृष्टमात्रे,
चौरै-रिवाऽऽशु पशवः प्रपलायमानैः ॥९ ॥

त्वं तारको जिन ! कथं भविनां त एव,
त्वा-मुद्वहन्ति हृदयेन यदुत्तरन्तः।
यद्वा दृतिस्-तरति यज्जल- मेष नून-,
मन्तर्गतस्य मरुतः स किलाऽनुभावः ॥१० ॥

यस्मिन्- हर-प्रभृतयोऽपि हत-प्रभावाः,
सोऽपि त्वया रतिपतिः क्षपितः क्षणेन।
विध्यापिता हुतभुजः पयसाथ येन,
पीतं न किं तदपि दुर्धर-वाडवेन॥११ ॥

स्वामिन्-ननल्प - गरिमाण-मपि प्रपन्नास्-,
त्वां जन्तवः कथमहो हृदये दधानाः।
जन्मोदधिं लघु तरन्त्-यति-लाघवेन,
चिन्त्यो न हन्त महतां यदि वा प्रभावः ॥१२ ॥

क्रोधस्-त्वया यदि विभो ! प्रथमं निरस्तो,
ध्वस्तास्-तदा वद कथं किल कर्मचौराः।
प्लोषत्-यमुत्र यदि वा शिशिराऽपि लोके,
नील-द्रुमाणि विपिनानि न किं हिमानी ॥१३ ॥

त्वां योगिनो जिन! सदा परमाऽत्मरूप-
मन्वेषयन्ति हृदयाऽम्बुज कोष-देशे।
पूतस्य निर्मल-रुचेर्-यदि वा कि-मन्य-
दक्षस्य संभव-पदं ननु कर्णिकायाः ॥१४॥

ध्यानाज्-जिनेश! भवतो भविनः क्षणेन,
देहं विहाय परमात्म - दशां व्रजन्ति।
तीव्राऽनला-दुपल - भाव-मपास्य लोके,
चामीकर त्व-मचिरादिव धातु-भेदाः ॥१५॥

अन्तः सदैव जिन! यस्य विभाव्यसे त्वं,
भव्यैः कथं तदपि नाशयसे शरीरम्।
एतत्-स्वरूप-मथ मध्य- वि-वर्तिनो हि,
यद्-विग्रहं प्रशमयन्ति महानुभावाः ॥१६॥

आत्मा मनीषिभि-रयं त्व-दभेद-बुद्ध्या,
ध्यातो जिनेन्द्र ! भव-तीह भवत्-प्रभावः।
पानीय-मप्-यमृतमित्-यनुचिन्त्यमानम्,
किं नाम नो विष-विकार-मपा-करोति॥१७॥

त्वामेव वीत - तमसं परवादिनोऽपि,
नूनं विभो! हरि-हरादि-धिया प्रपन्नाः।

किं काच-कामलिभि-रीश सितोऽपि शंखो,
नो-गृह्यते विविध-वर्ण-विपर्ययेण॥१८॥

धर्मोपदेश - समये सविधाऽनुभावा-,
दास्तां जनो भवति ते तरुरप्-यशोकः।
अभ्युद्गते दिनपतौ समहीरुहोऽपि,
किं वा विबोध-मुपयाति न जीव-लोकः॥१९॥

चित्रं विभो! कथ-मवाङ्मुख - वृन्तमेव,
विष्वक्-पतत्-यविरला सुर-पुष्प-वृष्टिः।
त्वद्गोचरे सुमनसां यदि वा मुनीश !,
गच्छन्ति नून-मध एव हि बन्धनानि॥२०॥

स्थाने गभीर - हृदयोदधि - सम्भवायाः,
पीयूषतां तव गिरः स-मुदीरयन्ति।
पीत्त्वा यतः परम-सम्म-दसंग-भाजो,
भव्याऽव्रजन्ति तरसाप्-यजरामरत्वम्॥२१॥

स्वामिन्-सुदूर - मवनम्य स-मुत्पतन्तो,
मन्ये-वदन्ति शुचयः सुर - चामरौघाः।
येऽस्मै नतिं वि-दधते मुनि - पुंगवाय,
ते नून-मूर्ध्व-गतयः खलु शुद्ध-भावाः॥२२॥

श्यामं गभीर-गिर-मुज्ज्वल-हेम-रत्न-,
सिंहासनस्थ-मिह भव्य-शिखण्डिनस्-त्वाम्।
आलोकयन्ति - रभसेन नदन्त-मुच्चैश्,
चामीकराद्रि-शिरसीव नवाऽम्बुवाहम्॥२३॥

उद्गच्छता तव शिति-द्युति-मण्डलेन,
लुप्तच्छदच्-छवि - रशोक- तरुर्-बभूव।
सान्निध्यतोऽपि यदि वा तव वीतराग,
नीरागतां व्रजति को न सचेतनोऽपि॥२४॥

भो- भोः! प्रमाद-मवधूय भजध्व-मेन-
मागत्य निर्वृति-पुरीं प्रति सार्थवाहम्।
एतन् निवेदयति देव! जगत्-त्रयाय,
मन्ये नदन् नभिनभः सुरदुन्दुभिस्-ते॥२५॥

उद्योतितेषु भवता भुवनेषु! नाथ!,
तारान्वितो विधु-रयं विहताऽधिकारः।
मुक्ता-कलाप-कलितोरु-सिताऽऽतपत्र-,
व्याजात्-त्रिधा धृत-तनुर्-ध्रुव-मभ्युपेतः॥२६॥

स्वेन-प्रपूरित - जगत्-त्रय - पिण्डितेन,
कान्ति-प्रताप-यशसा-मिव संचयेन।

माणिक्य - हेम - रजत - प्रवि-निर्मितेन,
सालत्रयेण भगवन्-नभितो विभासि ॥२७॥

दिव्य-स्त्रजो जिन नमत्-त्रिदशाऽधिपाना-
मुत्सृज्य रत्न-रचिता-नपि मौलि-बन्धान्।
पादौ श्रयन्ति भवतो यदि वाऽपरत्र,
त्वत्संगमे सुमनसो न रमन्त एव ॥२८॥

त्वं नाथ! जन्म-जलधेर्-विपराङ् मुखोऽपि,
यत्तारयस्य सुमतो निज-पृष्ठ-लग्नान्।
युक्तं हि पार्थिव-निपस्य सतस्-तवैव,
चित्रं विभो! यदसि कर्म-विपाक-शून्यः ॥२९॥

विश्वेश्वरोऽपि जन-पालक दुर्गतस्-त्वं,
किं वाऽक्षर-प्रकृतिरप्-यलिपिस्-त्वमीश!
अज्ञान-वत्-यपि सदैव कथंचि-देव!
ज्ञानं त्वयि स्फुरति विश्व-विकास-हेतुः ॥३०॥

प्राग्भार-संभृत-नभांसि-रजांसि रोषा-
दुत्थाऽपितानि कमठेन शठेन यानि।
छायाऽपि तैस्तव न नाथ! हता हताशो,
ग्रस्तस्-त्वमीभि-रयमेव परं दुरात्मा ॥३१॥

यद्गर्जदूर्जित - घनौघ-मदभ्र - भीम -
भ्रश्यत्तडिन् मुसल-मांसल-घोरधारम्।
दैत्येन मुक्त-मथ दुस्तर - वारि दध्रे,
तेनैव तस्य जिन! दुस्तर-वारि कृत्यम्॥३२॥

ध्वस्तोर्ध्व-केश-विकृताऽकृति-मर्त्य-मुण्ड-,
प्रालम्ब भृद्-भय-दवक्त्र-विनिर्-यदग्निः।
प्रेतव्रजः प्रति भवन्त-मपीरितो यः,
सोऽस्याऽभवत् प्रतिभवं भव-दुःख-हेतुः॥३३॥

धन्यास्त एव भुवनाऽधिप! ये त्रिसंध्य-
माराधयन्ति विधिवद्-विधुतान्य-कृत्याः।
भक्त्योल्लसत्-पुलक-पक्ष्मल-देह-देशाः,
पाद-द्वयं तव विभो! भुवि जन्मभाजः॥३४॥

अस्मिन्-नपार-भव-वारि-निधौ मुनीश !,
मन्ये न मे श्रवण-गोचरतां गतोऽसि।
आकर्णिते तु तव गोत्र-पवित्र-मंत्रे,
किं वा विपद् विषधरी सविधं समेति॥३५॥

जन्माऽन्तरेऽपि तव-पाद-युगं न देव!-
मन्ये मया महित-मीहित-दान-दक्षम्।

तेनेह जन्मनि मुनीश! पराऽभवानां,
जातो निकेतन- महं मथिताऽशयानाम्॥३६॥

नूनं न मोह-तिमिराऽवृत लोचनेन,
पूर्वं विभो! सकृदपि प्रविलोकितोऽसि।
मर्मा विधो! विधु-रयन्ति हि मामनर्थाः,
प्रोद्यत्-प्रबन्ध-गतयः कथ-मन्यथैते॥३७॥

आकर्णितोऽपि महितोऽपि निरीक्षितोऽपि,
नूनं न चेतसि मया विधृतोऽसि भक्त्या।
जातोऽस्मि तेन जन-बान्धव! दुःखपात्रं,
यस्मात्-क्रियाःप्रतिफलन्ति नभाव-शून्याः॥३८॥

त्वं नाथ! दुःखि जन-वत्सल हे शरण्य!,
कारुण्य-पुण्य-वसते! वशिनां वरेण्य।
भक्त्या नते मयि महेश! दयां विधाय,
दुःखांकुरोद्-दलन-तत्परतां विधेहि॥३९॥

निःसंख्य-सार-शरणं- शरणं शरण्य!-
मासाद्य सादित-रिपु प्रथिताऽवदानम्।
त्वत्पाद-पंकज-मपि प्रणिधा-न-वन्ध्यो,
वन्ध्योऽस्मि चेद्भुवन पावन हा हतोऽस्मि॥४०॥

देवेन्द्र-वन्द्य! विदिताऽखिल-वस्तुसार!
संसार - तारक! विभो! भुवनाऽधिनाथ!।
त्रायस्व देव! करुणा-हृद! मां पुनीहि,
सीदन्त-मद्य भय-दव्यसनाम्बु-राशेः॥४१॥

यद्यस्ति नाथ ! भवदङ्घ्रि-सरोरुहाणां,
भक्तेः फलं किमपि सन्तत-सञ्चितायाः।
तन्मेत्वदेक - शरणस्य शरण्य! भूयाः,
स्वामी त्वमेव भुवनेऽत्र भवान्तरेऽपि॥४२॥

इत्थं समाहित-धियो विधिवज्-जिनेन्द्र !,
सान्द्रोल्लसत्-पुलक-कञ्चुकितांगभागाः।
त्वद्बिम्ब-निर्मल-मुखाऽम्बुज-बद्ध-लक्ष्या,
ये संस्तवं तव विभो! रचयन्ति भव्याः॥४३॥

(आर्या छन्द)

जन नयन 'कुमुदचन्द्र'-प्रभास्वराः स्वर्ग-संपदो भुक्त्वा।
ते विगलित-मल-निचया, अचिरान्मोक्षं प्रपद्यन्ते॥४४॥

॥ इति श्री कुमुदचन्द्राचार्य विरचितं कल्याणमन्दिर स्तोत्रम्॥

ॐ ह्रीं कमठोपसर्गजिताय श्री पार्श्वनाथायः नमः

अथ परमानन्द स्तोत्रम्

परमाऽनन्द संयुक्तं, निर्विकारं निराऽमयम्।
ध्यानहीना न पश्यन्ति, निजदेहे व्यवस्थितम्॥१॥

अनन्त सुख सम्पन्नं, ज्ञानाऽमृत पयोधरम्।
अनन्तवीर्य सम्पन्नं, दर्शनं परमाऽत्मनः॥२॥

निर्विकारं निराबाधं, सर्वसंग विवर्जितम्।
परमाऽनन्द सम्पन्नं, शुद्ध चैतन्य लक्षणम्॥३॥

उत्तमास्वात्म चिन्तास्यान्-मोहचिन्ता च मध्यमा।
अधमा काम चिन्ता स्यात्, पर चिन्ताऽधमाऽधमा॥४॥

निर्विकल्प समुत्पन्नं, ज्ञान-मेव सुधारसम्।
विवेक-मंजुलिं कृत्त्वा, तत्पिबन्ति तपस्विनः॥५॥

सदानन्द-मयं जीवं, यो जानाति स पण्डितः।
स सेवते निजाऽत्मानं, परमानन्द कारणम्॥६॥

नलिन्यां च यथा नीरं, भिन्नं तिष्ठति सर्वदा।
अयमाऽत्मा स्वभावेन, देहे तिष्ठति निर्मलाः॥७॥

द्रव्य कर्ममलैर्-मुक्तं, भाव कर्म वि-वर्जितम्।
नोकर्म रहितं विद्धि, निश्चयेन चिदाऽत्मनः॥८॥

आनन्दं ब्रह्मणोरूपं, निजदेहे व्यवस्थितम्।
ध्यान हीना न पश्यन्ति, जात्यन्धा इव भास्करम्॥९॥

तद् ध्यान क्रियते भव्यैर्-मनोयेन विलीयते।
तत्क्षणं दृश्यते शुद्धं, चिच्-चमत्कार लक्षणम्॥१०॥

ये ध्यानशीला मुनयः प्रधानास्, ते दुःखहीना नियमाद् भवन्ति।
सम्प्राप्य शीघ्रं परमात्म तत्त्वम्, व्रजन्ति मोक्षं क्षणमेक-मेव॥११॥
आनन्द रूपं परमाऽत्मतत्त्वम्, समस्त संकल्प विकल्प मुक्तम्।
स्वभाव लीना निवसन्ति नित्यम्, जानाति योगी स्वयमेव तत्त्वम्॥१२॥

परमात्म स्वरूप

चिदानन्दमयं शुद्धं, निराकारं निराऽमयम्।
अनन्तसुख संपन्नं, सर्वसंग वि-वर्जितम्॥१३॥

लोकमात्र प्रमाणोऽयं, निश्चये न हि संशयः।
व्यवहारे तनूमात्रः, कथितः परमेश्वरैः॥१४॥

यत्क्षणं दृश्यते शुद्धं, तत्क्षणं गतविभ्रमः।
स्वस्थचित्तः स्थिरीभूत्त्वा, निर्विकल्प समाधितः॥१५॥

स एव परमं ब्रह्म, स एव जिन पुंगवः।
स एव परमं तत्त्वं, स एव परमो गुरुः॥१६॥

स एव परमं ज्योतिः, स एव परमं तपः।
स एव परमं ध्यानं, स एव परमाऽऽत्मकः ॥१७॥

स एव सर्व कल्याणं, स एव सुख भाजनम्।
स एव शुद्ध चिद्रूपं, स एव परमं शिवः ॥१८॥

स एव परमाऽनन्दः, स एव सुखदायकः।
स एव परम ज्ञानं, स एव गुणसागरः ॥१९॥

परमाऽऽह्लाद संपन्नं, राग द्वेष वि-वर्जितम्।
सोऽहं तं देहमध्येषु, यो जानाति स पण्डितः ॥२०॥

आकार रहितं शुद्धं, स्व स्वरूपे व्यवस्थितम्।
सिद्ध-मष्ट गुणोपेतं, निर्विकारं निरंजनम् ॥२१॥

तत्सदृशं निजाऽत्मानं, यो जानाति स पंडितः।
सहजानन्द चैतन्य, प्रकाशाय महीयसे ॥२२॥

पाषाणेषु यथा हेम, दुग्ध मध्ये यथा घृतम्।
तिलमध्ये यथा तैलं, देह मध्ये यथा शिवः ॥२३॥

काष्ठ मध्ये यथा वह्निः, शक्ति रूपेण तिष्ठति।
अयमाऽत्मा शरीरेषु, या जानाति स पण्डितः ॥२४॥

॥ इति परमानन्द स्तोत्रम् ॥

ॐ ह्रीं सर्व व्याधि विनाशन समर्थाय तीर्थंकर परम देवाय नमः

अथ एकीभाव स्तोत्रम्

मन्दाक्रान्ता छन्दः

एकीभावं गत इव मया-यः स्वयं कर्म-बन्धो,
घोरं दुःखं भव-भव गतो दुर्निवारः करोति।
तस्याप्-यस्य त्वयि जिन! रवे-भक्ति-रुन्मुक्तये चेत्,
जेतुं शक्यो भवति न तया-कोऽपरस्-ताप हेतुः ॥१॥

ज्योतिरूपं दुरित-निवह-ध्वान्त-विध्वंस-हेतुं,
त्वामेवाहुर्-जिनवर चिरं तत्त्व-विद्याऽभियुक्ताः।
चेतोवासे भवसि च मम स्फार-मुद्भासमानस्,
तस्मिन्-नंहः कथ-मिव तमो वस्तुतो वस्तुमीष्टे ॥२॥

आनन्दाश्रु-स्नपित-वदनं गद्गदं चाऽभिजल्पन्,
यश्चायेत त्वयि दृढ़-मनाः स्तोत्र-मन्त्रैर्भवन्तम्।
तस्याभ्यस्ता-दपि च सुचिरं देह-वल्मीक-मध्यान्,
निष्कास्यन्ते विविध-विषम-व्याधयः काद्-रवेयाः ॥३॥

प्रागेवेह त्रिदिव-भवना-देष्यता-भव्य-पुण्यात्,
पृथ्वी-चक्रं कनकमयतां देव! निन्ये त्वयेदम्।
ध्यान द्वारं मम रुचिकरं स्वान्त-गेहं प्रविष्टस्-
तत्किं चित्रं जिन वपुरिदं यत्-सुवर्णी करोषि ॥४॥

लोकस्यैकस्-त्वमसि भगवन्-निर्निमित्तेन बन्धुस्,
त्वय्येवाऽसौ सकल-विषया शक्ति-र्प्रत्यनीका।
भक्ति-स्फीतां चिरमधिवसन्-मामिकां चित्त-शय्यां,
मय्युत्पन्नं कथमिव ततः क्लेश-यूथं सहेथाः॥५॥

जन्माऽटव्यां कथमपि मया देव! दीर्घं भ्रमित्वा,
प्राप्तैवेयं तव नय-कथा स्फार-पीयूष-वापी।
तस्या मध्ये हिमकर-हिम-व्यूह-शीते नितान्तं,
निर्मग्नं मां न जहति कथं दुःख दावोपतापाः॥६॥

पाद न्यासा-दपि च पुनतो यात्रया ते त्रिलोकीं,
हेमाऽभासो भवति सुरभिः श्री निवासश्च पद्मः।
सर्वांगेण स्पृशति भगवंस्-त्वय्यशेषं मनो मे,
श्रेयः किं तत्-स्वय महर हर्-यन् नमाम-भ्युपैति॥७॥

पश्यन्तं त्वद् वचन-ममृतं भक्ति-पात्र्या पिबन्तम्,
कर्मारण्यात्-पुरुष-मसमाऽनन्द-धाम-प्रविष्टम्।
त्वां दुर्वार-स्मर-मद-हरं त्वत्प्रसादैक-भूमिं,
क्रूराऽकाराः कथ-मिवरुजा कण्टका निर्लुठन्ति॥८॥

पाषाणाऽत्मा तदितरसमः केवलं रत्न-मूर्तिर्,
मानस्तंभो भवति च परस्-तादृशो रत्न-वर्गः।

दृष्टि-प्राप्तो हरति स कथं मान-रोगं नराणाम्,
प्रत्यासत्तिर्-यदि न भवतस्-तस्य तच्छक्ति-हेतुः ॥९॥

हृद्यः प्राप्तो मरुदपि भवन्-मूर्ति-शैलोपवाही,
सद्यः पुंसां निरवधि-रुजा-धूलि बंधं धुनोति।
ध्यानाऽहूतो हृदयकमलं यस्य तु त्वं प्रविष्टस्,
तस्याऽशक्यः क इह भुवने देव! लोकोपकारः ॥१०॥

जानासि त्वं मम भव-भवे यच्च यादृक्च दुःखं,
जातं यस्य स्मरण-मपि मे शस्त्रवन्-निष्पिनष्टि।
त्वं सर्वेशः सकृप इति च त्वामुपेतोऽस्मि भक्त्या,
यत्कर्तव्यं तदिह विषये देव! एव प्रमाणम् ॥११॥

प्रापद्-दैवं तव नुति-पदैर्-जीवकेनोपदिष्टैः,
पापाचारी मरण-समये सारमेयोऽपि सौख्यम्।
कः सन्देहो यदुपलभते वासव-श्री प्रभुत्वं,
जल्पञ्जाप्यैर्-मणिभि-रमलैस्, त्वन्-नमस्कार-चक्रम् ॥१२॥

शुद्धे ज्ञाने शुचिनि चरित्ते सत्यपि त्वय्यनीचा,
भक्तिर्नोचे-दनवधि सुखाऽवञ्चिका कुञ्चिकेयम्।
शक्योद्घाटं भवति हि कथं मुक्ति-कामस्य पुंसो,
मुक्ति-द्वारं परिदृढ़-महामोह-मुद्रा-कवाटम् ॥१३॥

प्रच्छन्नः खल्-वय-मघ-मयै-रन्धकारैः समन्तात्,
पन्था मुक्तेः स्थपुटित-पदः क्लेश-गर्तै-रगाधैः।
तत्कस्तेन व्रजति सुखतो देव! तत्त्वाऽवभासी,
यद्यग्रेऽग्रे न भवति भवद् भारती रत्न-दीपः॥१४॥

आत्म-ज्योतिर्-निधि-रनवधिर्-द्रष्टु-रानन्द-हेतुः,
कर्म-क्षोणी-पटल-पिहितो योऽनवाप्यः परेषाम्।
हस्ते कुर्वन्-त्यनति चिरतस्, तं भवद् भक्ति भाजः,
स्तोत्रैर्-बद्ध-प्रकृति-परुषोद्, दाम-धात्री-खनित्रैः॥१५॥

प्रत्युत्पन्ना नय-हिमगिरे-रायता चाऽमृताब्धेः,
या देव! त्वत्-पद-कमलयोः संगता भक्ति-गंगा।
चेतस्-तस्यां मम रुचि-वशा-दाप्लुतं क्षालितांहः,
कल्माषं यद्भवति किमियं, देव! सन्देह-भूमिः॥१६॥

प्रादुर्भूत-स्थिर-पद-सुख, त्वा-मनुध्यायतो मे,
त्वय्येवाहं स इति मति-रुत्पद्यते निर्विकल्पा।
मिथ्यैवेयं तदपि तनुते तृप्ति-मभ्रेषरूपाम्,
दोषाऽत्मानोऽप्यभिमत-फलास्, त्वत्प्रसादाद् भवन्ति॥१७॥

मिथ्यावादं मलमपनुदन्, सप्त-भंगी-तरंगैर्,
वागम्भोधिर्-भुवन-मखिलं, देव! पर्येति यस्ते।

तस्यावृत्तिं सपदि विबुधाश्, चेत सैवाचलेन,
व्यातन्वन्तः सुचिर-ममृता, सेवयाऽतृप्नुवन्ति ॥१८॥

आहार्येभ्यः स्पृहयति परं, यः स्वभावाद-हृद्यः,
शस्त्र-ग्राही भवति सततं, वैरिणा यश्च शक्यः।
सर्वांगेषु त्वमसि सुभगस्, त्वं न शक्यः परेषां,
तत्किंभूषा-वसन-कुसुमैः,किंच शस्त्रै-रुदस्त्रैः ॥१९॥

इन्द्रः सेवां तव सुकुरुतां, किं तया श्लाघनं ते,
तस्यै-वेयं भव-लय-करी, श्लाघ्यता-मातनोति।
त्वं निस्तारी जनन-जलधेः सिद्धि-कान्ता-पतिस्-त्वं,
त्वं लोकानां प्रभुरिति तव, श्लाघ्यते स्तोत्र-मित्थम् ॥२०॥

वृत्तिर्-वाचामपर-सदृशी, न त्व-मन्येन तुल्यः,
स्तुत्युद्गाराः कथमिव ततस्, त्वय्यमी नः क्रमन्ते-
मैवं भूवंस्-तदपि भगवन्, भक्ति पीयूष-पुष्टास्,
ते भव्याना-मभिमत-फलाः, पारिजाता भवन्ति ॥२१॥

कोपावेशो न तव न तव, क्वापि देव! प्रसादो,
व्याप्तं चेतस्-तव हि परमो-पेक्षयैवाऽनपेक्षम्।
आज्ञाऽवश्यं तदपि भुवनं, सन्निधिर्-वैर-हारी,
क्वैवं-भूतं भुवनं-तिलकं, प्राभवं त्वत्परेषु ॥२२॥

देव!स्तोतुं त्रिदिवगणिका-मण्डली-गीत-कीर्तिं,
तोतूर्ति त्वां सकल-विषय-ज्ञान-मूर्तिं जनो यः।
तस्य क्षेमं न पद मटतो जातु जाहूर्ति पन्थास्,
तत्त्वग्रन्थ-स्मरण-विषये नैष मोमूर्ति मर्त्यः ॥२३॥

चित्ते कुर्वन्-निरवधि-सुख-ज्ञान-दृग्वीर्य-रूपम्,
देव ! त्वां यः समय-नियमा-दाऽऽदरेण स्तवीति।
श्रेयोमार्गं स खलु सुकृति, तावता पूरयित्त्वा,
कल्याणानां भवति विषयः, पञ्चधा पञ्चितानाम् ॥२४॥

(शार्दूल विक्रीडित छन्द)

भक्ति-प्रह्व-महेन्द्र-पूजित-पद, त्वत्कीर्त्तने न क्षमाः,
सूक्ष्मज्ञान-दृशोऽपि संयमभृतः, के हन्त मन्दा-वयम्।
अस्माभिःस्तवन-च्छलेन तु परस्, त्वय्याऽदरस्तन्यते,
स्वात्माधीन सुखैषिणां स खलु नः, कल्याण-कल्पद्रुमः ।२५।

(स्वागता छन्द)

वादिराज-मनुशाब्दिक-लोको, वादिराज-मनुतार्किक-सिंहः।
वादिराज मनु काव्य कृतस्ते, वादिराज मनु भव्य-सहायः ।२६।

॥ इति श्री मद्वादिराजसूरिकृत एकीभाव स्तोत्रम् ॥

*****

विपत्ति नाशक चन्द्रप्रभः स्तोत्रम्

चन्द्रप्रभः प्रभाऽदीशं, चन्द्रशेखर चन्दनम्।
चन्द्र लक्ष्म्यांकं चन्द्रांकं, चन्द्रबीजं नमोस्तु ते ॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चन्द्रप्रभः श्रीं ह्रीं कुरु-कुरु स्वाहाः।
इष्ट-सिद्धी महा-ऋद्धि, तुष्टि पुष्टि करो मम ॥2॥

द्वादश सहस्त्र जपतो मंत्रं, वाञ्छितार्थं फलप्रदः।
महंतं त्रिसंध्यं जपतः, सर्वाति व्याधि नाशनम्॥3॥

सुरा-ऽसुरेन्द्र सहितःच श्री पांडव नृपस्तुते।
श्री चन्द्रप्रभ तीर्थेशं, श्रियं चन्द्रो ज्वालां कुरु॥4॥

श्री चन्द्रप्रभ! विधेयं, स्मृताऽमेय फलंप्रदा।
भवाब्धि व्याधि विध्वंश, दायिनिमी वरप्रदा ॥5॥

*****

अनंत सौख्यामृतकूप रूपं, शतेन्द्र पूज्यं 'विशदं' पवित्रं।
कर्मारि नाशाय हि वज्र तुल्यं, चन्द्रप्रभः स्तोत्रमिदं नमामि॥6॥

*****

अथ जिनचतुर्विंशतिका स्तोत्रम्

शार्दूलविक्रीडित छन्दः

श्री लीलाऽयतनं मही-कुल-गृहं कीर्ति-प्रमोदास्पदं,
वाग्देवी-रति-केतनं जय-रमा-क्रीडा-निधानं महत्।
स स्यात् सर्व-महोत्सवैक भवनं यः प्रार्थितार्थ-प्रदं,
प्रातः पश्यति कल्प-पादप-दलच्-छायं जिनाङ्घ्रि-द्वयम्॥१॥

(बसन्ततिलका छन्दः)

शान्तं वपुः श्रवण-हारि वचश्चरित्रं,
सर्वोपकारि तव देव! ततः श्रुतज्ञाः।
संसार-मारव-महास्थल-रुन्द-सान्द्रच्-,
छाया-महीरुह ! भवन्त-मुपाश्रयन्ते॥२॥

(शार्दूलविक्रीडित छंदः)

स्वामिन्-नद्य विनिर्-गतोऽस्मि जननी-गर्भान्ध-कूपोदरा-,
दद्योद्घाटित दृष्टिरस्मि फलवज्-जन्मास्मि चाद्यस्फुटम्।
त्वामद्राक्ष-महं यदक्षय-पदाऽनन्दाय लोकत्रयी-
नेत्रेन्दीवर-काननेन्दु-ममृत-स्यन्दि-प्रभा-चन्द्रिकम्॥३॥

निःशेष-त्रिदशेन्द्र-शेखर-शिखा-रत्न प्रदीपावली-,
सान्द्रीभूत-मृगेन्द्र-विष्टर-तटी-माणिक्य-दीपावलिः।
क्वेयं श्रीः क्व च निःस्पृहत्व-मिदमित् यूहातिगस्त्वादृशः,
सर्व-ज्ञान-दृशश्-चरित्र-महिमा लोकेश ! लोकोत्तरः॥४॥

राज्यं शासनकारि-नाकपति यत् त्यक्तं तृणाऽवज्ञया,
हेला-निर्दलित-त्रिलोक-महिमा यन्मोह-मल्लोजितः।
लोकालोक-मपि स्वबोध-मुकुरस्यान्तः कृतं यत् त्वया,
सैषाश्चर्य परम्परा जिनवर क्वान्यत्र संभाव्यते॥५॥

दानं ज्ञान-धनाय दत्त मसकृत् पात्राय सद्वृत्तये,
चीर्णान्युग्र-तपांसि तेन सुचिरं पूजाश्च बह्-व्यः कृताः।
शीलानां निचयः सहामलगुणैः सर्वः समासादितो,
दृष्टस्त्वं जिन येन दृष्टि-सुभगः श्रद्धा परेण क्षणम्॥६॥

प्रज्ञा-पारमितः स एव भगवान पारं स एवश्रुतः-,
स्कन्धाब्धेर्-गुण-रत्न-भूषण इति श्लाघ्यः स एव ध्रुवम्।
नीयन्ते जिन येन कर्ण-हृदयाऽलंकारतां त्वद्गुणाः,
संसाराहि-विषापहार-मणयस्-त्रैलोक्य-चूड़ामणे॥७॥

(मालिनी छंदः)

जयति दिविज-वृन्दान्दोलितै-रिन्दुरोचिर्-,
निचय-रुचिभिरुच्चैश्-चामरैर्-वीज्यमानः।
जिनपति-रनुरज्यन्-मुक्ति-साम्राज्य-लक्ष्मी-,
युवति-नव कटाक्ष-क्षेप-लीलां दधानैः ॥८॥

(स्रग्धरा छंदः)

देवः श्वेतातपत्र-त्रय-चमरिरुहाऽशोक-भाश्चक्र-भाषा-,
पुष्पौघासार-सिंहासन-सुरपटहै-रष्टभिः प्रातिहार्यैः।
साश्चर्यैर्-भ्राजमानः सुर-मनुज-सभाम्भोजिनी-भानुमाली,
पायान्नः पादपीठीकृत-सकल-जगत्पाल-मौलि-र्जिनेन्द्रः ॥९॥

नृत्यत्-स्वर्-दन्ति-दन्ताम्बुरुह-वन-नटन्नाक-नारी-निकायः,
सद्यस्त्रैलोक्य-यात्रोत्सव-कर-निनदातोद्य-माद्यन्निलिम्पः।
हस्ताम्भोजात-लीला विनिहित सुमनोदाम-रम्याऽमर स्त्री-,
काम्यः कल्याण-पूजाविधिषु विजयते देव देवागमस्ते ॥१०॥

(शार्दूलविक्रीडित छंदः)

चक्षुष्मानह-मेव देव! भुवने नेत्राऽमृत-स्यन्दिनम्,
त्वद्वक्त्रेन्दुमति-प्रसाद-सुभगैस्-तेजोभिरुद् भासितम्।
येनालोकयता मयानति-चिराच्-चक्षुः कृतार्थीकृतं,
द्रष्टव्याऽवधि-वीक्षण-व्यतिकर-व्याजृम्भ-माणोत्सवम्॥११॥

(बसन्ततिलका छंद)

कन्तोः सकान्तमपि मल्लमवैति कश्चिन्-,
मुग्धो मुकुन्द-मरविन्दज-मिन्दुमौलिम्।
मोघीकृत-त्रिदश-योषि-दपांगपातस्-,
तस्य त्वमेव विजयी जिनराज मल्लः॥१२॥

(मालिनी छंदः)

किसलयित-मनल्पं त्वद्-विलोकाऽभिलाषात्,
कुसुमित-मतिसान्द्रं त्वत्-समीप-प्रयाणात्।
मम फलितममन्दं त्वन्मुखेन्दो-रिदानीं,
नयन-पथमवाप्ताद्-देव! पुण्यद्रुमेण॥१३॥

त्रिभुवन-वन-पुष्पात्-पुष्प-कोदण्ड-दर्प-,
प्रसर-दव-नवाम्भो-मुक्ति-सूक्ति-प्रसूतिः।
स जयति जिनराज-व्रात-जीमूत संघः,
शतमख-शिखि-नृत्यारम्भ-निर्बन्ध-बन्धुः॥१४॥

(स्रग्धरा छंदः)

भूपाल-स्वर्ग-पाल-प्रमुख-नर-सुर-श्रेणि-नेत्राऽलिमाला-,
लीला-चैत्यस्य चैत्यालय-मखिल-जगत्कौमुदीन्दो-र्जिनस्य।
उत्तंसीभूत-सेवाञ्जलि-पुट-नलिनी-कुड्मलस्त्रिः परीत्य,
श्रीपाद-च्छाययापस्थित भवदवथुः संश्रितोऽस्मीव मुक्तिम्॥१५॥

(बसंततिलका छंदः)

देव! त्वदङ्घ्रि-नख-मण्डल-दर्पणेऽस्मिन्-,
नर्घ्ये निसर्ग-रुचिरे चिर-दृष्ट-वक्त्रः।
श्रीकीर्ति-कान्ति-धृति-संगम-कारणानि,
भव्यो न कानि लभते शुभ-मंगलानि॥१६॥

(मालिनी छंद)

जयति सुर-नरेन्द्र-श्रीसुधा-निर्झरिण्याः,
कुल धरणि-धरोऽयं जैन-चैत्याऽभिरामः।
प्रविपुल-फल-धर्मानोकहाग्र-प्रवाल-,
प्रसर-शिखर-शुम्भत्केतनः श्रीनिकेतः॥१७॥

विन-मदमरकान्ता-कुन्तलाऽक्रान्त-कान्ति-,
स्फुरित-नख-मयूख-द्योतिताशाऽन्तरालः।
दिविज-मनुज राज-व्रात-पूज्य-क्रमाब्जो,
जयति विजित-कर्माऽराति-जालो-जिनेन्द्रः॥१८॥

(बसंततिलका छंदः)

सुप्तोत्थितेन सुमुखेन सुमंगलाय,
द्रष्टव्य-मस्ति यदि मंगलमेव वस्तु।
अन्येन किं तदिह नाथ! तवैव वक्त्रं,
त्रैलोक्य-मंगल-निकेतन-मीक्षणीयम्॥१९॥

(शार्दूलविक्रीडित छंद:)

त्वं धर्मोदय-तापसाश्रम-शुकस् त्वं काव्य-बन्ध-क्रम-,
क्रीडानन्दन-कोकिलस्त्व-मुचितः श्रीमल्लिका-षट्पदः।
त्वं पुन्नाग-कथाऽरविन्द-सरसी-हंसस्-त्व-मुत्तंसकैः,
कैर्भूपाल न धार्यसे गुण-मणि-स्रङ्मालिभिर्-मौलिभिः ॥२०॥

(मालिनि छंद:)

शिव-सुख-मजर-श्री-संगमं चाऽभिलष्य,
स्व-मभिनियमयन्ति क्लेश-पाशेन केचित्।
वयमिह तु वचस्ते भूपतेर्-भावयन्तस्-,
तदुभय-मपि शश्वल्-लीलया निर्विशामः ॥२१॥

(शार्दूलविक्रीडित छंद:)

देवेन्द्रा! स्तव मज्जनानि विदधुर् देवाङ्गना मङ्गला-,
न्यापेठुः शरदिन्दु-निर्मल-यशो-गन्धर्व-देवा-जगुः।
शेषाश्चापि यथानियोग-मखिलाः सेवां सुराश्चक्रिरे,
तत्किं देव वयं विदध्म इतिनश्-चित्तं तु दोलायते ॥२२॥

देव!त्वज्जननाऽभिषेक-समये रोमाञ्च-सत्कञ्चुकैर्-,
देवेन्द्रैर्-यदनर्ति-नर्तनविधौ लब्ध-प्रभावैः स्फुटम्।
कश्चान्-यत्सुर-सुन्दरी कुच-तट-प्रान्ताऽवनद्धोत्तम-,
प्रेङ्खद्-वल्लकि-नाद-झङ्कृत-महो तत्केन संवर्ण्यते ॥२३॥

देव! त्वत्प्रतिबिम्ब-मम्बुज-दलस्-मेरेक्षणं पश्यतां,
यत्राऽस्माक-महो महोत्सव-रसो दृष्टे-रियान्वर्तते।
साक्षात्-तत्र भवन्त-मीक्षितवतां कल्याण-काले तदा,
देवाना-मनिमेष-लोचनतया वृत्तः स किं वर्ण्यते॥२४॥

दृष्टं धाम रसायनस्य महता दृष्टं निधीनां पदम्,
दृष्टं सिद्ध-रसस्य सद्म सदनं दृष्टं च चिन्तामणेः।
किं दृष्टै-रथवानुषंगिक-फलै-रेभिर्-मयाद्य ध्रुवं,
दृष्टं मुक्ति-विवाह-मंगल-गृहं दृष्टेजिन-श्री-गृहे॥२५॥

दृष्टस्-त्वं जिनराज-चन्द्र विकसद् भूपेन्द्र-नेत्रोत्पले,
स्नातं त्वन्नुति-चन्द्रिकाम्भसि भवद् विद्वच्-चकोरोत्सवे!
नीतश्चाद्य निदाघजः क्लमभरः शान्तिं मया गम्यते,
देव! त्वद्गत-चेतसैव भवतो भूयात् पुनर्-दर्शनम्॥२६॥

॥ इति श्रीमद्भूपालकविविरचिताजिनचतुर्विंशतिका ॥

ये जिनेन्द्रं ना पश्यन्ति, पूजयन्ति स्तुवन्ति न।
निष्फलं जीवनं तेषां, तेषा धिक् च गृहाश्रमम्॥
श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः, श्रुते भक्तिः सदास्तु मे।
सज्ज्ञानमेव संसार, वारणं मोक्ष कारणं॥

विषापहार स्तोत्रम्

(उपजाति छन्दः)

स्वात्म-स्थितः सर्व गतः समस्त-व्यापार-वेदी वि निवृत्त-सङ्गः।
प्रवृद्ध-कालोऽप्-यजरो वरेण्यः, पाया-दपायात्-पुरुषः पुराणः ॥१॥

परै-रचिन्त्यं युग - भार-मेकः, स्तोतुं वहन्योगि भिरप्-यशक्यः।
स्तुत्योऽद्य मेऽसौ वृषभो न भानोः, कि-मप्रवेशे विशति प्रदीपः ॥२॥

तत्त्याज शक्रः शकनोऽभिमानम्, नाऽहं त्यजामि स्तवनोऽनुबन्धम्।
स्वल्पेन बोधेन ततोऽधिकार्थं, वाताय-नेनेव निरूपयामि ॥३॥

त्वं विश्वदृश्वा सकलै-रदृश्यो, विद्वा-नशेषं निखिलै-रवेद्यः।
वक्तुं कियान्कीदृश-मित्-यशक्यः, स्तुति स्ततोऽशक्ति कथा तवाऽस्तु ॥४॥

व्यापीडितं बाल-मिवात्म-दोषै-रुल्लाघतां लोक-मवापिपस्त्वम्।
हिताऽहितान्वेषण-मान्द्य-भाजः, सर्वस्य जन्तो-रसि बाल-वैद्यः ॥५॥

दाता न हर्ता दिवसं विवस्वा-नद्यश्व इत्यच्युत दर्शिताशः।
सव्याज-मेवं गम्यत्-यशक्तः, क्षणेन दत्सेऽभिमतं नताय ॥६॥

उपैति भक्त्या सुमुखः सुखानि, त्वयि स्वभावाद् विमुखश्च दुःखम्।
सदाऽवदात-द्युति-रेकरूपस् - तयोस्त्व-मादर्श इवाऽवभासि ॥७॥

अगाधताब्धेः स यतः पयोधिर्-मेरोश्च तुङ्गा प्रकृति स यत्र।
द्यावापृथिव्योः पृथुता तथैव, व्याप-त्वदीया भुवनान्तराणि ॥८ ॥

तवोऽनवस्था परमार्थ - तत्त्वं, त्वया न गीतः पुनरोऽगमश्च।
दृष्टं विहाय त्व-मदृष्टमैषीर्-विरुद्ध वृत्तोपि समञ्जसस्त्वम् ॥९ ॥

स्मरः सुदग्धो भवतैव तस्मिन्, नुद्धूलितात्मा यदि नाम शम्भुः।
अशेत वृन्दोपहतोऽपि विष्णुः, किं गृह्यते येन भवानजागः ॥१० ॥

स नीरजाः स्यादपरोऽघ वान्वा, तद्दोषकीर्त्यैव न ते गुणित्वम्।
स्वतोऽम्बुराशेर्-महिमा न देव!, स्तोकाऽपवादेन जलाशयस्य ॥११ ॥

कर्म स्थितिं जन्तुरनेक-भूमिं, नयत्यमुं सा च परस्परस्य।
त्वं नेतृ-भावं हि तयोर्भवाब्धौ, जिनेन्द्र नौ-नाविकयो-रिवाख्यः ॥१२ ॥

सुखाय दुःखानि गुणाय दोषान्, धर्माय पापानि समोऽचरन्ति।
तैलाय बालाः सिकता-समूहं, निपीडयन्ति स्फुटमत्त्वदीयाः ॥१३ ॥

विषापहारं मणिमौषधानि, मंत्रं समुद्दिश्य रसायनं च।
भ्राम्यन्त्यहो न त्वमिति स्मरन्ति, पर्याय-नामानि तवैव तानि ॥१४ ॥

चित्ते न किञ्चित्-कृतवानसि त्वं, देवः कृतश्चेतसि येन सर्वम्।
हस्ते कृतं तेन जगद् विचित्रम्, सुखेन जीवत्यपि चित्तबाह्यः ॥१५ ॥

त्रिकाल तत्त्वं त्व-मवैस्-त्रिलोकी, स्वामीति संख्या-नियते-रमीषाम्।
बोधाऽधिपत्यं प्रतिनाभविष्यंस्-तेऽन्येपि चेद्व्याप्स्-यदमूनपीदम्॥१६॥

नाकस्य पत्युः परिकर्म रम्यम्, नागम्यरूपस्य तवोपकारि।
तस्यैव हेतुः स्वसुखस्य भानो- रुद्बिभ्रतच्छत्र-मिवादरेण॥१७॥

क्वोपेक्ष कस्त्वं क्व सुखोपदेशः, स चेत्-किमिच्छा-प्रतिकूल-वादः।
क्वासौ क्व वा सर्व जगत्प्रियत्वं, तन्नो यथा तथ्यमवेविजं ते॥१८॥

तुंगात्फलं यत्-तदकिञ्चनाच्च, प्राप्यं समृद्धान्न धनेश्वरादेः।
निरम्भसोऽप्युच्च तमादिवाद्रेर्-नैकापि निर्याति धुनी पयोधेः॥१९॥

त्रैलोक्य-सेवा नियमाय दण्डं, दध्रे यदिन्द्रो विनयेन तस्य।
तत्प्रातिहार्य भवतः कुतस्त्यं, तत्कर्म योगाद्यदि वा तवास्तु॥२०॥

श्रिया परं पश्यति साधु निःस्वः, श्रीमान्न कश्चित् कृपणं त्वदन्यः।
यथा प्रकाश-स्थितमन्धकार-स्थायीक्षतेऽसौ न तथा तमः स्थम्॥२१॥

स्व वृद्धि निःश्वास-निमेषभाजि, प्रत्यक्ष-मात्मानुभवेऽपि मूढः।
किं चाखिल-ज्ञेय-विवर्ति-बोध- स्वरूप-मध्यक्ष-मवैति लोकः॥२२॥

तस्यात्मजस्-तस्य पितेति देव!, त्वां येऽवगायन्ति कुलं प्रकाश्य।
तेऽद्यापि नन्वाश्मनमित्-यवश्यम्,पाणौ कृतं हेम पुनस्-त्यजन्ति॥२३॥

दत्तस्-त्रिलोक्यां पटहोऽभिभूताः, सुरासुराऽस्तस्य महान् स लाभः।
मोहस्स मोहस्त्वयि को विरोद्धुर्-मूलस्य नाशो बलवद्-विरोधः ॥२४॥

मार्गस्त्वयैको ददृशे विमुक्तेश्-चतुर्गतीनां गहनं परेण।
सर्वं मया दृष्टमिति स्मयेन, त्वं मा कदाचिद्-भुजमालुलोकः ॥२५॥

स्वर्भानु-रर्कस्य हविर्-भुजोऽम्भः, कल्पान्त वातोऽम्बु निधेर्विघातः।
संसार-भोगस्य वियोग-भावो, विपक्ष-पूर्वाभ्युदयास्त्वदन्ये ॥२६॥

अजानतस्-त्वां नमतः फलं यत्-तज्जानतोऽन्यं न तु देवतेति।
हरिन्मणिं काचधिया दधानस्-तं तस्य बुद्ध्या वहतो न रिक्तः ॥२७॥

प्रशस्त-वाचश्-चतुराः कषायैर्-दग्धस्य देव! - व्यवहारमाहुः।
गतस्य दीपस्य हि नन्दितत्त्वम्, दृष्टं कपालस्य च मंगलत्वम् ॥२८॥

नानार्थ-मेकार्थ-मदस्त्व-दुक्तम्, हितं वचस्ते निशमय्य वक्तुः।
निर्दोषतां के न विभावयन्ति, ज्वरेण मुक्तः सुगमः स्वरेण ॥२९॥

न क्वापि वाञ्छाववृते च वाक् ते, काले क्वचित् कोऽपि तथा नियोगः।
न पूरयाम्-यम्बुधि-मित्युदंशुः, स्वयं हि शीतद्युति रभ्युदेति ॥३०॥

गुणा गभीराः परमाः प्रसन्नाः, बहु-प्रकारा बहव-स्तवेति।
दृष्टोऽयमंतः स्तवने न तेषां, गुणो गुणानां किमतः परोऽस्ति ॥३१॥

स्तुत्या परं नाभिमतं हि भक्त्या, स्मृत्या प्रणत्या च ततो भजामि।
स्मरामि देवं प्रणमामि नित्यम्, केनाप्युपायेन फलं हि साध्यम्॥३२॥

ततस्त्रिलोकी - नगराधिदेवं, नित्यं परं ज्योति-रनन्त-शक्तिम्।
अपुण्य-पापं पर पुण्य-हेतुं, नमाम्यहं वन्द्य-मवन्दितारम्॥३३॥

अशब्द-मस्पर्श-मरूप-गन्धं, त्वां नीरसं तद्विषयाव-बोधम्।
सर्वस्य मातार-ममेय मन्यैर्-, जिनेन्द्र मस्मार्य-मनुस्मरामि॥३४॥

अगाधमन्यैर्-मनसाप्य-लंघ्यं, निष्किञ्चनं प्रार्थित-मर्थवद्भिः।
विश्वस्य पारं तमदृष्ट पारं, पतिं जनानां शरणं व्रजामि॥३५॥

त्रैलोक्य-दीक्षा-गुरवे नमस्ते, यो वर्धमानोऽपि निजोन्नतोऽभूत्।
प्राग्गण्डशैलः पुनरद्रि-कल्पः, पश्चान्न मेरुः कुल-पर्वतोऽभूत्॥३६॥

स्वयंप्रकाशस्य दिवा निशा वा, न बाध्यता यस्य न बाधकत्त्वम्।
न लाघवं गौरवमेकरूपं, वन्दे विभुं काल कला-मतीतम्॥३७॥

इतिस्तुतिं देव विधाय दैन्याद्, वरं न याचे त्व-मुपेक्षकोऽसि।
छाया तरुं संश्रयतः स्वतः स्यात्-कश्छायया याचितयात्मलाभः॥३८॥

अथास्ति दित्सा यदि वोपरोधस्-, त्वय्येव सक्तां दिश भक्ति-बुद्धिम्।
करिष्यते देव ! तथा कृपां मे, को वात्मपोष्ये सुमुखो न सूरिः॥३९॥

वितरति विहिता यथाकथंचिज्-, जिन विनताय मनीषितानि भक्तिः।
त्वयि नुति-विषया पुनर्विशेषाद्, दिशति सुखानि यशो 'धनंजयं' च॥४०॥

॥ इति कवि धनञ्जय कृत विषापहार स्तोत्रम्॥

अथ नवग्रह शांति स्तोत्रम्

(आचार्य भद्रबाहु कृत)

जगद्‌गुरुं नमस्कृत्य, श्रुत्त्वा सद्‌गुरु भाषितै।
ग्रहशांतिं प्रवक्ष्यामि, लोकानां सुखहेतवे॥१॥

जिनेन्द्राः खेचरा ज्ञेया, पूजनीया विधिक्रमात्।
पुष्पैर् - विलेपनैर् - धूपैर् - नैवेद्यैस् - तुष्टिहेतवे॥२॥

पद्मप्रभस्य मार्तण्डश्-चन्द्रश्-चन्द्रप्रभस्य च।
वासुपूज्यस्य भूपुत्रो, बुधश्-चाष्ट जिनेशिनां॥३॥

विमलाऽनन्त - धर्मेश - शांति - कुन्थ्वरह -नमि।
वर्द्धमान-जिनेन्द्राणां, पादपद्मं बुधो नमेत्॥४॥

ऋषभाऽजित-सुपार्श्वाः साऽभिनन्दन-शीतलौ।
सुमतिः सम्भव-स्वामी, श्रेयांसेषु बृहस्पतिः॥५॥

सुविधिः कथितः शुक्रे, सुव्रतश्च शनैश्चरै।
नेमिनाथो भवेद्राहोः, केतुः श्रीमल्लि-पार्श्वयोः॥६॥

जन्मलग्नं च राशिं च, यदि पीडयन्ति खेचराः।
तदा संपूजयेद् धीमान्-खेचरान् सह तान् जिनान्॥७॥

भद्रबाहु-गुरुर्-वाग्मी, पंचमः श्रुतकेवली।
विद्याप्रसादतः पूर्वं, ग्रहशांति-विधिः कृता॥८॥

यः पठेत् प्रात रुत्थाय, शुचिर्भूत्त्वा समाहितः।
विपत्तितो भवेच्छांतिः, क्षेमं तस्य पदे पदे॥९॥

प्रातःकाल इस स्तोत्र का पाठ करने से क्रूरग्रह अपना असर नहीं करते। किसी ग्रह के असर होने पर 27 दिन तक प्रतिदिन 21 बार पाठ करने से अवश्य शान्ति होगी।

अथ अद्याष्टक स्तोत्रम्

अद्य मे सफलं जन्म, नेत्रे च सफले मम।
त्वामद्राक्ष यतो देव! हेतु-मक्षय संपदः॥१॥

अद्य संसार-गम्भीर, पाराऽवारः सुदुस्तरः।
सुतरोऽयं क्षणेनैव, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात्॥२॥

अद्य मे क्षालितं गात्रं, नेत्रे च विमली कृते।
स्नातोऽहं धर्म-तीर्थेषु, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात्॥३॥

अद्य मे सफलं जन्म, प्रशस्तं सर्वमंगलम्।
संसाराऽर्णव-तीर्णोऽहं, जिनेन्द्र! तव दर्शनात्॥४॥

अद्य कर्माष्टक-ज्वालं, विधूतं सकषायकम्।
दुर्गतेर्-वि निवृत्तोऽहं, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात्॥५॥

अद्य सौम्या ग्रहाः सर्वे, शुभाश्-चैकादश-स्थिताः।
नष्टानि विघ्न-जालानि, जिनेन्द्र! तव दर्शनात्॥६॥

अद्य नष्टो महाबन्धः, कर्मणां दुःखदायकः।
सुख संङ्गं समापन्नो, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात्॥७॥

अद्य कर्माष्टकं नष्टं, दुःखोत्पादन-कारकम्।
सुखाम्भोधि-निमग्नोऽहं, जिनेन्द्र! तव दर्शनात्॥८॥

अद्य मिथ्याऽन्धकारस्य, हन्ता ज्ञान-दिवाकरः।
उदितो मच्छरीरेऽस्मिन्, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात्॥९॥

अद्याहं सुकृती भूतो, निर्धूताऽशेष कल्मषः।
भुवन-त्रय-पूज्योऽहं, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात्॥१०॥

अद्याऽष्टकं पठेद्यस्तु, गुणाऽऽनन्दित-मानसः।
तस्य सर्वार्थ संसिद्धिस्, जिनेन्द्र! तव दर्शनात्॥११॥

॥ इत्यद्याष्टकं स्तोत्रम् ॥

विषयासक्त चित्तानां, गुणः को वा न नश्यति।
न वैदुस्यं ना मानुष्यं, नाभिजात्यं न सत्यभाक्॥

अथ अकलंक स्तोत्रम्

(शार्दूलविक्रीडित छंदः)

त्रैलोक्यं सकलं त्रिकालविषयं सालोक-मालोकितं,
साक्षाद् येन यथा स्वयं करतले रेखात्रयं सांगुलि।
रागद्वेषभया-मयान्तक-जरा-लोलत्त्व-लोभादयो,
नालं यत्पद-लंघनाय स महादेवो! मया वंद्यते ॥१॥

दग्धं येन पुरत्रयं शरभुवा तीव्राऽर्चिषा वह्निना,
यो वा नृत्यति मत्तवत्पितृवने यस्यात्मजो वा गुहः।
सोऽयं किं मम शंकरो भय-तृषा-रोषार्ति-मोह-क्षयं,
कृत्त्वा यः स तु सर्ववित्-तनुभृतां क्षेमंकरः शंकरः ॥२॥

यत्नाद्येन विदारितं कररुहै-र्दैत्येन्द्र-वक्षः स्थलं,
सारथ्येन धनञ्जयस्य समरे योऽमारयत् कौरवान्।
नासौ विष्णु-रनेककाल विषयं यज्ज्ञान-मव्याहतं,
विश्वं व्याप्य विजृम्भते स तु महा विष्णुः सदेष्टो मम ॥३॥

उर्वश्या-मुदपादि रागबहुलं चेतो यदीयं पुनः,
पात्री-दण्ड-कमण्डलु-प्रभृतयो यस्याकृतार्थ-स्थितिम्।
आविर्भावयितुं भवन्ति स कथं ब्रह्मा भवेन्मादृशां,
क्षुत्तृष्णा-श्रमरागरोग रहितो ब्रह्माकृतार्थोऽस्तु नः ॥४॥

यो जग्ध्वा पिशितं समत्स्यकवलं जीवं च शून्यं वदन्,
कर्त्ता कर्मफलं न भुङ्क्त इति यो वक्ता स बुद्धः कथम्।
यज्ज्ञानं क्षणवर्ति वस्तु सकलं ज्ञातुं न शक्तं सदा,
यो जानन्-युगपज्जगत्-त्रयमिदं, साक्षात् स बुद्धो मम ॥५॥

(स्रग्धरा छंद)

ईशः किं छिन्नलिंगो यदि विगतभयः शूलपाणिः कथं स्यात्,
नाथः किं भैक्ष्यचारी यतिरिति स कथं सांगनः साऽत्मजश्च।
आर्द्राजः किन्त्-वजन्मा सकलविदिति किं वेत्ति नात्मान्तरायं,
संक्षेपात्सम्यगुक्तं पशुपतिमपशुः कोऽत्र धीमानुपास्ते ॥६॥

ब्रह्मा चर्माक्षसूत्री सुरयुवति-रसावेश विभ्रान्त चेताः,
शम्भुः खट्वांगधारी गिरिपति-तनयापांग-लीलानुविद्धः।
विष्णुश्चक्राधिपः सन्दुहित-रमगमद् गोपनाथस्य मोहा-,
दर्हन्विध्वस्तरागो जितसकलभयः कोऽयमेष्वाप्तनाथः ॥७॥

(शार्दूल विक्रीडित)

एको नृत्यति विप्रसार्य ककुभां चक्रे सहस्रं भुजा-,
नेकः शेषभुजंगभोगशयने व्यादाय निद्रायते।
दृष्टुं चारुतिलोत्तमा-मुख-मगादेकश्-चतुर्वक्त्रता-,
मेते मुक्तिपथं वदन्ति विदुषा-मित्येत-दत्यद्भुतम् ॥८॥

(स्रग्धरा छंद)

यो विश्वं वेद वेद्यं जनन जलनिधेर्-भंगिनः पारदृश्वा,
पौर्वापर्याऽविरुद्धं वचन-मनुपमं निष्कलंकं यदीयम्।
तं वन्दे साधु वंद्यं सकलगुणनिधिं ध्वस्तदोषद्विषन्तं,
बुद्धं वा वर्द्धमानं-शतदलनिलयं केशवं वा शिवं वा ॥९॥

(शार्दूल विक्रीडित)

माया नास्ति जटा-कपाल मुकुटं चन्द्रो न मूर्धावली,
खट्वांगं न च वासुकिर्-न च धनुः शूलं न चोग्रं मुखम्।
कामो यस्य न कामिनी न च वृषो-गीतं न नृत्यं पुनः,
सोऽस्मान् पातु निरंजनो जिनपतिः सर्वत्र सूक्ष्मः शिवः ॥१०॥

नो ब्रह्मांकित भूतलं न च हरेः शम्भोर्-न मुद्रांकितं,
नो चन्द्राऽर्ककरांकितं सुरपतेर्-वज्रांकितं नैव च।
षडवक्त्रांकित बौद्ध-देवहुत - भुग्-यक्षोरगैर्नांकितं,
नग्नं पश्यत वादिनो जगदिदं जैनेन्द्र! मुद्रांकितम्॥११॥

मौञ्जी दण्ड-कमण्डलु-प्रभृतयो नो लाञ्छनं ब्रह्मणो,
रुद्रस्यापि जटा-कपाल-मुकुटं-कौपीन-खट्वांगनाः।
विष्णोश्चक्र-गदादि-शंख-मतुलं बुद्धस्य रक्ताम्बरं,
नग्नं पश्यत वादिनोजग-दिदं जैनेन्द्र-मुद्राङ्कितम्॥१२॥

नाहंकार-वशीकृतेन मनसा न द्वेषिणा केवलं,
नैरात्म्यं प्रतिपद्य नश्यति जने कारुण्य-बुद्ध्यामया।
राज्ञः श्री हिमशीतलस्य सदसि प्रायो विदग्धात्मनो,
बौद्धौघान्सकलान् विजित्य स घटः पादेन विस्फालितः ॥१३॥

(स्रग्धरा छंद)

खट्वांगं नैव हस्ते न च हृदिरचिता लम्बते मुण्डमाला,
भस्मांगं नैव शूलं न च गिरिदुहिता नैव हस्ते कपालं।
चन्द्रार्द्धं नैव मूर्धन्यपि वृषगमनं नैव कण्ठे फणीन्द्रः,
तं वन्दे त्यक्तदोषं भवभयमथनं चेश्वरं देवदेवं!॥१४॥

(शार्दूल विक्रीडित छंद)

किं वाद्यो भगवानमेय-महिमा देवोऽकलङ्कःकलौ,
काले यो जनतासु धर्मनिहितो देवाऽकलङ्को जिनः।
यस्य स्फार-विवेकमुद्रल-हरी-जाले प्रमेयाकुला,
निर्मग्ना तनुतेतरा भगवती ताराशिरः कम्पनम्॥१५॥

सा तारा खलु-देवता-भगवती मन्याऽपि मन्यामहे,
षण्मासाऽवधि-जाड्य सांख्य-भगवद् भट्टाऽकलङ्कप्रभोः!
वाक्कल्लोल-परंपराभि-रमते नूनं मनोमज्जन-,
व्यापारं सहतेस्म विस्मितमतिः संताडितेतस्-ततः॥१६॥

॥ इत्यकलङ्क स्तोत्रम् ॥

अथ विशद जिन स्तोत्रम्

तुभ्यं नमः प्रथम तीर्थ प्रवर्तकाय।
तुभ्यं नमः सुजिन मार्ग प्रकाशकाय॥
तुभ्यं नमः श्री वृषभ जिन मंगलाय।
तुभ्यं नमः विशद आदि जिनेश्वराय॥१॥

तुभ्यं नमः दुरित कर्म विनाशनाय।
तुभ्यं नमः विशद जिन सिद्धीकराय॥
तुभ्यं नमः सकल कल्मष नाशनाय।
तुभ्यं नमः श्री अजितेश्वर वन्दकाय॥२॥

तुभ्यं नमः परमदर्शन दर्शकाय।
तुभ्यं नमः सकल बोध विबोधकाय॥
तुभ्यं नमः विशद सिन्धु गुणार्णवाय।
तुभ्यं नमः सुजिन सम्भव भास्कराय॥३॥

तुभ्यं नमः प्रभु जिनेश्वर नन्दनाय।
तुभ्यं नमः रहित दोष सुधाकराय॥
तुभ्यं नमः विजित कानन क्रन्दनाय।
तुभ्यं नमः जिनेश्वर अभिनन्दनाय॥४॥

तुभ्यं नमः सुमति पञ्चम ईश्वराय।
तुभ्यं नमः परम पावन मंगलाय।
तुभ्यं नमः विजित दोष चिदुद्गमाय॥
तुभ्यं नमः श्री सुमति जिन निर्मलाय॥५॥

तुभ्यं नमः सु जिन पद्म सुवर्णकाय।
तुभ्यं नमः पदम भूषित भूषणाय॥
तुभ्यं नमः पदम जिन श्री शोभनाय।
तुभ्यं नमः विशद पद-पद्मश्रयाय॥६॥

तुभ्यं नमः चरण स्वस्ति पद प्रदाय।
तुभ्यं नमः हरित वर्ण सुदेहकाय॥
तुभ्यं नमः विशद ज्ञान प्रदायकाय।
तुभ्यं नमः जिन सुपार्श्व सुवन्दकाय॥७॥

तुभ्यं नमः धवल मंगल वर्णकाय।
तुभ्यं नमः सुपथ ज्ञान प्रदायकाय॥
तुभ्यं नमः विशद सन्त दिगम्बराय।
तुभ्यं नमः सुजिन चन्द्रमरीचिकाय॥८॥

तुभ्यं नमः सुविधि विधिसिद्धीकराय।

तुभ्यं नमः सकल मंगल देशनाय॥

तुभ्यं नमः प्रभु जिनेश निरन्तराय।

तुभ्यं नमः सुविधि मणि रत्नत्रयाय॥९॥

तुभ्यं नमः सतत् धर्म प्रभावकाय।

तुभ्यं नमः चरम लक्ष्य प्रदायकाय॥

तुभ्यं नमः सकल रूप सुशोभनाय।

तुभ्यं नमः सुजिन शीतल शीतलाय॥१०॥

तुभ्यं नमः विभु श्रेयांस सु दर्शनाय।

तुभ्यं नमः परम बोधि सुबोधकाय॥

तुभ्यं नमः विशद पूज्य तीर्थङ्कराय।

तुभ्यं नमः सु जिन श्रेयस श्रेयकाय॥११॥

तुभ्यं नमः जिनमहामय नन्दनाय।

तुभ्यं नमः विशद तत्त्व प्रकाशकाय॥

तुभ्यं नमः सुयति पद संस्पर्शनाय।

तुभ्यं नमः श्री वासुपूज्य सुपूजकाय॥१२॥

तुभ्यं नमः श्री सुगुण गण नायकाय।
तुभ्यं नमः सुजिन पण्डित पण्डिताय॥
तुभ्यं नमः विशद अर्हत पुंगवाय।
तुभ्यं नमः विमल जिन मुक्तिप्रदाय॥१३॥

तुभ्यं नमः विमदमर्दन मर्दकाय।
तुभ्यं नमः विभव सागर तारकाय॥
तुभ्यं नमः सकल मंगल उत्तमाय।
तुभ्यं नमः सुजिन सिद्ध अनन्तनाय॥१४॥

तुभ्यं नमः परम धर्म प्रभावकाय।
तुभ्यं नमः सतत सुप्रतिबोधकाय॥
तुभ्यं नमः सकल धर्म सुभास्कराय।
तुभ्यं नमः विशद धर्म जिनेश्वराय॥१५॥

तुभ्यं नमः परम तीर्थ प्रवर्तकाय।
तुभ्यं नमः सकल दोष विनाशनाय॥
तुभ्यं नमः विशद जिन चक्रीश्वराय।
तुभ्यं नमः सुजिन शांति जिनेश्वराय॥१६॥

तुभ्यं नमः सकल कल्मष वर्जिताय।
तुभ्यं नमः गुण अनन्त गुणार्णवाय॥

तुभ्यं नमः प्रभु ऋशीष महीधराय।
तुभ्यं नमः परम कुन्थु जिनेश्वराय॥१७॥

तुभ्यं नमः सकल मंगल भूषणाय।
तुभ्यं नमः विशद जिन सिद्धीश्वराय॥
तुभ्यं नमः परम पुंगव तीर्थकाय।
तुभ्यं नमः श्री जिनेन्द्र अरह जिनाय॥१८॥

तुभ्यं नमः परम सत्व हितंकराय।
तुभ्यं नमः प्रभु जिनाम्बुज भास्कराय॥
तुभ्यं नमः विशद लोक सुरार्चिताय।
तुभ्यं नमः सुजिन मल्लि जिनेश्वराय॥१९॥

तुभ्यं नमः विशद मार्ग प्रबोधनाय।
तुभ्यं नमः सुजिन शुचि क्षेमंकराय॥
तुभ्यं नमः सकल ज्ञान प्रशंसकाय।
तुभ्यं नमः प्रभु मुनिसुव्रत जिनाय॥२०॥

तुभ्यं नमः चरण अम्बुज वन्दकाय।
तुभ्यं नमः जिन भवोदधि तारकाय॥
तुभ्यं नमः त्रिजगतः कमलार्कनाय।
तुभ्यं नमः नमि सुजिन आलोकनाय॥२१॥

तुभ्यं नमः प्रभु सुपद पद्मश्रयाय।
तुभ्यं नमः मणि प्रभा परिचुम्बिताय॥
तुभ्यं नमः विशद धर्म महोदयाय।
तुभ्यं नमः सुजिन नेमि स्वयंभुवाय॥२२॥

तुभ्यं नमः जिन निरत्यय-मव्ययाय।
तुभ्यं नमः विशद मंगल सौख्यदाय॥
तुभ्यं नमः परम भासुर मूर्तयाय।
तुभ्यं नमः परम पार्श्व जिनेश्वराय॥२३॥

तुभ्यं नमः असद जन्म विनाशकाय।
तुभ्यं नमः परम श्री जिन शासनाय॥
तुभ्यं नमः प्रभव ज्ञान प्रकाशकाय।
तुभ्यं नमः विशद सन्मति श्री जिनाय॥२४॥

तुभ्यं नमः सु शशि मण्डल मण्डिताय।
तुभ्यं नमः सुगुण मण्डितनायकाय॥
तुभ्यं नमः परम आर्य गुणार्णवाय।
तुभ्यं नमः 'विशद' बोधि समर्थकाय॥२५॥

****

अथ बृहद स्वयंभू स्तोत्रम्

श्रीमद्समन्तभद्राचार्य विरचितम्

अथ श्री वृषभजिन स्तवनम्

(वंशस्थ छंदः)

स्वयंभुवा भूत-हितेन भूतले, समञ्जसज्ञान विभूति चक्षुषा।
विराजितं येन विधुन्वता तमः, क्षपाऽऽकरे णेव गुणोत्करैः करैः ॥१॥

प्रजापतिर्यः प्रथमं जिजीविषूः, शशास कृष्यादिषु कर्मसु प्रजाः।
प्रबुद्ध तत्त्वः पुनरद् भुतोदयो, ममत्वतो निर्विविदे विदांवरः ॥२॥

विहाय यः सागर-वारि-वाससं, वधू मिवेमां वसुधा-वधूं सतीम्।
मुमुक्षु-रिक्ष्वाकु-कुलादि-रात्मवान्, प्रभुः प्रवव्राज सहिष्णु-रच्युतः ।३।

स्वदोष मूलं स्व-समाधि-तेजसा, निनाय यो निर्दय भस्मसात् क्रियाम्।
जगाद तत्त्वं जगतेऽर्थिनेञ्जसा, बभूव च ब्रह्म पदाऽमृतेश्वरः ॥४॥

स विश्व चक्षुर्-वृषभोऽर्चितः सतां, समग्र विद्याऽऽत्म-वपुर्-निरञ्जनः।
पुनातु चेतो मम नाभिनन्दनो, जिनोऽजित क्षुल्लक-वादि शासनः ॥५॥

॥ ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय नमो नमः ॥

अथ श्री अजितनाथ जिन स्तवनम्

(उपजाति छंद)

यस्य प्रभावात् त्रिदिवच्युतस्य, क्रीडास्वपि क्षीव-मुखाऽरविन्दः।
अजेय-शक्तिम्-भुवि बन्धुवर्गश्-चकार नामाजित इत्-यबन्ध्यम्॥१॥

अद्यापि यस्याजित-शासनस्य, सतां प्रणेतुः प्रतिमंगलार्थम्।
प्रगृह्यते नाम परं पवित्रं, स्वसिद्धि-कामेन जनेन लोके॥२॥

यः प्रादु-रासीत्प्रभु-शक्ति-भूम्ना, भव्याऽशया-लीन-कलंक-शान्त्यै।
महामुनिर्-मुक्त-घनोपदेहो, यथाऽरविन्दाऽभ्युदयाय भास्वान्॥३॥

येन प्रणीतं पृथु धर्मतीर्थं, ज्येष्ठं जनाः प्राप्य जयन्ति दुःखम्।
गांङ्गं ह्रदं चन्दन पंङ्क-शीतं, गज-प्रवेका इव घर्मतप्ताः॥४॥

स ब्रह्म-निष्ठः सम-मित्र-शत्रुर्-विद्या-विनिर्वान्त-कषाय-दोषः।
लब्धात्म-लक्ष्मी-रजितोऽजितात्मा, जिनः श्रियं मे भगवान विधत्ताम्॥५।

॥ ॐ ह्रीं श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय नमो नमः॥

अथ श्री संभवनाथ जिन स्तवनम्

(इन्द्रवज्रा छंद)

त्वं संभवः संभव-तर्ष-रोगैः, सन्तप्-मानस्य जनस्य-लोके।
आसीरिहाऽकस्मिक एव वैद्यो, वैद्यो यथाऽनाथ-रुजां प्रशान्त्यै॥१।

अनित्य-मत्राण-महं-क्रियाभिः, प्रसक्त-मिथ्याऽध्यवसाय-दोषम्।
इदं जगज्जन्म-जराऽन्तकार्तं, निरञ्जनां शांति-मजीगमस्त्वम्॥२॥

शतह्लदोन्मेष-चलं हि सौख्यं, तृष्णा मयाऽप्याऽऽयन-मात्र-हेतुः।
तृष्णाऽभिवृद्धिश्च तपत्-यजस्रं, तापस्-तदायास-यतीत्यवादीः॥३॥

बन्धश्च मोक्षश्च तयोश्च हेतू, बद्धश्च मुक्तश्च फलं च मुक्तेः।
स्याद्वादिनो नाथ! तवैव युक्तं, नैकान्त दृष्टस्-त्वमतोऽसि शास्ता॥४॥

शक्रोप्-यशक्त स्तव पुण्यकीर्तेः, स्तुत्यां प्रवृत्तः किमु-मादृशोऽज्ञः।
तथापि भक्त्या स्तुत-पाद-पद्मो, ममार्य! देयाः शिव-ताति-मुच्चैः॥५॥

॥ ॐ ह्रीं श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय नमो नमः॥

अथ श्री अभिनन्दननाथ जिन स्तवनम्

(वंशस्थ छंदः)

गुणाऽभिनन्दा-दभिनन्दनोभवान्, दयावधूं क्षांति-सखी-मशिश्रियत्।
समाधि-तन्त्रस्तदुपोप-पत्तये, द्वयेन नैर्ग्रन्थ्य गुणेनऽऽचाऽऽयुजत्॥१॥

अचेतने तत्कृत-बन्धजेऽपि च, ममेद-मित्याऽभिनिवेशिक-ग्रहात्।
प्रभङ्गुरे स्थावर-निश्चयेन च, क्षतं जगत्तत्त्व-मजिग्रहद्-भवान्॥२॥

क्षुधादि-दुःख-प्रतिकारतः स्थितिर्-न चेन्द्रियार्थ-प्रभवाऽल्प-सौख्यतः।
ततो गुणो नास्ति च देह-देहिनो-रितीद-मित्थं भगवान् व्यजिज्ञपत्॥३॥

जनोऽति लोलोऽप्यनुबन्ध-दोषतो, भया-दकार्येष्विह न प्रवर्तते।
इहाऽप्यमुत्राऽप्यनुबन्ध-दोषवित्, कथं सुखे संसजतीति चाऽब्रवीत्॥४॥

स चाऽनुबन्धोऽस्य जनस्य तापकृत्, तृषोऽभिवृद्धिः सुखतो न च स्थितिः।
इति प्रभो ! लोकहितं यतो मतं, ततो भवानेव गतिः सतां मतः॥५॥

॥ ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्राय नमो नमः॥

अथ श्री सुमतिनाथ जिन स्तवनम्

(उपजाति छंदः)

अनवर्थ-संज्ञः सुमतिर्-मुनिस्-त्वं, स्वयं मतं येन सुयुक्ति-नीतम्।
यतश्च शेषेषु मतेषु नास्ति, सर्व-क्रिया-कारक-तत्त्व सिद्धिः॥१।

अनेकमेकं च तदेव तत्त्वं, भेदान्वय-ज्ञानमिदं हि सत्यम्।
मृषोपचारोऽन्यतरस्य लोपे, तच्छेष-लोपोऽपि ततोऽनुपाख्यम्॥२॥

सतः कथञ्चित्-त-दसत्त्व-शक्तिः, खे नास्ति पुष्पं तरुषु प्रसिद्धम्।
सर्व-स्वभाव-च्युत-मप्रमाणं स्व-वाग्-विरुद्धं तव दृष्टि-तोऽन्यत्॥३।

न सर्वथा नित्यमुदेत्य-पैति, न च क्रिया-कारक-मत्र युक्तम्।
नैवाऽसतोजन्म सतो न नाशो, दीपस्तमः पुद्गल-भावतोऽस्ति॥४॥

विधिर्-निषेधश्च कथञ्चिदिष्टौ, विवक्षया मुख्य-गुण-व्यवस्था।
इति प्रणीतिः सुमते-स्तवेयं, मति-प्रवेकः स्तुवतोऽस्तु नाथ!॥५॥

॥ ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय नमो नमः॥

अथ श्री पद्मप्रभु जिन स्तवनम्

(उपजाति छंदः)

पद्मप्रभः पद्म-पलाश-लेश्यः, पद्माऽऽलयाऽऽलिंगित-चारु-मूर्तिः।
बभौ भवान् भव्य-पयोरुहाणां, पद्माऽऽकराणा-मिव पद्म-बन्धुः॥१॥

बभार पद्मां च सरस्वतीं च, भवान् पुरस्तात् प्रतिमुक्ति-लक्ष्म्याः।
सरस्वती मेव समग्र-शोभां, सर्वज्ञ लक्ष्मीं ज्वलितां विमुक्तः॥२॥

शरीर-रश्मि-प्रसरः प्रभोस्ते, बालाऽर्क-रश्मि-च्छविराऽलिलेप।
नराऽमराऽऽकीर्ण-सभां प्रभावच्-छैलस्य पद्माऽऽभ-मणेः स्व-सानुम्॥३।

नभस्तलं पल्लवयन्-निव त्वं, सहस्त्र-पत्राऽम्बुज-गर्भचारैः।
पादाऽम्बुजैः पातित-मार-दर्पो, भूमौ प्रजानां विजहर्थ भूत्यै॥४॥

गुणाऽम्बुधेर्विप्रुषमप्-यजस्त्रं, नाऽऽखण्डलः स्तोतु-मलं तवर्षेः।
प्रागेव मादृक् किमुताऽतिभक्तिर्-मां बालमालाऽऽपयतीदमित्थम्॥५॥

॥ ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभु जिनेन्द्राय नमो नमः॥

अथ श्री सुपार्श्वनाथ जिन स्तवनम्

(उपजाति छंदः)

स्वास्थ्यं यदाऽऽत्यन्तिकमेष पुंसां, स्वार्थो न भोगः परिभङ्गुराऽऽत्मा।
तृषोऽनुषङ्गान्-न च ताप-शांति- रितीद माख्यद् भगवान सुपार्श्वः॥१॥

अजङ्गमं जङ्गम-नेय यंत्रं, यथा तथा जीव-धृतं शरीरम्।
बीभत्सु पूति क्षयि तापकं च, स्नेहो वृथाऽत्रेति हितं त्वमाख्यः॥२॥

अलङ्घ्य-शक्तिर्-भवितव्यतेयं, हेतु-द्वयाऽऽविष्कृतकार्यलिङ्गा।
अनीश्वरो जन्तु-रहं-क्रियाऽऽर्तः, संहत्य कार्येष्विति साध्ववादीः॥३॥

बिभेति मृत्योर्न ततोऽस्ति मोक्षो, नित्यं शिवं वाञ्छति नाऽस्य लाभः।
तथापि बालो भय-काम-वश्यो, वृथा स्वयं तप्यत इत्यवादीः॥४॥

सर्वस्य तत्त्वस्य भवान् प्रमाता, मातेव बालस्य हिताऽनुशास्ता।
गुणाऽवलोकस्य जनस्य नेता, मयापि भक्त्या परिणूयसेऽद्य॥५॥

॥ ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमो नमः॥

तुषमासं घोषन्तो भाव विशुद्धो महाणुभावो य।
णामेण या शिवभूई केवलणाणी फुडंजाओ॥

अथ श्री चन्द्रप्रभ जिन स्तवनम्

(उपजाति छंद:)

चन्द्रप्रभं चन्द्र-मरीचि-गौरं, चन्द्रं द्वितीयं जगतीव कान्तम्।
वन्देऽभिवन्द्यं महतामृषीन्द्रं, जिनं जित-स्वान्त-कषाय बन्धम्॥१॥

यस्याङ्ग-लक्ष्मी-परिवेष-भिन्नं, तमस्-तमोऽरे-रिव रश्मि-भिन्नम्।
ननाश बाह्यं बहुमानसं च, ध्यान-प्रदीपाऽतिशयेन भिन्नम्॥२॥

स्व-पक्ष-सौस्थित्य-मदाऽवलिप्ता, वाक्-सिंहनादैर्-विमदा बभूवुः।
प्रवादिनो यस्य मदाऽऽर्द्र-गण्डा, गजा यथा केशरिणो निनादैः॥३॥

यः सर्वलोके परमेष्ठितायाः पदं बभूवाऽद्भुत-कर्म-तेजाः।
अनन्त-धामाऽक्षर-विश्वचक्षुः, समन्त-दुःख-क्षय-शासनश्च॥४॥

स चन्द्रमा भव्य-कुमुद्-वतीनां, विपन्न-दोषाऽभ्र-कलंक-लेपः।
व्याकोश-वाङ्-न्याय-मयूख-मालः, पूयात् पवित्रो भगवान मनो मे॥५॥

॥ ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय नमो नमः॥

अथ श्री सुविधिनाथ जिन स्तवनम्

(उपजाति छंद:)

एकान्तदृष्टि-प्रतिषेध तत्त्वं, प्रमाण-सिद्धं त-दतत्-स्वभावम्।
त्वया प्रणीतं सुविधे ! स्वधाम्ना, नैतत् समालीढ-पदं त्वदन्यैः॥१॥

तदेव च स्यान्न तदेव च स्यात्, तथा प्रतीते स्तव तत् कथञ्चित्।
नाऽत्यन्त-मन्यत्व-मनन्यता च, विधेर्-निषेधस्य च शून्य-दोषात्॥२॥

नित्यं तदेवेद-मिति प्रतीतेर्-न नित्य-मन्यत् प्रतिपत्ति सिद्धेः।
न तद्विरुद्धं बहिरन्तरंग- निमित्त-नैमित्तिक-योगतस्-ते॥३॥

अनेकमेकं च पदस्य वाच्यं, वृक्षा इति प्रत्ययवत् प्रकृत्या।
आकाङ्क्षिणः स्यादिति वै निपातो, गुणाऽनपेक्षे नियमेऽपवादः॥४॥

गुण-प्रधानाऽर्थमिदं हि वाक्यं, जिनस्य ते तद् द्विषता-मपथ्यम्।
ततोऽभिवन्द्यं जगदीश्वराणां, ममापि साधोस्तव पाद-पद्मम्॥५॥

॥ ॐ ह्रीं श्री सुविधिनाथ जिनेन्द्राय नमो नमः॥

अथ श्री शीतलनाथ जिन स्तवनम्

(वंशस्थ छंद:)

न शीतलाश्-चन्दन-चन्द्र-रश्मयो, न गाङ्गमम्भो न च हार - यष्टयः।
यथा मुनेस्तेऽनघ-वाक्य-रश्मयः, शमाऽम्बु-गर्भाः शिशिरा विपश्चितां॥१॥

सुखाऽभिलाषा नल-दाह-मूर्च्छितं, मनो निजं ज्ञानमयाऽमृताम्बुभिः।
व्यदिध्यपस्-त्वं विष-दाह-मोहितं, यथा भिषग्-मन्त्र-गुणैः स्व-विग्रहम्।२।

स्व-जीविते कामसुखे च तृष्णया, दिवा श्रमाऽऽर्त्ता निशि शेरते प्रजाः।
त्वमार्य ! नक्तं दिव-मप्रमत्तवा-न जागरे-वाऽऽत्म-विशुद्ध-वर्त्मनि॥३॥

अपत्य-वित्तोत्तर-लोक-तृष्णया, तपस्विनः केचन कर्म कुर्वते।
भवान् पुनर्जन्म-जरा-जिहासया, त्रयीं प्रवृत्तिं सम-धीर-वारुणत॥४॥

त्वमुत्तम-ज्योतिरजः क्व निर्वृतः, क्व ते परे बुद्धि-लवो-द्धव-क्षताः।
ततः स्व-निःश्रेयस-भावना-परैर्-बुधप्रवेकैर्जिन ! शीतलेड्यसे॥५॥

॥ ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय नमो नमः॥

अथ श्री श्रेयांसनाथ जिन स्तवनम्

(उपजाति छंद:)

श्रेयान् जिनः श्रेयसि वर्त्मनीमाः, श्रेयः प्रजाः शास-दजेय-वाक्यः।
भवांश्चकासे भुवनत्रयेऽस्मिन्, नेको यथा वीत-घनो विवस्वान्॥१॥

विधि-र्विषक्त-प्रतिषेधरूपः, प्रमाण मत्राऽन्यतरत्-प्रधानम्।
गुणोऽपरो मुख्य-नियाम-हेतुर्, नयः स दृष्टान्त समर्थनस्ते॥२॥

विवक्षितो मुख्य इतीष्-यतेऽन्यो, गुणोऽविवक्षो न निरात्मकस्ते।
तथाऽरि-मित्राऽनुभयादि शक्तिर्-द्वयाऽवधिः कार्यकरं हि वस्तु॥३॥

दृष्टान्त सिद्धावुभयोर्-विवादे, साध्यं प्रषिध्येन्-न तु तादृगस्ति।
यत् सर्वथैकान्त-नियामि दृष्टं, त्वदीय दृष्टिर्-विभवत्-यशेषे॥४॥

एकान्त दृष्टि-प्रतिषेध सिद्धिर्, न्यायेषुभिर्-मोहरिपुं निरस्य।
असिस्म कैवल्य-विभूति-सम्राट, ततस्त्व-मर्हन्नसि मे स्तवार्हः॥५॥

॥ ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय नमो नमः॥

अथ श्री वासुपूज्य जिन स्तवनम्

(उपजाति छंद:)

शिवासु पूज्योऽभ्युदय-क्रियासु, त्वं वासुपूज्यस्-त्रिदशेन्द्र-पूज्यः।
मयाऽपि पूज्योऽल्प-धिया मुनीन्द्र!, दीपार्चिषा किं तपनो न पूज्यः॥१॥

न पूजयाऽर्थस्त्वयि वीतरागे, न निन्दया नाथ ! विवान्त-बैरे।
तथापि ते पुण्य-गुण-स्मृतिर्-नः, पुनातु चित्तं दुरिताञ्जनेभ्यः॥२॥

पूज्यं जिनं त्वाऽर्चयतो जनस्य, सावद्य-लेशो बहु-पुण्य-राशौ।
दोषाय नालं कणिका विषस्य, न दूषिका शीत शिवाऽम्बु-राशौ॥३॥

यद् वस्तु बाह्यं गुण-दोष-सूतेर्, निमित्त-मभ्यन्तर-मूल-हेतोः।
अध्यात्म वृत्तस्य तदंगभूत- मभ्यन्तरं केवल-मप्यलं ते॥४॥

बाह्ये तरोपाधि-समग्रतेयं, कार्येषु ते द्रव्यगतः स्वभावः।
नैवाऽन्यथा मोक्ष विधिश्च पुंसां, तेनाऽभिवन्द्यस्-त्वमृषिर्-बुधानाम्॥५॥

॥ ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय नमो नमः॥

अथ श्री विमलनाथ जिन स्तवनम्

(वंशस्थ छंद:)

य एव नित्य-क्षणिकाऽऽदयो नया, मिथोऽनपेक्षाः स्व-पर-प्रणाशिनः।
त एव तत्त्वं विमलस्य ते मुनेः, परस्परेक्षाः स्व-परोपकारिणः॥१॥

यथैकशः कारक-मर्थ-सिद्धये समीक्ष्य शेषं स्व-सहाय-कारकम्।
तथैव सामान्य-विशेष-मातृका, नयास्तवेष्टा गुण-मुख्य-कल्पतः॥२॥

परस्परेक्षाऽन्वय भेद लिंगतः, प्रसिद्ध सामान्य विशेषयो स्तव।
समग्रताऽस्ति स्व-पराऽवभासकं, यथाप्रमाणं भुवि बुद्धि लक्षणम्॥३॥

विशेष्य वाच्यस्य विशेषणं वचो, यतो विशेष्यं विनियम्यते च यत्।
तयोश्च सामान्य मति प्रसज्यते, विवक्षितात् स्यादिति तेऽन्य-वर्जनम्।४।

नया-स्तव स्यात्पद-सत्य-लाञ्छिता, रसो-पविद्धा इव लोह-धातवः।
भवन्त्-यभिप्रेत गुणा यतस्ततो, भवन्तमार्याः प्रणता हितैषिणः॥५॥

॥ ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय नमो नमः॥

अथ श्री अनन्तनाथ जिन स्तवनम्

(वंशस्थ छंदः)

अनन्त-दोषाऽशय-विग्रहो ग्रहो, विषङ्गवान् मोह-मयश्चिरं हृदि।
यतो जितस्तत्त्व रुचौ प्रसीदता, त्वया ततोऽभूर-भगवा-ननन्तजित्॥१॥

कषाय-नाम्नां द्विषतां प्रमाथिना- मषेष-यन्नाम भवान शेषवित्।
विशोषणं मन्मथ-दुर्मदाऽऽमयं, समाधि भैषज्य-गुणैर्-व्यलीनयत्॥२॥

परिश्रमाऽम्बुर्-भय-वीचि-मालिनी, त्वया स्व-तृष्णा-सरिदाऽऽर्य ! शोषिता।
असंङ्ग-घर्माऽर्क-गभस्ति-तेजसा, परं ततो निर्वृति-धाम तावकम्॥३॥

सुहृत् त्वयि श्रीसुभगत्व-मश्नुते, द्विषस्त्वयि प्रत्ययवत् प्रलीयते।
भवानुदासीन तमस्तयोरपि, प्रभो! परं चित्रमिदं तवेहितम्॥४॥

त्वमीदृशस्-तादृश इत्ययं मम, प्रलाप-लेशोऽल्प मतेर्-महामुने !
अशेष-माहात्म्य-मनीर-यन्नपि, शिवाय संस्पर्श इवाऽमृताम्बुधेः॥५॥

॥ ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय नमो नमः॥

अथ श्री धर्मनाथ जिन स्तवनम्

(रथोद्धता छंद:)

धर्मतीर्थ-मनघं प्रवर्तयन्, धर्म इत्यनुमतः सतां भवान्।
कर्म-कक्ष-मदहत्-तपोऽग्निभिः, शर्म शाश्वत-मवाप शंकरः॥१॥

देव-मानव-निकाय-सत्तमै, रेजिषे परिवृतो वृतो बुधैः।
तारका-परिवृतोऽति पुष्कलो, व्योमनीव शश-लाञ्छनोऽमलः॥२॥

प्रातिहार्य-विभवैः परिष्कृतो, देहतोऽपि विरतो भवाऽनभूत्।
मोक्षमार्ग-मशिषन् नराऽमरान्, नापि शासन-फलैषणाऽऽतुरः॥३॥

काय-वाक्य-मनसां प्रवृत्तयो, नाऽभवंस्तव मुनेश्-चिकीर्षया।
नाऽसमीक्ष्य भवतः प्रवृत्तयो, धीर! तावक-मचिन्त्य-मीहितम्॥४॥

मानुषीं प्रकृति-मभ्यतीतवान्, देवतास्वपि च देवता यतः।
तेन नाथ ! परमाऽसि देवता, श्रेयसे जिनवृष ! प्रसीद नः॥५॥

॥ ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय नमो नमः॥

अथ श्री शांतिनाथ जिन स्तवनम्

(उपजाति छंद:)

विधाय रक्षां परतः प्रजानां, राजाचिरं योऽप्रतिम-प्रतापः।
व्यधात् पुरस्तात्-स्वत एव शांतिर्, मुनिर्दया मूर्ति रिवाऽघ-शांतिम्॥१॥

चक्रेण यः शत्रु भयंकरेण, जित्त्वा नृपः सर्व-नरेन्द्र-चक्रम्।
समाधि-चक्रेण पुनर्जिगाय, महोदयो दुर्जय-मोह-चक्रम्॥२॥

राज-श्रिया राजसु राज-सिंहो-रराज यो राज-सुभोग-तंत्रः।
आर्हन्त्य-लक्ष्म्या पुनरात्म-तन्त्रो, देवाऽसुरोदार-सभे-रराज॥३॥

यस्मिन्-नभूद्राजनि राज-चक्रं, मुनौदया-दीधिति धर्म-चक्रम्।
पूज्ये मुहुः प्राञ्जलि देव-चक्रं, ध्यानोन्मुखे ध्वंसि कृतान्त-चक्रम्॥४॥

स्व-दोष-शान्त्या विहितात्म-शांतिः, शान्तेर्विधाता शरणं गतानाम्।
भूयाद् भव-क्लेश-भयोपशान्त्यै, शांतिर्जिनो मे भगवन् शरण्यः॥५॥

॥ ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय नमो नमः॥

अथ श्री कुन्थुनाथ जिन स्तवनम्

(बसंततिलका छंद:)

कुन्थु-प्रभृत्-यखिल-सत्व-दयैक-तानः, कुन्थुर्जिनो ज्वर-जरा-मरणोपशान्त्यै।
त्वं धर्म चक्रमिह वर्त-यसिस्म भूत्यै, भूत्त्वा पुरा क्षिति-पतीश्वर-चक्रपाणिः॥१॥

तृष्णार्चिषः परिदहन्ति न शान्तिरासा- मिष्टेन्द्रियार्थ-विभवैः परिवृद्धि-रेव।
स्थित्यैव काय-परिताप-हरं निमित्त, मित्यात्मवान् विषय-सौख्य-पराङ्मुखोऽभूत॥२॥

बाह्यं तपः परम-दुश्चर-माचरंस्-त्व- माध्यात्मिकस्य तपसः परिबृंहणार्थम्।
ध्यानं निरस्य कलुष-द्वय-मुत्-तरेस्मिन्, ध्यान-द्वये ववृतिषेऽतिशयोपपन्ने॥३॥

हुत्त्वा स्व-कर्म-कटुक प्रकृतीश्चतस्रो, रत्नत्रयाऽतिशय-तेजसि जात-वीर्यः।
बभ्राजिषे सकल-वेद-विधेर्विनेता, व्यभ्रे यथा वियति दीप्त-रुचिर्विवस्वान्॥४॥

यस्मान् मुनीन्द्र ! तव लोकपिता मह्यद्या, विद्या-विभूति-कणिका-मपिनाऽऽप्नुवन्ति।
तस्माद् भवन्त-मजम-प्रतिमेय-मार्याः, स्तुत्यं स्तुवन्ति सुधियः स्व-हितैकतानाः॥५॥

॥ ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथ जिनेन्द्राय नमो नमः॥

अथ श्री भगवदर जिन स्तवनम्

(पथ्या–वक्त्रं–छंदः)

गुण-स्तोकं सदुल्लङ्घ्य-तद्बहुत्व-कथा स्तुतिः।
आनन्त्यात् ते गुणा वक्तु-मशक्यास्-त्वयि सा कथम्॥१॥

तथापि ते मुनीन्द्रस्य यतो नामापि कीर्तितम्।
पुनाति पुण्य कीर्तेर्-नस्-ततो ब्रूयाम किञ्चन॥२॥

लक्ष्मी-विभव-सर्वस्वं - मुमुक्षोश्-चक्र-लाञ्छनम्।
साम्राज्यं सार्वभौमं ते जर-त्तृण-मिवाऽभवत्॥३॥

तव रूपस्य सौन्दर्यं दृष्ट्वा तृप्तिमनापिवान्।
द्वयक्षः शक्रः सहस्राक्षो बभूव बहुविस्मयः॥४॥

मोहरूपो रिपुः पापः कषाय - भट - साधनः।
दृष्टि-संपदुपेक्षास्-त्रैस्-त्वया धीर ! पराजितः॥५॥

कन्दर्पस्योद्धरो दर्पस्-त्रैलोक्य - विजयाऽर्जितः।
ह्रेपयामास तं धीरे त्वयि प्रति हतोदयः॥६॥

आयत्यां च तदात्वे च दुःख-यो निर्-दुरुत्तरा।
तृष्णा नदी त्वयोत्तीर्णा विद्या-नावा विविक्तया॥७॥
अन्तकः क्रन्दको नृणां जन्म-ज्वर-सखा सदा।
त्वा-मन्तकान्तकं प्राप्य व्यावृत्तः काम-कारतः॥८॥

भूषा-वेषाऽऽयुध-त्यागि विद्या-दम-दया-परम्।
रूपमेव तवाचष्टे धीर ! दोष-वि निग्रहम्॥९॥

समन्त-तोऽङ्ग - भासां ते परिवेषेण भूयसा।
तमो बाह्य-मपाकीर्ण-मध्यात्म ध्यान-तेजसा॥१०॥

सर्वज्ञ - ज्योतिषोद्भूत-स्तावको- महिमोदयः।
कं न कुर्यात् प्रणम्रं ते, सत्त्वं नाथ ! सचेतनम्॥११॥

तव वा-गमृतं श्रीमत् सर्वभाषा - स्वभावकम्।
प्रीणयत्-यमृतं यद्-वत् प्राणिनो व्यापि संसदि॥१२॥

अनेकान्तात्म-दृष्टिस्-ते सती शून्यो विपर्ययः।
ततः सर्वं मृषोक्तं स्यात् त-दयुक्तं स्व-घाततः॥१३॥

ये पर-स्खलितोन्निद्राः स्व - दोषेभ-निमीलिनः।
तपस्विनस्ते किं कुर्यु - रपात्रं त्वन्-मतश्रियः॥१४॥

ते तं स्व-घातिनं दोषं शमीकर्तु-मनीश्वराः।
त्वद्-द्विषः स्वहनो बालास्-तत्त्वाऽवक्तव्यतां श्रिताः॥१५॥
सदेक-नित्य-वक्तव्यास् तद् विपक्षाश्च ये नयाः।
सर्वथेति प्रदुष्यन्ति पुष्यन्ति स्या-दितीह ते॥१६॥
सर्वथा-नियम-त्यागी - यथादृष्ट-मपेक्षकः।
स्याच्छब्दस्-तावके न्याये, नाऽन्येषा-मात्म-विद्-विषाम्॥१७॥
अनेकान्तोऽप्यनेकान्तः प्रमाण - नय - साधनः।
अनेकान्तः प्रमाणात् ते तदेकान्तोऽर्पितान्-नयात्॥१८॥

(अपरवक्त्रं छंदः)

इति निरुपम-युक्ति-शासनः, प्रिय-हित-योग गुणाऽनुशासनः।
अरजिन! दम-तीर्थ-नायकस्, त्वमिव सतां प्रतिबोध नायकः॥१९॥

मतिगुण-विभवाऽनुरूपतस्, त्वयिवरदाऽऽगम-दृष्टि रूपतः।
गुण कृशमपि किञ्चनोदितं, मम भवताद् दुरिताऽसनोदितम्।२०।

॥ ॐ ह्रीं श्री भगवदर जिनेन्द्राय नमो नमः॥

अथ श्री मल्लिनाथ जिन स्तवनम्

(सान्द्रपदंछंद:) अथवा (श्रीछंद:) अथवा (वनवासिकाछंद:)

यस्य महर्षेः सकल-पदार्थ- प्रत्यव बोधः समजनि साक्षात्।
साऽमर-मर्त्यं जगदपि सर्वं, प्राञ्जलि भूत्त्वा प्रणिपतति स्म ॥१ ॥

यस्य च मूर्तिः कनकमयीव, स्वस्फुरदाऽऽभा-कृत-परिवेषा।
वागपि तत्त्वं कथयितु-कामा, स्यात्पद्-पूर्वा रमयति साधून् ॥२ ॥

यस्य पुरस्ताद् विगलित-माना, न प्रतितीर्थ्या भुवि विवदन्ते।
भूरपि रम्या प्रतिपदमासीज्-जात-विकोशाऽम्बुज-मृदु-हासा ॥३ ॥

यस्य समन्ताज्जिन-शिशिरांशोः, शिष्यक-साधु-ग्रह-विभवोऽभूत्।
तीर्थमपि स्वं जनन-समुद्र- त्रासित-सत्वोत्तरण-पथोऽग्रम् ॥४ ॥

यस्य च शुक्लं परम-तपोऽग्निर्, ध्यान-मनन्तं दुरित-मधाक्षीत्।
तं जिनसिंहं कृत करणीयं, मल्लि-मशल्यं शरण-मितोऽस्मि ॥५ ॥

॥ ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय नमो नमः॥

अथ श्री मुनिसुव्रतनाथ जिन स्तवनम्

(वैतालीय छंद:)

अधिगत-मुनि-सुव्रत-स्थितिर्, मुनि-वृषभो-मुनिसुव्रतोऽनघः।
मुनि परिषदि निर्बभौ भवा, नुडु-परिषत्परिवीत-सोमवत् ॥१ ॥

परिणत-शिखि-कण्ठ-रागया, कृत-मद-निग्रह-विग्रहाऽऽभया।
तव जिन ! तपसः प्रसूतया, ग्रह-परिवेष-रुचेव शोभितम्॥२॥

शशि-रुचि-शुचि-शुक्ल-लोहितं, सुरभि-तरं विरजो निजं वपुः।
तव शिवमऽति विस्मयं यते, यदपि च वाङ्मनसीय-मीहितम्॥३॥

स्थिति-जनन-निरोध-लक्षणं, चर-मचरं च जगत् प्रतिक्षणम्।
इति जिन ! सकलज्ञ-लाञ्छनं, वचन-मिदं वदतां वरस्य ते॥४॥

दुरित-मल-कलंक-मष्टकं, निरुपम-योगबलेन निर्दहन्,
अभव-दभव-सौख्यवान् भवान्, भवतु ममाऽपि भवोपशान्तये॥५॥

॥ ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय नमो नमः॥

अथ श्री नमिनाथ जिन स्तवनम्

(शिखरणी छंद:)

स्तुतिः स्तोतुः साधोः कुशल-परिणामाय स तदा।
भवेन्मा वा स्तुत्यः फल-मपि ततस्-तस्य च सतः।
किमेवं स्वाधीन्याज्-जगति सुलभे श्रायस-पथे,
स्तुयान्-नत्वां विद्वान् सतत-मभि पूज्यं नमि जिनम्॥१॥

त्वया धीमन् ! ब्रह्म-प्रणिधि मनसा जन्म निगलं,
समूलं निर्भिन्नं त्वमसि विदुषां मोक्ष पदवी।
त्वयि ज्ञान ज्योति-र्-विभव-किरणैर्भाति भगवन्,
नभूवन् खद्योता इव शुचिर-वावन्य मतयः॥२॥

विधेयं वार्यं चाऽनुभय-मुभयं मिश्रमपि तद्,
विशेषैः प्रत्येकं नियम विषयैश्-चाऽपरिमितैः।
सदाऽन्योऽन्यापेक्षैः सकल-भुवन-ज्येष्ठ गुरुणा,
त्वया गीतं तत्त्वं बहुनय विवक्षेतर-वशात्॥३॥

अहिंसा भूतानां जगति विदितं ब्रह्म परमं,
न सा तत्राऽऽरम्भोस्त्-यणुरपि च यत्राऽऽश्रमविधौ।
ततस्तत्-सिद्ध्यर्थं परम - करुणो ग्रंथ-मुभयं,
भवानेवाऽत्याक्षीन्-न च विकृत-वेषोपधि-रतः॥४॥

वपुर्-भूषा-वेष-व्यवधि-रहितं शांत-करणं,
यतस्ते संचेष्टे स्मर-शर-विषाऽऽतंक-विजयम्।
बिना भीमैः शस्त्रै-रदय हृदयाऽऽमर्ष-विलयं,
ततस्-त्वं निर्मोहः शरणमसि नः शांति निलयः॥५॥

॥ ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय नमो नमः॥

अथ श्री भगवदरिष्ट नेमि जिन स्तवनम्

(विषमजातावुग्दता छंदः)

भगवा-नृषिः परम-योग- दहन-हुत-कल्मषेन्धनः।
ज्ञान-विपुल-किरणैः सकलं, प्रतिबुद्ध-यबुद्ध-कमला-यतेक्षणः॥१॥

हरिवंश केतु - रनवद्य विनय - दम - तीर्थ - नायकः।
शील-जलधि-रभवो विभवस्-त्व-मरिष्ट-नेमि-जिन-कुञ्जरोऽजरः॥२॥

त्रिदशेन्द्र-मौलि-मणि-रत्न- किरण-विसरोपचुम्बितम्।
पाद-युगल-ममलं भवतो, विकसत्कुशेशय-दलाऽरुणोदरम्॥३॥

नख-चन्द्र-रश्मि-कवचाऽति, रुचिर-शिखराङ्गुलि-स्थलम्।
स्वार्थ-नियत-मनसःसुधियः, प्रणमन्ति मन्त्र-मुखरा-महर्षयः॥४॥

द्युतिमद्-रथांग - रवि - बिम्ब- किरण - जटिलांशु - मण्डलः।
नील-जलद-जलराशि-वपुः, सह बन्धुभिर्-गरुड केतुरीश्वरः॥५॥

हलभृच्च ते स्वजन भक्ति-, मुदित-हृदयौ जनेश्वरौ।
धर्म-विनय-रसिकौ सुतरां, चरणाऽरविन्द-युगलं प्रणेमतुः॥६॥

ककुदं भुवः खचर-योषि, दुषित-शिखरै-रलङ्कृतः।
मेघ-पटल-परिवीत-तट- स्तव, लक्षणानि लिखितानि वज्रिणा॥७॥

वहतीति तीर्थ-मृषिभिश्च, सतत - मभिगम्यतेऽद्य च।
प्रीति-वितत-हृदयैः परितो, भृश-मूर्जयन्त इति विश्रुतोऽचलः॥८॥

बहिरन्त-रप्युभयथा च, करण मविघाति नार्थकृत्।
नाथ ! युगप-दखिलं च सदा, त्वमिदं तलाऽमलकवद् विवेदिथ॥९॥

अत एव ते बुधनुतस्य, चरित-गुण-मद्भुतोदयं।
न्याय-विहित-मवधार्य जिने, त्वयि सुप्रसन्न-मनसः स्थिता वयम्॥१०॥

॥ ॐ ह्रीं श्री भगवदरिष्ट नेमि जिनेन्द्राय नमो नमः॥

अथ श्री पार्श्वनाथ जिन स्तवनम्

(वंशस्थ छंद:)

तमाल-नीलैः सधनुस्-तडिद्गुणैः, प्रकीर्ण-भीमाऽशनि-वायु-वृष्टिभिः।
बलाहकैर्-वैरि-वशैरुपद्रुतो, महामना यो न चचाल योगतः ॥१॥

बृहत्फणा-मण्डल-मण्डपेन यं, स्फुरत्-तडित्पिंग - रुचोपसर्गिणम्।
जुगूह नागो धरणो धराधरं, विराग-संध्या-तडिदम्बुदो यथा ॥२॥

स्व-योग-निस्त्रिंश-निशात-धारया, निशात्य यो दुर्जय-मोह-विद्-विषम्।
अवापदाऽर्हन्त्यमचिन्त्य-मद्भुतं, त्रिलोक-पूजाऽतिशयाऽऽस्पदं पदम्॥३॥

यमीश्वरं वीक्ष्य विधूत-कल्मषं, तपोधनास्तेऽपि तथा बुभूषवः।
वनौकसः स्व-श्रम-वन्ध्य-बुद्धयः, शमोपदेशं शरणं प्रपेदिरे ॥४॥

स सत्यविद्या तपसां प्रणायकः, समग्र धीरुग्र कुलाम्ब-रांशुमान्।
मया सदा पार्श्वजिनः प्रणम्यते, विलीन-मिथ्या-पथ-दृष्टि-विभ्रमः ॥५॥

॥ ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमो नमः॥

अथ श्री वीर जिन स्तवनम्

(स्कन्धक छंद: अथवा आर्यागीति छंद:)

कीर्त्या भुवि भासि तया, वीर ! त्वं गुण समुच्छ्रया भासि तया।
भासोडु-सभाऽऽसि तया, सोम इव व्योम्नि कुन्द-शोभाऽसि तया॥१॥

तव जिन ! शासन-विभवो, जयति कलावपि गुणानुशासन विभवः।
दोष-कशाऽसन-विभवः, स्तुवन्ति चैनं प्रभाऽऽकृशाऽऽसन-विभवः॥२॥

अनवद्यः स्याद्वाद स्तव, दृष्टेष्टाऽविरोधतः स्याद्वादः।
इतरो न स्याद्वादो, स द्वितय-विरोधान् मुनीश्वराऽस्याद्वादः॥३॥

त्वमसि सुराऽसुर-महितो, ग्रंथिक-सत्त्वाऽऽशय-प्रणामाऽऽमहितः।
लोकत्रय-परम-हितो-ऽनावरण ज्योति रुज्ज्वलद्धाम-हितः॥४॥

सभ्याना-मभिरुचितं, दधासि गुण-भूषणं श्रिया-चाऽरुचितम्।
मग्नं स्वस्यां रुचितं, जयसि च मृगलाञ्छनं स्व-कान्त्या रुचितम्॥५॥

त्वं जिन ! गत-मद-माय-स्तव भावानां मुमुक्षु कामद-मायः।
श्रेयान् श्रीमद्-मायस्-त्वया समादेशि सप्रया-मदमाऽऽयः॥६॥

गिरि भित्त्यऽवदानवतः, श्रीमत इव दन्तिनः स्त्रवद्-दानवतः।
तव शमवाऽदानऽवतो, गतमूर्जित-मपगत-प्रमा-दान-वतः॥७॥

बहु-गुण सम्पदऽसकलं, परमत-मपि-मधुर-वचन-विन्याऽसकलम्।
नय भक्त्यवतं सकलं, तव देव ! मतं समन्तभद्रं सकलम्॥८॥

॥ ॐ ह्रीं श्री वीरनाथ जिनेन्द्राय नमो नमः॥

। इति श्री समन्तभद्राचार्य विरचित स्वयंभूस्तोत्रम्।

तीर्थंकर वन्दना

चतुर्विंशति तीर्थेशं, स्तुति कृत्त्वा सुभक्तितः
'विशद' त्रय योगेन, भक्तिं अर्हंत गुणार्णवम्।।

(इन्द्रवज्रा छन्दः)

श्रीनाभिपुत्रैर्-भुवनैक सूर्यः, श्री धर्मतीर्थस्थ प्रर्वतको यः।
भव्यैकबंधुर्-जगदेकनाथः, तमादिनाथं प्रणमामि णिच्चं।।१।।

जयत्यनन्ता प्रमित प्रबोधः, प्रद्योत विद्योतित विश्वतत्त्वः।
प्रत्यस्त कर्मोरुतमः प्रतानः, प्रोद्वुद्ध भव्याब्ज वनाऽजितेन।।२।।

अष्टादशोक्तैर् रहितस्तु दोषैः, मोक्षोपदेष्टा हित वीतरागः।
सर्वज्ञ संभ्रान्त विशुद्ध देही, संभव जिनेन्द्र परिभूस्-त्रि रत्नः।।३।।

वन्दे मुदाश्रीश जिनाभिनंदनं, शाश्वत पदा नम्र सुखाभिनंदनं।
तपः स्फुरद्वह्नि निमग्न मन्मथं, विनेय संदर्शित मुक्ति सत्पथम्।।४।।

घातीय कर्माणि चतुर्विधानि, विनाश्य लोकाऽलोकं निरीक्षते।
अर्हन परात्मा सकलस्तु ज्ञेयः, सुमति जिनेन्द्रं परिपूज्यामि।।५।।

यत्कांत कांतिकुमुदं वितन्वती, तनोन्पलं यत कमलोत्सवंनवः।
निरस्तदोषाऽभ्युदयाक्षय श्रियं, क्रियात्स पद्म प्रभदेव! वल्लभः।।६।।

श्री मांस्त्रिलोक्या कृतपाद सेवो, यः सर्व सत्वामृत दिव्यरावः।
स्तादिष्टदुः सोऽनुपम प्रभावः, सुपार्श्व देवो भव कक्षदावः।।७।।

चन्द्रप्रभं नौमि यदीय भाषा, नूनं जिता चन्द्रमसी प्रभासा।
नो चेत् कथंतर्हि तदंघ्रि लग्नं, नखच्छलादिन्दु कुटंब-मासीता।।८।।

श्रियं त्रिलोकीपति पुष्पदंतः, पुष्यादनन्तः प्रिय मुक्तिकान्तः।
दुरन्त मिथ्यात्व तमस्तमोरैर्, जिनो मनोज-द्विरद द्विपारि।।९।।

दुरक्षरक्षोदधि एवं धात्र्यां, मुहुर्मुहुर्धुष्ट ललाट पट्टां।
यं स्वर्गिणोऽनल्प गुणं, प्रणेमुः तनोतु नः शर्मस शीतलेशं।।१०।।

श्रेयः श्रिया मंगल केलि सद्म, नरेन्द्र देवेन्द्र नताङ्घ्रि पद्म।
सर्वज्ञ सर्वातिशय प्रधानः, चिरंजय ज्ञान कला निधाना।।११।।

श्री वासुपूज्यः स्व परात्म विज्ञः, श्रेणीं श्रिता स्वात्मज शुक्ल योगे।
घाति निहत्वा जगदेक सूर्यः, कैवल्य माप्नोत तमहं स्तवीमि।।१२।।

श्रियंममैनस् तिमिर क्षयोज्ज्वलां, सन्मार्गगः श्री विमलः क्रियात्सदा।
जिनो निजानंत वरैर् गुणोत्करैर्, विराजमानो जनताब्जभास्कर।।१३।।

श्रियः श्रियः संगत विश्व रूपः, सुदर्शनच्छिन्न परावलेप।
दद्यादनंतः प्रणता मरेन्द्रो, रमां ममाद्य परमां जिनेन्द्र।।१४।।

सद्वंशजः पेशल विश्व शीलः श्लिष्टोगुणैः पुष्टतरैर्विशिष्टै।
दुरन्त दुष्कर्म हरः कृतार्थो, धर्मो जिन स्ताद्वि जय श्रियेनः।।१५।।

कल्याण कल्प द्रुमसारभूतं, चितामणिं चिन्तित दान दक्षम्।
श्री शांतिनाथस्य सुपाद पद्मं, नमामि भक्त्या परयामुदा च।।१६।।

नमोस्तु तस्मै श्री कुन्थु नाथाय, साक्षात्कृत-न्यक्ष चराऽचरो यः।
वृतानि सत्वैक हितानि यस्य, सन्तिक्रम प्रह्व जगत्त्रयस्य।।
श्रीमान् जिनः संभृत धर्म चक्रः, श्रुतैर्युतः सार गुणै-रवक्रः
मनोरथाप्त्यैः हत चक्रि चक्रो, भूयाद-दरः पालितधर्म चक्रः ।।१८।।

ज्ञानं यदीयं विगतोपमानं, सर्वंयदन्तः परमाणुर्- खवम्
पायात्स सर्वावृत्तिजादपायान्, नाथस्त्रिलौक्यवरमल्लिनाथः ।।१९।।

श्रीमान् सुमित्रा सुत ईश वन्द्यो, भूयात् विभूत्यै मुनिसुव्रतो नः।
सद्धर्म सम्भूति नरेन्द्र पूज्यो भिन्नेन्द्र नीलोल्लसदंग कान्तिः ।।२०।।

नमिर्वर श्रीः प्रणयैक भूमिर्-जिनः सः न पातु दयानिधानः।
अलं गलत्-यर्जित कर्म जालं, यस्ये क्षणान् मंक्षु महोदयस्य ।।२१।।

सेन्दः नरेन्द्राश्च तथा फणीन्द्राः नत्त्वा जिनेन्द्रं गणिनं च भक्त्या।
तत्रस्थिता धर्मसुधापिवन्तः, संतर्पितास्तानुपदिश्य नेमिः ।।२२।।

जरा जरत्यास्मरणीयमी स्वरं, स्वयंवरीभूत मन स्वर श्रियः।
निरामयः वीतभयं भवच्छिदं, नमामि पार्श्वंनृसुरासुरैः स्तुतम्।।२३।।

स्वराज्य कत्रे शिव सौख्य भोत्रे, मोक्ष प्रदात्रे भव बीज हन्त्रे।
वीरस्य भब्याम्बुज भास्कराय, त्वत् सौख्य लाभाय नमोस्तु तुभ्यं।।२४।।

विहाय नूनं तृण वत्स्व संपदं, अर्हत् मुनिर्व्रतै-र्योऽभवदत्र सुव्रतः।
जगाम तद्धाम विराम वर्जितं, सुबोध दृङ् मे स जिनः प्रसीदतु।।२५।।

*****

नवदेव रक्षा स्तोत्रम्

(अनुष्टुप छन्दः)

ॐ ह्रीं श्री अर्हन् सिद्ध, आचार्योपाध्याय साधवः।
जिन धर्म जिनागमे, चैत्य चैत्यालये नमः।।१।।

एषां नव देवताभ्यः, सर्व पाप क्षयं करः।
मंगलानां च सर्वेषां, प्रथमं मंगलं मताः।।२।।

ॐ णमो अरहंताणं, शीर्ष रक्षा कुरु मम्।
ॐ णमो श्री सिद्धाणं, भाल रक्षा कुरुस्तथा।।३।।

ॐ णमो आयरियाणं, हृदय रक्षा कारकः।
ॐ णमो उवज्झायाणं, उदर स्थान रक्षकः।।४।।

ॐ णमो लोए सव्वसाहूणं, रक्षकः हस्तपादयो।
'विशद' जैन धर्मः स्यात्, सर्व दिश संरक्षकः।।५।।

जैनागमः ज्ञान सूर्यः, विद्या बुद्धि विशारदः।
ॐ ह्रीं श्री जिन चैत्यं स्यात्, सर्व देहेषु रक्षकः।।६।।

चैत्यालयेभ्यः प्रमुखः, सर्व संरक्षकस्तथा।
सर्व रक्षाकर स्तोत्र, आधि-व्याधि विनाशकाः।।७।।

नव देव रक्षा स्तोत्रं, तीर्थ नाथेन भाषितः।
दुष्ट मुच्याटयेत् सद्यः, श्रेय सिद्धि प्रदायकाः।।८।।

जाप - ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधु जिनधर्म जिनागम, जिन चैत्यालयभ्यो नमः।

अथ श्री जिनसहस्रनाम स्तोत्रम्

(भगवज्जिनसेनाचार्य कृत)

(अनुष्टुप छन्दः)

स्वयंभुवे नमस्तुभ्य-मुत्पाद्याऽत्मान-मात्मनि।
स्वात्मनैव तथोद्भूत-वृत्तयेऽचिन्त्य वृत्तये॥१॥

नमस्ते जगतां पत्ये, लक्ष्मीभर्त्रे नमोऽस्तु ते।
विदांवर नमस्तुभ्यं, नमस्ते वदतांवर॥२॥

कामशत्रुहणं देव! - मामनन्ति मनीषिणः।
त्वामानमन्-सुरेणमौलि-भा-मालाऽभ्यर्चित क्रमम्॥३॥

ध्यान-द्रुघण-निर्भिन्न, घन घाति महातरुः।
अनन्त-भव-सन्तान, जयादासी-दनन्तजित्॥४॥

त्रैलोक्य-निर्जयावाप्त-दुर्दर्प-मति-दुर्जयम्।
मृत्युराजं विजित्यासीज्, जिन ! मृत्युंजयो भवान्॥५॥

विधूताशेष-संसार-बन्धनो भव्यबान्धवः।
त्रिपुराऽरिस्-त्वमेवासि, जन्म मृत्यु-जराऽन्तकृत॥६॥

त्रिकाल-विषयाऽशेष-तत्त्व भेदात् त्रिधोत्थितम्।
केवलाख्यं दधच्चक्षुस्, त्रिनेत्रोऽसि त्वमीशितः॥७॥

त्वामन्धकाऽन्तकं प्राहुर्,- मोहान्धाऽसुर-मर्दनात्
अर्द्धंते नारयो यस्मा-दर्धनारीश्वरोऽस्यतः ॥८॥

शिवः शिवपदाऽध्यासाद्, दुरिताऽरि-हरो हरः।
शंकरः कृतशं लोके, संभवस्-त्वं भवं-सुखे॥९॥

वृषभोऽसि जगज्ज्येष्ठः पुरुः पुरु गुणोदयैः।
नाभेयो नाभि-सम्भूते-रिक्ष्वाकु कुल-नन्दनः ॥१०॥

त्वमेकः पुरुषस्कन्धस्, त्वं द्वे लोकस्य लोचने
त्वं त्रिधा बुद्ध-सन्मार्गस्-त्रिज्ञस्-त्रिज्ञान-धारकः ॥११॥

चतुः शरण-मांगल्य-मूर्त्तिस्त्वं चतु-रस्त्रधीः।
पञ्च-ब्रह्ममयो देव!, पावनस्-त्वं पुनीहि माम् ॥१२॥

स्वर्गाऽवतारिणे तुभ्यं, सद्योजातात्मने नमः।
जन्माभिषेक वामाय, वामदेव नमोऽस्तु ते॥१३॥

सन्-निष्क्रान्ताऽवघोराय, पदं परम मीयुषे।
केवल ज्ञान-संसिद्धा-वीशानाय नमोऽस्तु ते॥१४॥

पुरस्तत्-पुरुषत्वेन विमुक्त पदभाजिने।
नमस्तत्-पुरुषाऽवस्थां भाविनीं तेऽद्य विभ्रते॥१५॥

ज्ञानावरण-निर्ह्रासान् नमस्तेऽनन्त चक्षुषे।
दर्शनावरणोच्-छेदान्, नमस्ते विश्व-दृश्वने॥१६॥

नमो दर्शनमोहघ्ने, क्षायिकाऽमलदृष्टये।
नमश्चारित्र मोहघ्ने, विरागाय महौजसे॥१७॥

नमस्तेऽनन्त वीर्याय, नमोऽनन्त सुखात्मने।
नमस्तेऽनन्त-लोकाय, लोकाऽलोक-विलोकिने॥१८॥

नमस्तेऽनन्तदानाय, नमस्तेऽनन्तलब्धये।
नमस्तेऽनंत भोगाय, नमोऽनन्तोपभोगिने॥१९॥

नमः परमयोगाय, नमस्तुभ्य-मयोनये
नमः परमपूताय, नमस्ते पर-मर्षये॥२०॥

नमः परम विद्याय, नमः पर-मतच्छिदे।
नमः परम-तत्त्वाय, नमस्ते परमात्मने॥२१॥

नमः परम-रूपाय, नमः परम-तेजसे।
नमः परम-मार्गाय, नमस्ते परमेष्ठिने॥२२॥

परमर्द्धिजुषे धाम्ने, परम ज्योतिषे नमः।
नमः पारेतमः प्राप्त-धाम्ने परतराऽऽत्मने॥२३॥

नमः क्षीणकलंकाय, क्षीणबन्ध! नमोऽस्तु ते।
नमस्ते क्षीण मोहाय, क्षीणदोषाय ते नमः॥२४॥

नमः सुगतये तुभ्यं, शोभनां गति मीयुषे।
नमस्तेऽतीन्द्रिय-ज्ञान, सुखायाऽनिन्द्रियाऽत्मने॥२५॥

काय-बन्धन-निर्मोक्षा-दकायाय नमोऽस्तुते।
नमस्तुभ्य-मयोगाय, योगिना-मधि योगिने॥२६॥

अवेदाय नमस्तुभ्य-मकषायाय ते नमः।
नमः परम-योगीन्द्र! वन्दिताङ्घ्रि द्वयाय-ते॥२७॥

नमः परम-विज्ञान ! नमः परम-संयम।
नमः परम-दृग्दृष्ट, परमार्थाय ते नमः॥२८॥

नमस्तुभ्य-मलेश्याय, शुक्ल लेश्यांशक-स्पृशे।
नमो भव्येतराऽवस्था-व्यतीताय विमोक्षिणे॥२९॥

संज्ञ्-यसंज्ञि-द्वयाऽवस्था-व्यतिरिक्ताऽमलात्मने।
नमस्ते वीतसंज्ञाय, नमः क्षायिकदृष्टये॥३०॥

अनाहाराय तृप्ताय, नमः परमभाजुषे।
व्यतीताऽशेष दोषाय, भवाब्धेः पारमीयुषे॥३१॥

अजराय नमस्तुभ्यं, नमस्ते वीतजन्मने
अमृत्यवे नमस्तुभ्य-मचलायाऽक्षरात्मने॥३२॥

अलमास्तां गुणस्तोत्र-मनन्ता-स्तावका गुणाः
त्वां नामस्मृति मात्रेण, पर्युपासिसिषा-महे॥३३॥

एवं स्तुत्वा जिनं देवं, भक्त्या परमया सुधीः।
पठेदष्टोत्तरं नाम्नां, सहस्त्रं पाप शान्तये॥३४॥

॥ इति प्रस्तावना ॥

प्रथम शतकः

प्रसिद्धाऽष्ट सहस्रेद्ध, लक्षणं त्वां गिरांपतिम्।
नाम्ना-मष्ट सहस्रेण, तोष्टुमोऽभीष्ट-सिद्धये॥१॥

श्रीमान् स्वयम्भूर्-वृषभः, शम्भवः शम्भु-रात्मभूः।
स्वयंप्रभः प्रभुर्-भोक्ता, विश्वभू-रपुनर्भवः॥२॥

विश्वात्मा विश्व लोकेशो, विश्वतश्चक्षु-रक्षरः।
विश्वविद् विश्वविद्येशो, विश्वयोनि-रनश्वरः॥३॥

विश्वदृश्वा विभुर्धाता, विश्वेशो विश्वलोचनः।
विश्वव्यापी विधिर्वेधाः, शाश्वतो विश्वतोमुखः॥४॥

विश्वकर्मा जगज्ज्येष्ठो, विश्वमूर्तिर्-जिनेश्वरः।
विश्वदृग् विश्वभूतेशो, विश्व ज्योति-रनीश्वरः॥५॥

जिनो जिष्णु-रमेयात्मा, विश्वरीशो जगत्पतिः
अनन्तजिद्-चिन्त्यात्मा, भव्य बन्धु-रऽबन्धनः॥६॥

युगादि पुरुषो ब्रह्मा, पञ्च ब्रह्ममयः शिवः
परः परतरः सूक्ष्मः, परमेष्ठी सनातनः॥७॥

स्वयं ज्योति-रजोऽजन्मा, ब्रह्मयोनि-रयोनिजः।
मोहारि विजयी जेता, धर्मचक्री दयाध्वजः॥८॥

प्रशान्तारि-रनन्तात्मा, योगी योगीश्वराऽर्चितः।
ब्रह्मविद् ब्रह्मतत्त्वज्ञो, ब्रह्मोद्या विद्यतीश्वरः॥९॥

शुद्धो बुद्धः प्रबुद्धात्मा, सिद्धार्थः सिद्धशासनः।
सिद्धः सिद्धान्तविद् ध्येयः, सिद्धसाध्यो जगद्धितः॥१०॥

सहिष्णु-रच्युतोऽनन्तः, प्रभविष्णुर्-भवोद्भवः।
प्रभूष्णु-रजरोऽजर्यो, भ्राजिष्णुर्-धीश्वरोऽव्ययः॥११॥

विभावसु-रसम्भूष्णुः, स्वयम्भूष्णुः पुरातनः।
परमात्मा परं ज्योतिस्, त्रिजगत्-परमेश्वरः॥१२॥

॥ ॐ ह्रीं श्री मदादिशत नाम धारकाय श्री जिनेन्द्राय नमः ॥१॥

द्वितीय शतकः

दिव्यभाषापतिर्-दिव्यः पूतवाक्पूत शासनः।
पूताऽत्मा परमज्योतिर्-धर्माध्यक्षो दमीश्वरः॥१॥

श्रीपतिर्-भगवानर्हन्-नरजा विरजाः शुचिः
तीर्थकृत् केवलीशानः पूजार्हः स्नातकोऽमलः॥२॥

अनन्तदीप्तिर्-ज्ञानात्मा, स्वयंबुद्धः प्रजापतिः।
मुक्तः शक्तो निराबाधो, निष्कलो भुवनेश्वरः॥३॥

निरञ्जनो जगज्ज्योतिर्-निरुक्तोक्तिर्-निरामयः।
अचलस्थिति-रक्षोभ्यः, कूटस्थः स्थाणु-रक्षयः॥४॥

अग्रणीर्-ग्रामणीर्नेता, प्रणेता न्यायशास्त्रकृत
शास्ता धर्मपतिर्-धर्म्यो, धर्मात्मा धर्मतीर्थकृत॥५॥

वृषध्वजो वृषाधीशो, वृषकेतुर्-वृषायुधः।
वृषो वृषपतिर्भर्त्ता, वृषभांको वृषोद्भवः॥६॥

हिरण्यनाभिर्-भूतात्मा, भूतभृद् भूत भावनः।
प्रभवो विभवो भास्वान्, भवो भावो भवान्तकः॥७॥

हिरण्यगर्भः श्रीगर्भः, प्रभू-तविभवोद्भवः।
स्वयंप्रभुः प्रभूतात्मा, भूतनाथो जगत्प्रभुः॥८॥

सर्वादिः सर्वदृक् सार्वः, सर्वज्ञः सर्वदर्शनः
सर्वात्मा सर्वलोकेशः, सर्ववित् सर्वलोकजित्॥९॥

सुगतिः सुश्रुतः सुश्रुत्, सुवाक् सूरिर्-बहुश्रुतः।
विश्रुतो विश्वतः पादो, विश्वशीर्षः शुचिश्रवाः॥१०॥

सहस्त्रशीर्षः क्षेत्रज्ञः, सहस्त्राक्षः सहस्त्रपात्।
भूत भव्य भवद्भर्ता, विश्वविद्या महेश्वरः॥११॥

॥ ॐ ह्रीं श्री दिव्यादिशत नमो नमः॥२॥

तृतिय शतकः

स्थविष्ठः स्थविरो ज्येष्ठः, पृष्ठः प्रेष्ठो वरिष्ठधीः।
स्थेष्ठो गरिष्ठो बंहिष्ठः, श्रेष्ठोऽणिष्ठो गरिष्ठगीः ॥१॥

विश्वभृद् विश्वसृड् विश्वेड्, विश्वभुग् विश्व नायकः।
विश्वाशीर्-विश्वरूपात्मा, विश्वजिद्-विजितान्तकः ॥२॥

विभवो विभयो वीरो, विशोको विजरो जरन्।
विरागो विरतोऽसंगो, विविक्तो वीत मत्सरः ॥३॥

विनेय जनताबन्धुर्, विलीनाऽशेष कल्मषः।
वियोगो योगविद् विद्वान, विधाता सुविधिः सुधीः ॥४॥

क्षान्तिभाक्-पृथ्वीमूर्तिः, शान्तिभाक् सलिलात्मकः।
वायुमूर्ति-रसंगात्मा - वह्नि - मूर्ति-रधर्मधृक् ॥५॥

सुयज्वा यजमानात्मा, सुत्त्वा सूत्रामपूजितः।
ऋत्विग्-यज्ञपतिर्यज्ञो, यज्ञांग-ममृतं हविः ॥६॥

व्योममूर्ति-रमूर्तात्मा, निर्लेपो निर्मलोऽचलः।
सोममूर्तिः सुसौम्यात्मा, सूर्यमूर्तिर्-महाप्रभः ॥७॥

मन्त्रविन्-मन्त्रकृन्-मन्त्री, मन्त्रमूर्ति-रनन्तगः।
स्वतन्त्रस्-तन्त्रकृत्-स्वान्तः, कृतान्तान्तः कृतान्तकृत् ॥८॥

कृती कृतार्थः सत्कृत्यः, कृतकृत्यः कृतक्रतुः।
नित्यो मृत्युञ्जयो मृत्यु-रमृतात्माऽमृतोद्भवः ॥९॥

ब्रह्मनिष्ठः परंब्रह्म, ब्रह्मात्मा ब्रह्मसम्भवः।
महाब्रह्मपतिर्-ब्रह्मेड्, महाब्रह्म-पदेश्वरः ॥१०॥
सुप्रसन्नः प्रसन्नात्मा, ज्ञान-धर्मदमप्रभुः।
प्रशमात्मा प्रशान्तात्मा, पुराण पुरुषोत्तमः ॥११॥

॥ ॐ ह्रीं श्री स्थविष्ठादिशत नमो नमः ॥३॥

चतुर्थ शतकः

महाऽशोक ध्वजोऽशोकः, कः स्त्रष्टा पद्मविष्टरः।
पद्मेशः पद्मसम्भूतिः, पद्मनाभि-रनुत्तरः ॥१॥
पद्मयोनिर्-जगद्योनि-रित्यः स्तुत्यः स्तुतीश्वरः।
स्तवनार्हो हृषीकेशो, जितजेयः कृतक्रियः ॥२॥
गणाधिपो गणज्येष्ठो, गण्यः पुण्यो गणाग्रणीः।
गुणाकरो गुणाम्भोधिर्-गुणज्ञो गुणनायकः ॥३॥
गुणादरी गुणोच्छेदी, निर्गुणः पुण्यगीर्गुणः।
शरण्यः पुण्यवाक्पूतो, वरेण्यः पुण्यनायकः ॥४॥
अगण्यः पुण्यधीर्-गुण्यः, पुण्यकृत्पुण्य शासनः।
धर्मारामो गुणग्रामः, पुण्याऽपुण्य-निरोधकः ॥५॥
पापापेतो विपापात्मा, विपाप्मा वीत कल्मषः।
निर्द्वन्द्वो निर्मदः शान्तो, निर्मोहो निरुपद्रवः ॥६॥

निर्निमेषो निराहारो, निष्क्रियो निरुपप्लवः।
निष्कलंको निरस्तैना, निर्धूतागा निरास्त्रवः॥७॥

विशालो विपुल ज्योति-रतुलोऽचिन्त्य वैभवः।
सुसंवृतः सुगुप्तात्मा, सुभृत् सुनय तत्त्ववित्॥८॥

एकविद्यो महाविद्यो, मुनिः परिवृढ़ः पतिः।
धीशो विद्यानिधिः साक्षी, विनेता विहतान्तकः॥९॥

पिता पितामहः पाता, पवित्रः पावनो गतिः।
त्राता भिषग्वरो वर्यो, वरदः परमः पुमान्॥१०॥

कविः पुराणपुरुषो, वर्षीयान्-वृषभः पुरुः।
प्रतिष्ठा प्रसवो हेतुर्-भुवनैक पितामहः॥११॥

॥ ॐ ह्रीं श्री महाशोकध्वजादिशत नमो नमः॥४॥

पञ्चम शतकः

श्रीवृक्ष-लक्षणः श्लक्ष्णो, लक्षण्यः शुभलक्षणः।
निरक्षः पुण्डरीकाक्षः, पुष्कलः पुष्करेक्षणः॥१॥

सिद्धिदः सिद्ध संकल्पः, सिद्धात्मा सिद्ध साधनः।
बुद्ध बोध्यो महाबोधिर्-वर्धमानो महर्द्धिकः॥२॥

वेदांगो वेदविद् वेद्यो, जातरूपो विदांवरः।
वेदवेद्यः स्वसंवेद्यो, विवेदो वदतांवरः॥३॥

अनादि निधनोऽव्यक्तो-व्यक्त-वाग्व्यक्त शासनः।
युगादिकृद् युगाधारो, युगादिर्-जगदादिजः॥४॥

अतीन्द्रोऽतीन्द्रियो धीन्द्रो, महेन्द्रोऽतीन्द्रियाऽर्थदृक्।
अनिन्द्रियोऽहमिन्द्राच्र्यो, महेन्द्र महितो महान्॥५॥

उद्भवः कारणं कर्त्ता, पारगो भवतारकः।
अगाह्यो गहनं गुह्यं, परार्घ्यः परमेश्वरः॥६॥

अनन्तर्द्धि-रमेयर्द्धि-रचिन्त्यर्द्धिः समग्रधीः
प्राग्र्यः प्राग्रहरोऽभ्यग्रः, प्रत्यग्रोऽग्र्योऽग्रिमोऽग्रजः॥७॥

महातपा महातेजा, महोदर्को महोदयः।
महायशा महाधामा, महासत्त्वो महाधृतिः॥८॥

महाधैर्यो महावीर्यो, महासंपन्न महाबलः।
महाशक्तिर्-महाज्योतिर्-महाभूतिर्-महाद्युतिः॥९॥

महामतिर्-महानीतिर्-महाक्षान्तिर्-महादयः।
महाप्राज्ञो महाभागो, महानन्दो महाकविः॥१०॥

महामहा महाकीर्तिर्-महाकान्तिर्-महावपुः।
महादानो महाज्ञानो, महायोगो महागुणः॥११॥

महामहपतिः प्राप्त, महाकल्याण पञ्चकः।
महाप्रभुर्-महाप्रातिहार्-र्याधीशो महेश्वरः॥१२॥

॥ ॐ ह्रीं श्री श्री वृक्षादिशत नमो नमः॥५॥

षष्टम शतकः

महामुनिर्-महामौनी, महाध्यानी महादमः।
महाक्षमो महाशीलो, महायज्ञो महामखः॥१॥

महाव्रतपतिर्-मह्यो, महाकान्ति धरोऽधिपः।
महामैत्री मयोऽमेयो, महोऽपायो महोमयः॥२॥

महाकारुणिको मन्ता, महामन्त्रो महायतिः।
महानादो महाघोषो, महेज्यो महसांपतिः॥३॥

महाध्वर धरो धुर्य्यो, महौदार्यो महिष्ठ वाक्।
महात्मा महसांधाम, महर्षिर्-महितोदयः॥४॥

महाक्लेशांऽकुशः शूरो, महाभूतपतिर्-गुरुः।
महापराक्रमोऽनन्तो, महाक्रोधरिपुर्-वशी॥५॥

महाभवाब्धि संतारीर्-महामोहाऽद्रिसूदनः।
महागुणाकरः क्षान्तो, महायोगीश्वरः शमी॥६॥

महाध्यानपतिर्-ध्याता, महाधर्मा महाव्रतः।
महाकर्मारिहाऽऽत्मज्ञो, महादेवो! महेशिता॥७॥

सर्वक्लेशाऽपहः साधुः, सर्वदोषहरो हरः।
असंख्येयोऽप्रमेयात्मा, शमात्मा प्रशमाकरः॥८॥

सर्वयोगीश्वरोऽचिन्त्यः, श्रुतात्मा विष्टरश्रवाः।
दान्तात्मा दमतीर्थेशो, योगात्मा ज्ञानसर्वगः ॥९॥

प्रधानमाऽत्मा प्रकृतिः, परमः परमोदयः।
प्रक्षीणबन्धः कामारिः, क्षेम कृत्क्षेम शासनः ॥१०॥

प्रणवः प्रणयः प्राणः, प्राणदः प्रणतेश्वरः।
प्रमाणं प्राणिधिर्-दक्षो दक्षिणोऽध्वर्यु-रध्वरः ॥११॥

आनन्दो नन्दनो नन्दो, वन्द्योऽनिन्द्योऽभिनन्दनः।
कामहा कामदः काम्यः, कामधेनु-ररिञ्जयः ॥१२॥

॥ ॐ ह्रीं श्री महामुन्यादिशत नमो नमः ॥६॥

सप्तम शतकः

असंस्कृत सुसंस्कारः, प्राकृतो वैकृतान्तकृत्।
अन्तकृत्कान्तगुः कान्तश्-चिन्तामणि-रभीष्टदः ॥१॥

अजितो जितकामारि-रमितोऽमित शासनः।
जितक्रोधो जिताऽमित्रो, जितक्लेशो जितान्तकः ॥२॥

जिनेन्द्रः! परमानन्दो, मुनीन्द्रो! दुन्दुभिस्वनः।
महेन्द्रवन्द्यो! योगीन्द्रो, यतीन्द्रो! नाभिनन्दनः ॥३॥

नाभेयो नाभिजोऽजातः, सुव्रतो मनुरुत्तमः।
अभेद्योऽनत्ययोऽनाश्वा-नधिकोऽधिगुरुः सुधी ॥४॥

सुमेधा विक्रमी स्वामी, दुराधर्षो निरुत्सुकः।
विशिष्टः शिष्ट्भुक्शिष्टः, प्रत्ययः कामनोऽनघः ॥५ ॥

क्षेमी क्षेमंकरोऽक्षय्यः, क्षेमधर्मपतिः क्षमी।
अग्राह्यो ज्ञान-निग्राह्यो, ध्यान गम्योनिरुत्तरः ॥६ ॥

सुकृती धातुरिज्यार्हः, सुनयश्-चतुराननः।
श्रीनिवासश्-चतुर्वक्त्रश्-चतुरास्यश्-चतुर्मुखः ॥७ ॥

सत्यात्मा सत्यविज्ञानः, सत्यवाक्-सत्यशासनः।
सत्याशीः सत्य सन्धानः, सत्यः सत्य परायणः ॥८ ॥

स्थेयान्-स्थवीयान्-नेदीयान्-दवीयान् दूरदर्शनः।
अणो-रणीयान-नणुर्-गुरुराद्यो गरीयसाम् ॥९ ॥

सदायोगः सदाभोगः, सदातृप्तः सदाशिवः।
सदागतिः सदासौख्यः, सदाविद्यः सदोदयः ॥१० ॥

सुघोषः सुमुखः सौम्यः, सुखदः सुहितः सुहृत।
सुगुप्तो गुप्तिभृद् गोप्ता, लोकाध्यक्षो दमीश्वरः ॥११ ॥

॥ ॐ ह्रीं श्री असंस्कृतादिशत नमो नमः ॥७ ॥

अष्टम शतकः

बृहन्-बृहस्पतिर्-वाग्मी, वाचस्पति रुदारधीः।
मनीषी धिषणो धीमाञ्-छेमुषीशो गिरांपतिः॥१॥

नैकरूपो नयोत्तुंगो, नैकात्मा नैकधर्मकृत्।
अविज्ञेयोऽप्रतर्क्यात्मा, कृतज्ञः कृतलक्षणः॥२॥

ज्ञानगर्भो दयागर्भो, रत्नगर्भः प्रभास्वरः।
पद्मगर्भो जगद्गर्भो, हेमगर्भः सुदर्शनः॥३॥

लक्ष्मीवांस्-त्रिदशाध्यक्षो, दृढ़ीयानिन ईशिता।
मनोहारो मनोज्ञांगो, धीरो गम्भीर शासनः॥४॥

धर्मयूपो दयायागो, धर्मनेमिर्-मुनीश्वरः।
धर्मचक्रायुधो देवः!, कर्महा धर्मघोषणः॥५॥

अमोघवागमोघाज्ञो, निर्मलोऽमोघशासनः।
सुरूपः सुभगस्-त्यागी, समयज्ञः समाहितः॥६॥

सुस्थितः स्वास्थ्यभाक्-स्वस्थो ,नीरजस्को निरुद्धवः।
अलेपो निष्कलंकात्मा, वीतरागो गतस्पृहः॥७॥

वश्येन्द्रियो विमुक्तात्मा, निःसपत्नो जितेन्द्रियः।
प्रशान्तोऽनन्तधामर्षिर्-मंगलं मलहानघः॥८॥

अनीदृ-गुपमाभूतो, दिष्टिर्-दैव-मगोचरः।
अमूर्तो मूर्तिमानेको, नैको नानैक-तत्त्वदृक्॥९॥

अध्यात्मगम्योऽगम्यात्मा, योगविद्योगि वन्दितः।
सर्वत्रगः सदाभावी, त्रिकाल विषयार्थदृक्॥१०॥
शंकरः शंवदो दान्तो, दमी क्षान्ति परायणः।
अधिपः परमानन्दः, परात्मज्ञः परात्परः॥११॥
त्रिजगद्-वल्लभोऽभ्यर्च्यस्-त्रिजगन्-मंगलोदयः।
त्रिजगत्पतिपूज्याङ्घ्रिस्-त्रिलोकाग्र शिखामणिः॥१२॥

॥ ॐ ह्रीं श्री बृहदादिशत नमो नमः॥८॥

नवम शतकः

त्रिकालदर्शी लोकेशो, लोकधाता दृढ़व्रतः
सर्वलोकातिगः पूज्यः, सर्वलोकैक सारथिः॥१॥
पुराणः पुरुषः पूर्वः, कृतपूर्वांग विस्तरः।
आदिदेवः पुराणाद्यः, पुरुदेवोऽधिदेवता॥२॥
युगमुख्यो युगज्येष्ठो, युगादिस्थिति देशकः।
कल्याणवर्णः कल्याणः, कल्यः कल्याणलक्षणः॥३॥
कल्याण प्रकृतिर्-दीप्तै, कल्याणात्मा विकल्मषः।
विकलंकः कलातीतः, कलिलघ्नः कलाधरः॥४॥
देवदेवो! जगन्नाथो!, जगद्बन्धुर्-जगद्-विभुः।
जगद्धितैषी लोकज्ञः, सर्वगो जग-दग्रजः॥५॥
चराऽचर गुरुर्गोप्यो, गूढ़ात्मा गूढ़गोचरः।
सद्योजातः प्रकाशात्मा, ज्वलज्-ज्वलन सप्रभः॥६॥

आदित्यवर्णो भर्माभः, सुप्रभः कनकप्रभः।
सुवर्णवर्णो रुक्माभः, सूर्यकोटि समप्रभः ॥७॥

तपनीय निभस्तुंगो, बालार्काभोऽनलप्रभः।
सन्ध्याभ्रबभ्रुर्-हेमाभस्-तप्तचामीकरच्छविः ॥८॥

निष्टप्त कनकच्छायः, कनत्काञ्चन सन्निभः।
हिरण्यवर्णः स्वर्णाभः, शातकुम्भ-निभप्रभः ॥९॥

द्युम्नाभो जातरूपाभस्-तप्तजाम्बूनद द्युतिः।
सुधौतकलधौतश्रीः, प्रदीप्तो हाटकद्युतिः ॥१०॥

शिष्टेष्टः पुष्टिदः पुष्टः, स्पष्टः स्पष्टाक्षरः क्षमः।
शत्रुघ्नोऽप्रतिघोऽमोघः, प्रशास्ता शासिता स्वभूः ॥११॥

शान्तिनिष्ठो मुनिज्येष्ठः, शिवतातिः शिवप्रदः।
शान्तिप्रदः शान्तिकृच्छान्तिः ,कान्तिमान्-कामितप्रदः ॥१२॥

श्रेयोनिधि-रधिष्ठान-मप्रतिष्ठः प्रतिष्ठितः।
सुस्थिरः स्थावरः स्थाणु, प्रथीयान्प्रथितः पृथु ॥१३॥

॥ ॐ ह्रीं श्री त्रिकाल दर्श्यादिशत नमो नमः ॥९॥

दशम शतकः

दिग्वासा वातरशनो, निर्ग्रन्थेशो निरम्बरः।
निष्किञ्चिनो निराशंसो, ज्ञानचक्षु-रमोमुहः ॥१॥

तेजोराशि-रनन्तौज-ज्ञानाब्धिः शीलसागरः।
तेजोमयोऽमित ज्योतिर्-ज्योति मूर्तिस्-तमोपहः ॥२॥

जगच्चूडामणिर्-दीप्तः, शंवान्-विघ्नविनायकः।
कलिघ्नः कर्मशत्रुघ्नो लोकालोक-प्रकाशकः॥३॥

अनिद्रालु-रतन्द्रालुर्-जागरुकः प्रभामयः।
लक्ष्मीपतिर्-जगज्ज्योतिर्-धर्मराजः प्रजाहितः॥४॥

मुमुक्षुर्-बन्ध-मोक्षज्ञो, जिताक्षो जितमन्मथः।
प्रशान्त रसशैलूषो, भव्य पेटकनायकः॥५॥

मूलकर्त्ताऽखिलज्योतिर्-मलघ्नो मूलकारणः।
आप्तो वागीश्वरः श्रेयाञ्-छ्राय सोक्तिर्-निरुक्तवाक्॥६॥

प्रवक्ता वचसामीशो, मारजिद्-विश्वभावविद्।
सुतनुस्-तनुनिर्मुक्तः, सुगतो हतदुर्नयः॥७॥

श्रीशः श्रीश्रित पादाब्जो, वीतभी-रभयंकरः।
उत्सन्नदोषो निर्विघ्नो, निश्चलो लोकवत्सलः॥८॥

लोकोत्तरो लोकपतिर्-लोक चक्षु-रपारधीः।
धीरधीर्-बुद्धसन्मार्गः, शुद्धः सूनृतपूतवाक्॥९॥

प्रज्ञा पारमितः प्राज्ञो, यतिर्-नियमितेन्द्रियः।
भदन्तो भद्रकृद्भद्रः, कल्पवृक्षो वरप्रदः॥१०॥

समुन्मूलित कर्मारिः, कर्मकाष्ठाऽऽशुशुक्षणिः।
कर्मण्यः कर्मठः प्रांशुर्-हेयादेय विचक्षणः॥११॥

अनन्तशक्ति-रच्छेद्यस्-त्रिपुरारिस्-त्रिलोचनः।
त्रिनेत्रस्-त्र्यम्बकस्-त्र्यक्षः, केवलज्ञानवीक्षणः॥१२॥

समन्तभद्रः शान्तारिर्-धर्माचार्यो दयानिधिः।
सूक्ष्मदर्शी जितानंग, कृपालुर्-धर्मदेशकः॥१३॥

शुभम्युः सुखसादभूतः, पुण्यराशि-रनामयः।
धर्मपालो जगत्पालो, धर्म साम्राज्यनायकः॥१४॥

॥ ॐ ह्रीं श्री दिग्वासाद्यष्टोत्तर शत नमो नमः॥१०॥

चूलिका

धाम्नांपते तवामूनि, नामान्याग-मकोविदैः।
समुच्चितान्-यनुध्यायन्-पुमान्पूत स्मृतिर्-भवेत्॥१॥

गोचरोऽपि गिरामासां, त्व-मवाग्गोचरो मतः।
स्तोता तथाप्-यसन्दिग्धं, त्वत्तोऽभीष्ट फलं भजेत्॥२॥

त्व-मतोऽसि जगद्बन्धुस्-त्व-मतोऽसि जगद्भिषक्।
त्वमतोऽसि जगद्धाता, त्व-मतोऽसि जगद्धितः॥३॥

त्वमेकं जगतां ज्योतिस्-त्वं द्विरूपोप योगभाक्।
त्वं त्रिरूपैक-मुक्त्यंगः, स्वोत्थानन्त चतुष्टयः॥४॥

त्वं पञ्चब्रह्म तत्त्वात्मा, पञ्चकल्याण नायकः।
षड्भेद भाव तत्त्वज्ञस्-त्वं सप्तनय संग्रहः॥५॥

दिव्याष्ट गुण मूर्तिस्-त्वं, नवकेवल लब्धिकः।
दशावतार निर्धार्यो, मां पाहि परमेश्वरः॥६॥

युस्मन्-नामावलीदृब्ध विलसत्-स्तोत्र मालया।
भवन्तं वरिवस्यामः प्रसीदाऽनुगृहाण नः॥७॥

इदं स्तोत्र-मनुस्मृत्य पूतो, भवति भाक्तिकः।
यः संपाठं पठत्येनं, स स्यात्-कल्याण भाजनम्॥८॥

ततः सदेदं पुण्यार्थी, पुमान्-पठति पुण्यधीः।
पौरुहूतीं श्रियं प्राप्तुं, परमा-मभिलाषुकः॥९॥

स्तुत्वेति मघवा देवं, चराचर जगद्गुरुम्।
ततस्तीर्थ विहारस्य व्यधात्-प्रस्तावनामिमाम्॥१०॥

स्तुतिः पुण्य गुणोत्कीर्तिः, स्तोता भव्य प्रसन्नधी।
निष्ठितार्थो भवांस्तुत्यः, फलं नैश्रेयसं सुखम्॥११॥

(शार्दूल विक्रीडित छंद)

यः स्तुत्यो जगतां त्रयस्य न पुनः स्तोता स्वयं कस्यचित्,
ध्येयो योगिजनस्य यश्च नितरां ध्यातास्वयं- कस्यचित्।
यो-नेन्तॄन् नयते नमस्कृ-तिमलं नन्तव्य-पक्षेक्षणः,
स श्रीमान् जगतां त्रयस्य य-गुरुर्-देवः पुरुः पावनः॥१२॥

तं देवं त्रिदशाऽधिपार्चित पदं घातिक्षयाऽनन्तरं,
प्रोत्थानन्त चतुष्टयं जिनमिमं भव्याब्जिनी-नामिनम्।
मानस्तम्भ विलोकनानत् जगन्-मान्यं त्रिलोकीपतिं,
प्राप्ताऽचिन्त्य बहिर्विभूति-मनघं भक्त्या प्रवन्दामहे॥१३॥

॥ ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनसहस्त्रनामस्तोत्रं नमो नमः॥

'श्री माघनन्दिकृत जयमाला' (चौपाई)

चतुर्विंशति स्तव

वृषभं त्रिभुवनपति शतवंद्यं, मंदरगिरि-मिव धारि-मनिद्यं।
वंदे मनसिज गजमृगराजं, राजित-तनुमजितं जिनराजं॥१॥

संभव-दुज्ज्वल गुणमहिमानं, संभव जिनपति-मप्रमिानं।
अभिनन्दनमानंदित लोकं, विद्यालोकितलोकाऽलोकं॥२॥

सुमतिं प्रसमित कुनयसमूहं, निर्दलिताऽखिल कर्मसमूहं।
वंदित पद्म पद्मप्रभदेवं, देवाऽसुरनरकृतपद सेवं॥३॥

सेवक मुनिजन सुरुचिर् पार्श्वं, प्रणमामि प्रथितं च सुपार्श्वं।
त्रिभुवन जन नयनोत्पल चन्दं, चन्द्रप्रभ-मघवर्जित चन्द्रं॥४॥

सुविधिं विधु धवलोज्ज्वल कीर्तिं, त्रिभुवनजनपति कीर्त्तित मूर्तिं।
भूतलपति नुत शीतलनाथं, ध्यान महानल हुतरतिनाथं॥५॥

स्पष्टानंत चतुष्टय निलयं, श्रेयो-जिनपति-मपगत विलयं।
श्रीवसुपूज्य सुतनुनुत पादं, भव्यसुजन प्रिय दिव्यनिनादं॥६॥

कोमल कमल दलायतनेत्रं, विमलं केवलसस्य सुक्षेत्रम्।
निर्जितकन्तु-मनन्त जिनेशं, वन्दे मुक्तिवधू परमेशम्॥७॥

धर्मं निर्मलशार्माऽपन्नं, धर्मपरायण जनताऽसन्नं।
शान्तिं शीतिकरं जनतायाः, भक्तभर-क्रम कमलनताय॥८॥

कुन्थुं गुणमणि रत्नकरण्डं, संसाराम्बुधि तरण तरण्डम्।
अमरीकृत सुचकोरी चन्द्रं, अरपरमं पदविनत महेन्द्रम्॥९॥

उद्धत मोह महाभटमल्लं, मल्लिं फुल्लशर प्रतिमल्लम्।
सुव्रत-मपगत दोषनिकायं, चरणाम्बुज नतदेव निकायं॥१०॥

नौमिं नमिं गुणरत्न समुद्रं, योगिनिरूपित योगसमुद्रं।
नीलसुश्यामल कोमलगात्रं, नेमिस्वामि नयनोत्पलगात्रं॥११॥

फणिफण मण्डप मंडितदेहं, पार्श्वं निजहितगत संदेहम्।
वीर-मपार चरित्र-पवित्रं, संसार प्रति-मप्रतिबोधं॥१२॥

परिनिष्क्रमणं केवलबोधं, परिनिर्वृत्ति सुख बोधित बोधं।
वन्दे मंदर-मस्तर पीठं, कृत जन्माभिषेक नुत पीठम्॥१३॥

(मालिनी छन्दः)

अनणु-गुण निबद्धामऽर्हताम् माघनन्दि,
सुव्रतचित सुवर्णानेक पुष्प व्रजाना।
स भवति नुतिमालां योऽपि धत्ते स्वकण्ठे,
प्रियपतिस्मर श्री मोक्षलक्ष्मी वधूनां॥

इति चतुर्विंशति स्तवम्

सिद्धेः कारणमुत्तमा जिनवरा अर्हन्त्यलक्ष्मीवराः।
मुख्या ये रसदिग्युता गुणभृतस्-त्रैलोक्यपूजामिनाः।।
चित्ताब्जं प्रविकासयंतु मम भो! ज्योतिःप्रभा भास्कराः।
तीर्थेशा वृषभादिवीरचरमाः कुर्वंतु मे (नो) मंगलम्।।1।।

अथ गोम्मटेस-थुदि

विसट्ट - कंदोट्ट - दलाणुयारं,
सुलोयणं चंद - समाण - तुण्डं।
घोणाजियं चम्पय-पुप्पसोहं,
तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं॥१॥

अच्छाय-सच्छं जलकंत-गण्डं,
आबाहु - दोलंत - सुकण्णपासं।
गइन्द - सुण्डुज्जल - बाहुदण्डं
तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं॥२॥

सुकण्ठ-सोहा-जिय दिव्व-संखं,
हिमालयुद्दाम - विसाल - कंधं।
सुपेक्ख-णिज्जायल - सुट्ठु - मज्झं,
तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं॥३॥

विंज्झायलग्गे पविभास-माणं,
सिंहामणि सव्व-सुचेदियाणं।
तिलोय - संतोसय - पुण्णचंदं,
तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं॥४॥

लया - समक्कंत - महासरीरं,
भव्वावलीलद्ध - सुकप्प रुक्खं।
देविंद-विंदच्चिय - पायपोम्मं,
तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं॥५॥

दियंबरो जो ण च भीइ-जुत्तो,
ण चांबरे सत्तमणो विसुद्धो।
सप्पादि-जंतु-प्फुसदो ण कंपो,
तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं॥६॥

आसां ण जो पोक्खदि सच्छदिट्ठी,
सोक्खे ण वाञ्छा हयदोसमूलं।
विरायभावं भरहे विसल्लं,
तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं॥७॥

उपाहि-मुत्तं धण-धाम-वज्जियं,
सुसम्मजुत्तं मय मोह-हारयं।
वस्सेय - पज्जंत - मुववास - जुत्तं,
तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं॥८॥

॥ ॐ ह्रीं श्री गोमटेश बाहुबली जिनेन्द्राय नमः॥

अथ श्री सरस्वती स्तोत्रम्

चन्द्रार्क-कोटि-घटितोज्ज्वल दिव्यमूर्ते,
श्री चन्द्रिका कलित निर्मल शुभ्र वस्त्रे।
कामार्थदायि कलहंस समाधि-रूढ़े,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि!॥१॥

देवाऽसुरेन्द्र-नत-मौलिमणि प्ररोचि,
श्री मंजरी निविड रंजित पाद पद्मे।
नीलालके प्रमदहस्ति समानयाने
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि!॥२॥

केयूरहार मणि-कुण्डल मुद्रिकाद्यैः,
सर्वांगभूषण नरेन्द्र मुनीन्द्र वंद्ये।
नानासुरत्न वर निर्मल मौलियुक्ते,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि!॥३॥

मंजीर कोत्कनक-कंकण-किंकणीनाम्,
कांच्याश्च झंकृत-रवेण विराजमाने।
सद्धर्म वारिनिधि सन्तति वर्द्धमाने,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि!॥४॥

कंकेलि-पल्लव विनिंदित पाणि युग्मे,
पद्मासने दिवस पद्मसमान वक्त्रे।
जैनेन्द्र वक्त्र भव दिव्य समस्त भाषे,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि॥५॥

अर्द्धेन्दु मण्डितजटा ललित स्वरूपे,
शास्त्र प्रकाशिनि समस्त कलाऽधिनाथे।
चिन्मुद्रिका जपसराऽमय पुस्तकांके,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि॥६॥

डिंडीरपिंड हिमशंख सिताऽभ्रहारे,
पूर्णेन्दु बिम्बरुचि शोभित दिव्यगात्रे।
चांचल्यमान मृगशावललाट नेत्रे,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि॥७॥

पूज्ये पवित्र करणोन्नत कामरूपे,
नित्यं फणीन्द्र गरुडाऽधिप किन्नरेन्द्रैः।
विद्या धरेन्द्र सुरयक्ष समस्त वृन्दैः,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि॥८॥

॥ इति सरस्वती स्तोत्रम् ॥

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं वद्-वद् वाग्वादिनी भगवती सरस्वती ह्रीं नमः।

अथ श्री सरस्वती नाम स्तोत्रम्

सरस्वत्याः प्रसादेन, काव्यं कुर्वन्ति मानवाः।
तस्मान्-निश्चल भावेन, पूजनीया सरस्वती ॥१॥
श्री सर्वज्ञ मुखोत्पन्ना, भारती बहुभाषिणी।
अज्ञान तिमिरं हन्ति, विद्या बहु विकासिनी ॥२॥
सरस्वती मया दृष्टा, दिव्या कमल लोचना।
हंसस्कन्ध समारूढ़ा, वीणा पुस्तक धारिणी ॥३॥
प्रथमं भारती नाम, द्वितीयं च सरस्वती।
तृतीयं शारदा देवि, चतुर्थं हंसगामिनी ॥४॥
पंचमं विदुषां माता, षष्ठं वागीश्वरि तथा।
कुमारी सप्तमं प्रोक्तं, अष्टमं ब्रह्मचारिणी ॥५॥
नवमं च जगन्माता, दशमं ब्राह्मिणी तथा।
एकादशं तु ब्रह्माणी, द्वादशं वरदा भवेत् ॥६॥
वाणी त्रयोदशं नाम, भाषाचैव चतुर्दशं।
पंचदशं च श्रुतदेवी, षोडशं गौर्निगद्यते ॥७॥
एतानि श्रुत नामानि, प्रातरुत्थाय यः पठेत्।
तस्य संतुष्यति माता, शारदा वरदा भवेत् ॥८॥
सरस्वती नमस्तुभ्यं, वरदे काम रूपिणी।
विद्यारंभं करिष्यामि, सिद्धिर्-भवतु मे सदा ॥९॥

॥ इति श्री सरस्वती नाम स्तोत्रम् ॥

अथ चैत्यालयाष्टक-स्तोत्रम् (दृष्टाष्टक)

बसन्ततिलका छन्दः (14 वर्ण)

दृष्टं जिनेन्द्र-भवनं भव-ताप-हारि,
भव्यात्मनां विभव-सम्भव-भूरि-हेतु।
दुग्धाब्धि-फेन-धवलोज्ज्वल-कूट-कोटी,
नद्ध-ध्वज-प्रकर-राजि-विराजमानम् ॥१॥
दृष्टं जिनेन्द्र-भवनं भुवनैक-लक्ष्मी -
धामर्द्धि - वर्धित - महामुनि - सेव्यमानम्।
विद्याधराऽमर-वधू - जन - मुक्त-दिव्य-
पुष्पांजलि-प्रकर-शोभित-भूमि-भागम् ॥२॥
दृष्टं जिनेन्द्र भवनं भवनादि वास -
विख्यात-नाक-गणिका-गण-गीयमानम्।
नाना-मणि-प्रचय-भासुर-रश्मि-जाल-,
व्यालीढ निर्मल-विशाल-गवाक्ष-जालम् ॥३॥
दृष्टं जिनेन्द्र-भवनं सुर सिद्ध-यक्ष -
गंधर्व - किन्नर - करार्पित-वेणु-वीणा।
संगीत- मिश्रित - नमस्कृत- धीर- नादै-,
रापूरिताऽम्बरतलोरु - दिगन्तराऽलम् ॥४॥
दृष्टं जिनेन्द्र-भवनं विलसद्-विलोल-
माला-कुलालि-ललितालक-विभ्रमाणाम्।

माधुर्य- वाद्य- लय- नृत्य- विलासिनीनां,
लीला-चलद्-वलय-नूपुर-नाद-रम्यम् ॥५ ॥
दृष्टं जिनेन्द्र- भवनं मणि- रत्न- हेम,
सारोज्ज्वलैः कलश-चामर-दर्पणाद्यैः।
सन्मंगलैः सतत्- मष्ट- शत्- प्रभेदैर्-
विभ्राजितं विमल-मौक्तिक-दाम-शोभम् ॥६ ॥
दृष्टं जिनेन्द्र- भवनं- वर- देवदारू-
कर्पूर- चंदन- तरुष्क- सुगंधि- धूपैः।
मेघायमान-गगने- पवनाऽभिघात-
चञ्चच्-चलद्-विमल-केतन-तुंग-शालम् ॥७ ॥
दृष्टं जिनेन्द्र- भवनं- धवलाऽतपत्रच्-
छाया- निमग्न- तनु- यक्षकुमार- वृन्दैः।
दोधूयमान- सित- चामर- पंक्ति- भासं,
भामण्डल- द्युति- युत - प्रतिमाऽभिरामम् ॥८ ॥
दृष्टं जिनेन्द्र भवनं विविध-प्रकार-
पुष्पोपहार - रमणीय - सुरत्न - भूमि।
नित्यं वसन्त-तिलक-श्रिय-मादधानं,
सन्-मंगलं सकल-चन्द्र-मुनीन्द्र-वंद्यम् ॥९ ॥
दृष्टं मयाद्य मणि-काञ्चन-चित्र-तुंग-
सिंहासनादि-जिनबिम्ब-विभूति युक्तम्।
चैत्यालयं य-दतुलं परिकीर्तितं मे,
सन्-मंगलं सकल-चंद्र-मुनीन्द्र-वन्द्यम् ॥१० ॥

करुणाष्टक

(आचार्य पद्मनन्दि विरचित) आर्याछन्द

त्रिभुवन गुरो! जिनेश्वर, परमाऽनन्दैक कारण कुरुष्व।
मयि किङ्करेत्र करुणां, यथा-तथा जायते मुक्तिः॥१॥

निर्विण्णोऽहं नितरा-मर्हन् बहु-दुक्खया भवस्थित्या।
अपुनर्भवाय भव हर, कुरु करुणा-मत्र मयि दीने॥२॥

उद्धर मा पतितमतो, विषमाद् भवकूपतः कृपां कृत्त्वा।
अर्हन्नल-मुद्धरणे, त्व-मसीति पुनः पुनर्वाच्च॥३॥

त्वं कारुणिकः स्वामी, त्वमेव शरणं जिनेश तेनाऽहम्।
मोह-रिपु-दलितमानं, फूत्कारं तव पुरः कुर्वे॥४॥

ग्रामपते-रपि करुणा, परेण केनाऽप्युपद्रुते पुंसि।
जगतां प्रभो! न किं तव, जिनमयि खलु-कर्मभिः प्रहते॥५॥

अपहर मम जन्म दयां, कृत्वैत्येक वचसि वक्तव्ये।
तेनाऽतिदग्ध इति मे, देव! बभूव प्रलापित्वम्॥६॥

तव जिनवर चरणाब्ज, युग करुणामृत-शीतलं यावत्।
संसारताप तप्तः, करोमि हृदि तावदेव सुखी॥७॥

जगदेक-शरण! भगवन्! नौमि श्रीपद्मनन्दित-गुणौघ।
किं बहुना कुरु करुणा-मत्र जने शरण-मापन्ने॥८॥

॥ इति ॥

निरंजन स्तोत्रम्

स्थानं न मानं न च नाद-बिंदुं, रूपं न रेखं न च वर्ण-वर्णं।
दृष्टं न नष्टं न श्रुतं न स्तोत्रं, तस्मै नमो देव निरंजनाय॥१॥
श्वेतं न पीतं न च रक्त-श्यामं, हेमं न रूप्यं न च धातु-वर्णं।
चन्द्रार्क वह्नि उदयो न अस्तं, तस्मै नमो देव निरंजनाय॥२॥
वेदं न शास्त्रं नियमं न संध्या, मंत्रं न तंत्रं न च देह-ध्यानं।
होमं न जाप्यं न च देव-पूजा, तस्मै नमो देव निरंजनाय॥३॥
न पंचभूतं न च सप्त-स्वरं न, देशी विदेशी न च मेरु-ध्यानं।
ब्रह्मां न इन्द्रो न च विष्णु रुद्रो, तस्मै नमो देव निरंजनाय॥४॥
ब्रह्माण्ड-खण्डं न च अण्ड-दण्डं, कृष्णं न नीलं न च मुण्ड-पिण्डं।
ग्रहं न तारा न च मेघ-जालं, तस्मै नमो देव निरंजनाय॥५॥
स्थूलं न सूक्ष्मं न च शीत-उष्णं, गुरुः न शिष्यं न च मोह-मायं।
आशा न तृष्णा न भयं न लज्जा, तस्मै नमो देव निरंजनाय॥६॥
वृक्षं न मूलं न च बीज-मंकुरं, शाखा न पत्रा न च बल्लि-पल्ली।
पुष्पं न गंधं न फलं न छाया, तस्मै नमो देव निरंजनाय॥७॥
अधो न ऊर्ध्वं न शिवं न शक्ति, नारी न पुरुषं न च लिंगमूर्तिः।
हस्तं न देहं न तु पाद-छाया, तस्मै नमो देव निरंजनाय॥८॥

अनेक पाप नाशं च, निरंजनाष्टकं पठेत्।
सर्वसिद्धिर्-भवेद्यस्य, शिवलोके स गच्छति॥९॥

॥ इति निरंजन स्तोत्रम् ॥

आध्यात्म शयन गीतिका

सिद्धोऽसि बुद्धोऽसि निरञ्जनोऽसि, संसारमाया - परिवर्जितोऽसि।
शरीरभिन्नस्-त्यज् सर्वचेष्टां, मन्दालसा वाक्यमुपासि पुत्र!॥१॥
ज्ञातासि दृष्टासि परात्मरूपो-ऽखण्डस्वरूपोऽसि गुणालयोऽसि।
जितेन्द्रियस्-त्वं त्यज् मानमुद्रां, मन्दालसा वाक्यमुपासि पुत्र!॥२॥
शान्तोऽसि दान्तोऽसि विनाशहीनः, सिद्धस्वरूपोऽसि कलङ्कमुक्तः।
ज्योतिः स्वरूपोऽसि विमुञ्च मायां, मन्दालसा वाक्यमुपासि पुत्र!॥३॥
एकोऽसि मुक्तोऽसि चिदात्मकोऽसि, चिद्रूपभावोऽसि चिरन्तनोऽसि।
अलक्ष्यभावो जहि देहमोहं, मन्दालसा वाक्यमुपासि पुत्र!॥४॥
निष्काम धामासि विकर्मरूपो, रत्नत्रयात्मासि परं पवित्रः।
वेत्तासि चेतासि विमुञ्च कामं, मन्दालसा वाक्यमुपासि पुत्र!॥५॥
प्रमाद मुक्तोऽसि सुनिर्मलोऽसि, अनन्त बोधादि चतुष्टयोऽसि।
ब्रह्मासि रक्ष स्वचिदात्मरूपं, मन्दालसा वाक्यमुपासि पुत्र!॥६॥
कैवल्यभावोऽसि निवृत्तयोगो, निरामयो ज्ञातसमस्त तत्त्वः।
परात्मवृत्तिः स्मर चित्स्वरूपं, मन्दालसा वाक्यमुपासि पुत्र!॥७॥
चैतन्यरूपोऽसि विमुक्तमारो, भावादिकर्मासि समग्रवेदी।
ध्याय प्रकामं परमात्मरूपं, मन्दालसा वाक्यमुपासि पुत्र!॥८॥

॥ इति श्री आध्यात्म शयन गीतिका ॥

श्रमण रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमण

जीवे प्रमाद-जनिताः प्रचुराः प्रदोषाः,
यस्मात् प्रतिक्रमणतः प्रलयं प्रयान्ति।
तस्मात्-तदर्थ-ममलं मुनि-बोधनार्थं,
वक्ष्ये विचित्र-भव-कर्म-विशोधनार्थम्॥१॥

पापिष्ठेन दुराऽत्मना जड़धिया मायाविना-लोभिना,
रागद्वेष-मलीमसेन मनसा दुष्कर्म यन्-निर्मितम्।
त्रैलोक्याऽधिपते जिनेन्द्र! भवतः श्री-पाद-मूलेऽधुना,
निन्दा-पूर्वमहं जहामि सततं वर्वर्तिषुः सत्पथे॥२॥

संकल्प सूत्र

खम्मामि सव्व-जीवाणं, सव्वे जीवा खमंतु मे।
मित्ती मे सव्व-भूदेसु, बैरं मज्झं ण केण वि॥३॥

राग परित्याग सूत्र

राग- बन्ध- पदोसं च, हरिसं दीण - भावयं।
उस्सुगत्तं भयं सोगं, रदि-मरदिं च वोस्सरे॥४॥

पश्चाताप सूत्र

हा! दुट्ठ-कयं, हा! दुट्ठ-चिंतियं, भासियं च हा दुट्ठं!।
अंतो-अंतो डज्झमि पच्छत्तावेण वेदंतो॥५॥

दव्वे - खेत्ते - काले - भावे य कदाऽवराह - सोहणयं।
णिंदण-गरहण-जुत्तो मण-वच-कायेण पडिक्कमणं॥६॥

ए-इन्दिया, बे-इन्दिया, ते-इन्दिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया, पुढवि-काइया, आउ-काइया, तेउ-काइया, वाउ-काइया, वणप्फदि-काइया, तस-काइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

वद-समिदिंदिय रोधो, [1]लोचाऽवासय-मचेल-मण्हाणं।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेयभत्तं च॥१॥

एदे खलु मूल-गुणा, समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता।
एत्थ पमाद-कदादो, अइचारादो णियत्तोऽहं॥२॥

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं

पंचमहाव्रत - पंचसमिति - पंचेन्द्रिय - रोध-षडाऽवश्यक क्रियालोचाऽदयो अष्टाविंशति-मूलगुणाः, उत्तम-क्षमा- मार्दवाऽर्जव-शौच-सत्य-संयम-तपस्-त्यागा-ऽकिंचन्य-ब्रह्मचर्याणि, दश-लाक्षणिको धर्मः, अष्टादश- शील-सहस्राणि, चतु-रशीति -लक्षगुणाः, त्रयोदश-विधं चारित्रं,द्वादश-विधं

---

१. लोचो

तपश्चेति सकलं सम्पूर्णं अर्हत्-सिद्धा-ऽचार्योपाध्याय-सर्व-साधु- साक्षिकं, सम्यक्त्व-पूर्वकं, दृढ़व्रतं सुव्रतं समारूढं ते मे भवतु।

अथ सर्वाऽतिचार-विशुद्ध्यर्थं रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमण-क्रियायां, कृत-दोष निराकरणार्थं पूर्वाऽचार्यानुक्रमेण, सकल कर्म-क्षयार्थं भाव पूजा-वंदना-स्तव-समेतं आलोचना सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं कुर्वेऽहं।

सामायिक दण्डक

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं॥

चत्तारि मंगलं-अरिहंत मंगलं, सिद्ध मंगलं, साहू मंगलं, केवलि पण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा-अरिहंत लोगुत्तमा, सिद्ध लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो। चत्तारि सरणं पव्वज्जामि-अरिहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलि पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णारस- कम्मभूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं सिद्धाणं, बुद्धाणं परिणिव्वुदाणं, अंतय-डाणं, पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसगाणं, धम्म-णायगाणं, धम्म- वर-चाउरंग- चक्क-वट्टीणं, देवाहि देवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं, सदा करेमि, किरियम्मं।

करेमि भन्ते ! सामायियं सव्व-सावज्ज-जोगं पच्चक्खामि जावज्जीवं (यावन्नियमं) तिविहेण मणसा-वचसा, काएण, ण करेमि ण कारेमि, ण अण्णं करंतं पि समणुमणामि। तस्स भन्ते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाणं, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, पज्जुवासं करेमि, तावकालं पावकम्मं, दुच्चरियं, वोस्सरामि। (कायोत्सर्ग करें)

चतुर्विंशति स्तव

जीविय-मरणे लाहाऽलाहे संजोग विप्पजोगे य।
बंधुरिय सुह दुक्खादो समदा सामायियं णाम॥१॥

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवली अणंत जिणे।
णर-पवर-लोए महिए विहुय-रय-मले महप्पण्णे॥२॥

लोयस्सुज्जोययरे धम्मं तित्थंयरे जिणे वंदे।
अरहंते कित्तिस्से चौबीसं चेव केवलिणो॥३॥

उसह-मजियं च वन्दे संभव - मभिणंदणं च सुमइं च।
पउमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वन्दे॥४॥

सुविहिं च पुप्फयंतं सीयल सेयं च वासुपुज्जं च।
विमल-मणंतं भयवं धम्मं संतिं च वंदामि॥५॥

कुंथुं च जिणवरिंदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं।
वंदाम्यरिट्ठ-णेमिं तह पासं वड्ढमाणं च॥६॥

एवं मए अभित्थुआ विहुय-रय-मला पहीण-जर-मरणा।
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु॥७॥

कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा।
आरोग्ग-णाण-लाहं दिंतु समाहिं च मे बोहिं॥८॥

चंदेहिं णिम्मल-यरा, आइच्चेहिं अहिय-पया-संता।
सायर-मिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु॥९॥

!! इति चतुर्विंशति स्तव !!

मुख्य मंगल

श्रीमते वर्धमानाय नमो,
नमित - विद् - विषे।
यज्ज्ञानान्तर्गतं भूत्वा
त्रैलोक्यं गोष्पदायते ॥१ ॥

सिद्ध भक्ति

तव - सिद्धे णय-सिद्धे,
संजम सिद्धे चरित्त-सिद्धे य।
णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे,
सिरसा णमंसामि ॥२ ॥

इच्छामि भन्ते ! सिद्धभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्साऽलोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचारित्त जुत्ताणं, अट्ठविह-कम्म-विप्प-मुक्काणं, अट्ठगुण-संपण्णाणं उड्ढलोय-मत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तवसिद्धाणं, णय-सिद्धाणं, संजम-सिद्धाणं, चरित्त-सिद्धाणं, अतीताऽणागद - वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्व-सिद्धाणं णिच्चकालं, अच्चेमि

पूजेमि, वन्दामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिन-गुण-सम्पत्ति होउ मज्झं।

आलोचना

इच्छामि भन्ते ! चरित्ताऽयारो तेरस-विहो, परिविहा-विदो, पंच-महव्वदाणि, पंच-समिदीओ तिगुत्तीओ चेदि। तत्थ पढमे महव्वदे, पाणा-दिवादादो वे रमणं से पुढवि-काइया- जीवा-अंसखेज्जाऽसंखेज्जा, आउ-काइया-जीवा-अंसखेज्जा-ऽसंखेज्जा, तेउ-काइया-जीवा-अंसखेज्जाऽसंखेज्जा, वाउ काइया जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा, वणप्फदि-काइया-जीवा-अणंताऽणंता हरिया-बीआ-अंकुरा, छिण्णा-भिण्णा एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणु-मण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥१॥

बे-इन्दिया जीवा-असंखेज्जाऽसंखेज्जा, कुक्खि किमि-संख-खुल्लय, वराडय, अक्ख-रिट्ठय-गण्डवाल-संबुक्क-सिप्पि, पुलवि-काइया (पुलवि-आइया) एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणु-मण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥२॥

ते इन्दिया जीवा-अंसखेज्जाऽसंखेज्जा, कुन्थुद्देहिय -विंछिय-गोभिंद-गोजुव-मक्कुण- पिपीलियाइया एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणु-मण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥३॥

चउरिंदिया जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा, दंसमसय-मक्खि-पयंग-कीड-भमर-महुयर, गोमच्छियाइया, एदेसिं उद्दावणं परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणु-मण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

पंचिंदिया जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा, अंडाइया, पोदाइया, जराइया, रसाइया, संसेदिमा, सम्मुच्छिमा, उब्भेदिमा, उववादिमा, अवि-चउरासीदिजोणि पमुह-सद-सहस्सेसु, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणु-मण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥५॥

इच्छामि भन्ते ! राइयम्मि (देवसियम्मि) आलोचेउं, पंच-महव्वदाणि तत्थ पढमं महव्वदं पाणादिवादादो वे रमणं, विदियं महव्वदं मुसावादादो वे रमणं, तिदियं महव्वदं अदिण्णा -दाणादो वे रमणं, चउत्थं महव्वदं मेहुणादो वे रमणं, पंचमं

महव्वदं परिग्गहादो वे रमणं, छट्ठं अणुव्वदं राइ-भोयणादो वे रमणं। इरिया-समिदीए, भासा-समिदीए, एसणा- समिदीए, आदाण- णिक्खेवण-समिदीए, उच्चार-पस्स-वण खेल-सिंहाण वियडि पइट्ठावणिया समिदीए। मणगुत्तीए, वचि-गुत्तीए, काय-गुत्तीए। णाणेसु, दंसणेसु, चरित्तेसु, बावीसाय-परीसहेसु, पणवीसाय-भावणासु, पणवी- साय-किरियासु, अट्ठारस-सील-सहस्सेसु, चउरासीदि -गुणसय- सहस्सेसु, बारसण्हं संजमाणं, बारसण्हं तवाणं, बारसण्हं अंगाणं, चोदसण्हं पुव्वाणं, दसण्हं मुंडाणं, दसण्हं समण- धम्माणं, दसण्हं धम्मज्झाणाणं, णवण्हं बंभचेर-गुत्तीणं, णवण्हं णोकसायाणं, सोलसण्हं-कसायाणं, अट्ठण्हं कम्माणं, अट्ठण्हं पवयण-माउयाणं, अट्ठण्हं सुद्धीणं, सत्तण्हं भयाणं, सत्तविह संसाराणं, छण्ह जीव-णिकायाणं, छण्हं आवासयाणं, पंचण्हं इन्दियाणं, पंचण्हं महव्वयाणं, पंचण्हं समिदीणं, पंचण्हं चरित्ताणं, चउण्हं सण्णाणं, चउण्हं पच्चयाणं, चउण्णं उवसग्गाणं मूलगुणाणं उत्तरगुणाणं दिट्ठियाए, पुट्ठियाए, पदोसियाए, परदावणियाए, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा,

हस्सेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पिम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, एदेसिं अच्चासणदाए, तिण्हं दण्डाणं, तिण्हं लेस्साणं, तिण्हं गारवाणं, तिण्हं अप्पसत्थ- संकिलेसपरिणामाणं, दोण्हं अट्ट-रुद्द - संकिलेस- परिणामाणं, मिच्छा- णाण, मिच्छा-दंसण, मिच्छा-चरित्ताणं, मिच्छत्त-पाउग्गं, असंयम - पाउग्गं, कसाय पाउग्गं, जोग-पाउग्गं, अपाउग्ग-सेवणदाए, पाउग्- गरहणदाए, इत्थ मे जो कोई राइयो (देवसिओ) अदिक्कमो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो। तस्स भन्ते ! पडिक्कमामि मए पडिक्कंतं तस्स मे सम्मत्त-मरणं, पंडिय-मरणं वीरिय-मरणं, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहि-लाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-सम्पत्ति होउ मज्झं।

वद-समिदिंदिय रोधो, लोचाऽवासय-मचेल-मण्हाणं।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं च ॥१॥
एदे खलु मूलगुणा, समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता।
एत्थ पमाद-कदादो, अइचारादो णियत्तोऽहं ॥२॥

छेदोवट्ठावणं होउ मज्झं

अथ सर्वाऽतिचार - विशुद्ध्यर्थं रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमण-क्रियायां कृत-दोष- निराकरणार्थं पूर्वाऽचार्यानु-क्रमेण सकल- कर्मक्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री प्रतिक्रमण-भक्ति कायोत्सर्गं कुर्वेऽहं।

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं॥

णमो जिणाणं ! णमो जिणाणं ! णमो जिणाणं ! णमो णिस्सिहीए ! णमो णिस्सिहीए ! णमो णिस्सिहीए ! णमोत्थु दे ! णमोत्थु दे ! णमोत्थु दे ! अरहंत ! सिद्ध ! बुद्ध ! णीरय ! णिम्मल ! सम-मण ! सुभमण ! सुसमत्थ ! समजोग ! सम भाव ! सल्लघट्टाणं ! सल्लघत्ताणं ! णिब्भय ! णीराय ! णिद्दोस! णिम्मोह ! णिम्मम ! णिस्संग! णिस्सल्ल ! माण-माय-मोस- मूरण ! तवप्पहावणं ! गुण - रयण - सील - सायर ! अणंत ! अप्पमेय ! महदि-महावीर - वड्ढमाण ! बुद्धि-रिसिणो ! चेदि णमोत्थु ए ! णमोत्थु ए ! णमोत्थु ए!।

मम मंगलं अरहंता य, सिद्धा य, बुद्धा य, जिणा य, केवलिणो, ओहिणाणिणो, मणपज्जवणाणिणो, चउदस-पुव्व-गामिणो, सुद-समिदि-समिद्धा य, तवो य, बारह-विहो तवस्सी, गुणा य-गुणवंतो य, महरिसी, तित्थं, तित्थंकरा य, पवयणं, पवयणी य, णाणं, णाणी य, दंसणं, दंसणी य, संजमो, संजदा य, विणओ, विणदा य, बंभचेरवासो, बंभचारी य, गुत्तीओ चेव, गुत्ति-मंतो य, मुत्तीओ चेव, मुत्तिमंतो य, समिदीओ चेव, समिदि-मंतो य, सुसमय-परसमय-विदु, खंति-खंतिवंतो य, खवगा य, खीण-मोहा य, खीणवंतो य, बोहिय-बुद्धा य, बुद्धिमंतो य, चेइय-रुक्खा-य, चेइयाणि।

उड्ढ-मह-तिरिय-लोए, सिद्धाऽयदणाणी-णमस्सामि, सिद्ध-णिसीहियाओ, अट्ठावय-पव्वये, सम्मेदे, उज्जंते, चंपाए, पावाए, मज्झिमाए, हत्थिवालियसहाए, जाओ अण्णाओ काओ वि-णिसीहियाओ, जीव-लोयम्मि, इसिपब्भार-तल-गयाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं, कम्म-चक्क- मुक्काणं, णीरयाणं, णिम्मलाणं, गुरु-आइरिय-उवज्झायाणं, पव्व-तित्थेर-कुलयराणं, चउवण्णो य, समण-संघो य, दससु भरहेरावएसु, पंचसु महाविदेहेसु, जे लोए संति-साहवो-संजदा, तवसी

एदे, मम मंगलं, पवित्तं, एदेहं मंगलं करेमि, भावदो विसुद्धो सिरसा अहि-वंदिऊण सिद्धे काऊण अंजलिं मत्थयम्मि, तिविहं तियरण सुद्धो।

अथ रात्रि-दिवस दोषालोचना

पडिक्कमामि भन्ते! राइयस्स (देवसियस्स) अइचारस्स, अणाचारस्स, मणदुच्चरियस्स, वचिदुच्चरियस्स, काय दुच्चरियस्स, णाणाइचारस्स, दंसणाइचारस्स, तवाइचारस्स, वीरियाइचारस्स, चरित्ताइचारस्स, पंचण्हं-महव्वयाणं, पंचण्हं-समिदीणं, तिण्हं-गुत्तीणं, छण्हं-आवासयाणं, छण्हं-जीवणिकायाणं, विराहणाए, पील-कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणु-मण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥१॥

ईर्यापथ गमना-गमन दोषों की आलोचना

पडिक्कमामि भन्ते! अइगमणे, णिग्गमणे, ठाणे, गमणे, चंकमणे, उवत्तणे, आउट्ठणे, पसारणे, आमासे, परिमासे, कुइदे, कक्कराइदे, चलिदे, णिसण्णे, सयणे, उव्वट्टणे, परियट्टणे, एइन्दियाणं, बेइन्दियाणं, तेइन्दियाणं, चउरिंदियाणं, पंचिन्दियाणं, जीवाणं, संघट्टणाए, संघादणाए, उद्दावणाए,

परिदावणाए, विराहणाए, एत्थ मे जो कोई राइओ (देवसिओ) अदिक्कमो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥२॥

(ईर्यापथ गमना-गमन सम्बन्धी दोषों की) दूसरी आलोचना

पडिक्कमामि भन्ते! इरियावहियाए, विराहणाए उड्ढमुहं चरंतेण वा, अहोमुहं चरंतेण वा, तिरियमुहं चरंतेण वा, दिसिमुहं चरंतेण वा, विदिसिमुहं चरंतेण वा, पाणचंकमणदाय, वीय चंकमणदाए, हरिय चंकमणदाय, उत्तिंग-पणय-दय-मट्टिय-मक्कडय तन्तु सत्ताण-चंकमणदाए, पुढवि-काइय संघट्टणाए, आउ-काइय-संघट्टणाए, तेउ-काइय- संघट्टणाए, वाउ-काइय-संघट्टणाए, वणप्फदि-काइय- संघट्टणाए, तस-काइय-संघट्टणाए, उद्दावणाए, परिदावणाए, विराहणाए, इत्थ मे जो कोई इरियावहियाए, जो मए राइयो (देवसिओ) अइचारो, अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥३॥

मल मूत्रादि क्षेपण संबंधी दोषों की आलोचना

पडिक्कमामि भन्ते! उच्चार-पस्सवण खेल-सिंहाण-वियडि-पइट्ठावणियाए, पइट्ठावंतेण जो कोई (जे केई)

पाणा वा, भूदा वा, जीवा वा, सत्ता वा, संघट्ठिदा वा, संघादिदा वा, उद्दाविदा वा, परिदाविदा वा, इत्थ मे जो कोई राइओ (देवसिओ) अइचारो, अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥४॥

एषणा समिति (भोजन सम्बन्धी दोषों की आलोचना)

पडिक्कमामि भन्ते ! अणेस-णाए, पाण-भोयणाए, पणय भोयणाए, बीय-भोयणाए, हरिय-भोयणाए, अहा-कम्मेण वा, पच्छा कम्मेण वा, पुराकम्मेण वा, उद्दिट्ठयडेण वा, णिद्दिट्ठयडेण वा, दय-संसिट्ठयडेण वा, रय संसिट्ठयडेण वा, परिसादणियाए, पइट्ठावणियाए, उद्देसियाए, णिद्देसियाए, कीदयडे, मिस्से, जादे, ठविदे, रइदे, अणसिट्ठे, बलिपाहुडदे, पाहुडदे, घट्टिदे, मुच्छिदे, अइमत्त-भोयणाए इत्थ मे जो कोई गोयरिस्स जो मए राइयो (देवसिओ) अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥५॥

स्वप्न सम्बन्धी दोषों की आलोचना

पडिक्कमामि भन्ते ! सुमणिंदियाए, विराहणाए, इत्थि-विप्परियासियाए, दिट्ठि विप्परियासियाए, मणि विप्परियासियाए, वचि-विप्परियासियाए, काय-विप्परिया-

सियाए, भोयण-विप्परियासियाए, उच्चावयाए, सुमण-दंसण-विप्परियासियाए, पुव्वरए, पुव्वखेलिए, णाणा-चिंतासु, विसोतियासु इत्थ मे जो कोई राइओ (देवसिओ) अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥६॥

विकथा संबंधी दोषों की आलोचना

पडिक्कमामि भन्ते ! इत्थि-कहाए, अत्थ-कहाए, भत्त-कहाए, राय कहाए, चोर-कहाए, वेर-कहाए, पर-पासंड-कहाए, देस-कहाए, भास-कहाए, अ-कहाए, वि-कहाए, निठुल्ल-कहाए, पर-पेसुण्ण-कहाए, कंदप्पियाए, कुक्कुच्चियाए, डंबरियाए, मोक्खरियाए, अप्प पसंसणदाए, पर-परिवादणाए पर-दुगंछणदाए, परपीडा-कराए सावज्जाणुमोयणियाए, इत्थ मे जो कोई राइओ (देवसिओ) अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥७॥

आर्त्तध्यानादि अशुभ परिणाम व कषायादि दोषों की आलोचना

पडिक्कमामि भन्ते ! अट्टज्झाणे, रुद्दज्झाणे, इह-लोय-सण्णाए, पर-लोय-सण्णाए, आहार-सण्णाए, भय-सण्णाए, मेहुण-सण्णाए, परिग्गह-सण्णाए, कोह-सल्लाए, माण-सल्लाए, माया-सल्लाए, लोह-सल्लाए, पेम्म-सल्लाए,

पिवास-सल्लाए, णियाण-सल्लाए, मिच्छा-दंसण- सल्लाए, कोह-कसाए, माण-कसाए, माया-कसाए, लोह- कसाए, किण्ह-लेस्स-परिणामे, णील-लेस्स-परिणामे, काउ-लेस्स-परिणामे, आरम्भ-परिणामे, परिग्गह-परिणामे, पडिसयाहिलास-परिणामे, मिच्छा-दंसण-परिणामे, असंजम- परिणामे, पाव-जोग-परिणामे, काय- सुहाहिलास-परिणामे, सद्देसु, रूवेसु, गन्धेसु, रसेसु, फासेसु, काइयाहिकरणियाए, पदोसियाए, परदावणियाए, पाणाइवाइयासु, इत्थ मे जो कोई राइओ (देवसिओ) अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥८॥

एक को आदि ले 33 संख्या पर्यन्त दोषों की आलोचना

पडिक्कमामि भन्ते! एक्के भावे अणाचारे, दोसु (वेसु) राय-दोसेसु, तीसु दण्डेसु, तीसु-गुत्तीसु, तीसु गारवेसु, चउसु कसाएसु, चउसु सण्णासु, पंचसु महव्वएसु, पंचसु समिदीसु, छसु जीव-णिकाएसु, छसु आवासएसु, सत्तसु भएसु, अट्ठसु मएसु, णवसु बंभचेर-गुत्तीसु, दसविहेसु, समण-धम्मेसु, एयारसविहेसु उवासयपडिमासु, बारह-विहेसु भिक्खु-पडिमासु, तेरस-विहेसु किरियाट्ठाणेसु, चउदस-विहेसु भूदगामेसु, पणरस-विहेसु पमाय-ठाणेसु, सोलह-विहेसु

पवयणेसु, सत्तारस-विहेसु असंजमेसु, अट्ठारस-विहेसु असंपराएसु, उणवीसाय णाहज्झाणेसु, वीसाए असमाहिट्ठाणेसु, एक्कवीसाए सवलेसु, बावीसाए परीसहेसु, तेवीसाए सुद्दयडज्झाणेसु, चउवीसाए अरहंतेसु, पणवीसाए भावणासु, पणवीसाए किरियाट्ठाणेसु, छव्वीसाए पुढवीसु, सत्तावीसाए अणगार गुणेसु, अट्ठावीसाए आयार- कप्पेसु, एउणतीसाए पाव-सुत्त-पसंगेसु, तीसाए मोहणी-ठाणेसु, एकत्तीसाए कम्म-विवाएसु, बत्तीसाए जिणो-वएसेसु, तेतीसाए अच्चासणदाए, संखेवेण जीवाण- अच्चासणदाए, अजीवाण अच्चासणदाए, णाणस्स अच्चासणदाए, दंसणस्स अच्चासणदाए, चरित्तस्स अच्चासणदाए, तवस्स अच्चासणदाए, वीरियस्स अच्चासणदाए, तं सव्वं पुव्वं दुच्चरियं गरहामि, आगामेसीएसु पच्चुप्पण्णं इक्कंतं पडिक्कमामि, अणागयं पच्चक्खामि, अगरहियं-रहामि, अणिंदियं-णिंदामि, अणालोचियं-आलोचेमि, आराहण-मब्भुट्ठेमि, विराहणं पडिक्कमामि, इत्थ मे जो कोई राइओ (देवसिओ) अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥९॥

निर्ग्रन्थ पद को मैं स्वेच्छा से ग्रहण करता हूँ

इच्छामि भन्ते ! इमं णिग्गंथं पवयणं अणुत्तरं केवलियं, पडिपुण्णं, णेगाइयं, सामाइयं, संसुद्धं, सल्ल-घट्टाणं, सल्लघत्ताणं, सिद्धिमग्गं, सेढिमग्गं, खंतिमग्गं, मुत्तिमग्गं, पमुत्तिमग्गं, मोक्खमग्गं, पमोक्खमग्गं, णिज्जाण-मग्गं, णिव्वाण-मग्गं, सव्व-दुक्खपरिहाणि-मग्गं, सुचरिय-परिणिव्वाण-मग्गं, अवित्तहं, अविसंति-पवयणं, उत्तमं तं सद्दहामि, तं पत्तियामि, तं रोचेमि, तं फासेमि, इदोत्तरं अण्णं णत्थि, ण भूदं (ण भवं) ण भविस्सदि, णाणेण वा, दंसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, इदो जीवा सिज्झंति, बुज्झंति, मुच्चंति, परि- णिव्वाण-यंति, सव्व-दुक्खाण मंत-करेंति, पडि-वियाणंति, समणोमि, संजदोमि, उवरदोमि, उवसंतोमि, उवहि-णियडि- माण-माय- मोस-मूरण मिच्छा-णाण मिच्छा- दंसण, मिच्छा-चरित्तं च पडिविरदोमि, सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तं च रोचेमि, जं जिणवरेहिं पण्णत्तं, इत्थ मे जो कोई राइओ (देवसिओ) अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥१०॥

सार्वकालिक दोषों की आलोचना

पडिक्कमामि भन्ते ! सव्वस्स, सव्वकालियाए, इरियासमिदीए, भासा-समिदीए, एसणा-समिदीए,

आदाण-निक्खेवण-समिदीए, उच्चार-पस्सवण-खेल-सिंहाणय-वियडि-पइट्ठवणिया-समिदीए, मण-गुत्तीए, वचि-गुत्तीए, काय-गुत्तीए, पाणादिवादादो- वे-रमणाए, मुसावादादो वे-रमणाए, अदिण्णादाणादो वे-रमणाए, मेहुणादो-वे-रमणाए, परिग्गहादो-वे-रमणाए, राइभोयणादो-वे-रमणाए, सव्व-विराहणाए, सव्व-धम्म-अइक्कमणदाए, सव्व-मिच्छा-चरियाए, इत्थ मे जो कोइ राइओ (देवसिओ) अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥११॥

वीर-भक्ति कायोत्सर्ग की आलोचना

इच्छामि भन्ते ! [१]पडिक्कमणाऽइचार-मालोचेउं जो मे राइओ (देवसिओ) अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो, काइओ, वाइओ, माणसिओ, दुच्चिंतिओ, दुब्भासिओ, दुप्परिणामिओ, दुस्समणीओ, णाणे, दंसणे, चरित्ते, सुत्ते, सामाइए, पंचण्हं महव्वयाणं, पंचण्हं समिदीणं, तिण्हं गुत्तीणं, छण्हं जीव- णिकायाणं, छण्हं आवासयाणं, विराहणाए, अट्ठ-विहस्स कम्मस्स णिग्घादणाए, अण्णहा उस्सासिएण

१. वीर भक्तिकाउस्सग्गो

वा, णिस्सासिएण वा, उम्मिसिएण वा, णिम्मिसिएण वा, खासिएण वा, छिंक्किएण वा, जंभाइएण वा, सुहुमेहिं-अंग-चलाचलेहिं, दिट्ठिचलाचलेहिं, एदेहिं सव्वेहिं, आयरेहिं, असमाहिं-पत्तेहिं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, पज्जुवासं करेमि, ताव कालं (कायं) पाव कम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

वद-समि-दिंदिय रोधो, लोचाऽवासय मचेल-मण्हाणं।
खिदि सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं च॥१॥

एदे खलु मूलगुणा, समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता।
एत्थ पमाद - कदादो, अइचारादो णियत्तोऽहं॥२॥

छेदोवट्ठावणं होउ मज्झं

अथ सर्वाऽतिचार-विशुद्ध्-यर्थं रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमण क्रियायां कृत-दोष-निराकरणार्थं पूर्वाऽचार्यानुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री निष्ठितकरण वीर भक्ति कायोत्सर्गं कुर्वेऽहं।

णमो अरिहंताणं आदि सामायिक दण्डक पेज नं. 137 पर पढ़े।

(सायं 4 एवं प्रातः 2 कायोत्सर्ग करें)

श्री वीर भक्ति

(शार्दूलविक्रीडित छंदः)

यः सर्वाणि चराचराणि विधि-वद्, द्रव्याणि तेषां गुणान्,
पर्यायानपि भूत-भावि-भवितः सर्वान् सदा सर्वदा।
जानीते युगपत्-प्रतिक्षण-मतः सर्वज्ञ इत्युच्यते,
सर्वज्ञाय जिनेश्वराय महते वीराय तस्मै नमः॥१॥

वीरः सर्व-सुरासुरेन्द्र महितो वीरं बुधाः संश्रिता,
वीरेणाभिहतः स्व-कर्म-निचयो वीराय भक्त्या नमः।
वीरात् तीर्थ-मिदं प्रवृत्त-मतुलं वीरस्य घोरं तपो,
वीरे श्री-द्युति-कांति-कीर्ति-धृतयो, हे वीर ! भद्रं त्वयि॥२॥

ये वीर पादौ प्रणमन्ति नित्यम्, ध्यान-स्थिताः संयम-योग-युक्ताः।
ते वीत-शोका हि भवन्ति लोके, संसार-दुर्गं विषमं तरन्ति॥३॥

व्रत - समुदय - मूलः संयम - स्कंध - बंधो,
यम - नियम - पयोभिर् - वर्धितः शील शाखः।
समिति - कलिक - भारो गुप्ति - गुप्त - प्रवालो,
गुण - कुसुम- सुगंधिः सत् तपश्चित्र - पत्रः॥४॥

शिव - सुख - फल दायी- यो दया - छाय-योघः,
शुभ - जन - पथिकानां खेद - नोदे - समर्थः।
दुरित - रविज - तापं प्रापयन्ननन्त भावम्,
स भव - विभव - हान्यै नोऽस्तु चारित्र-वृक्षः॥५॥

चारित्रं सर्व-जिनैश्चरितं प्रोक्तं च सर्व-शिष्येभ्यः।
प्रणमामि पञ्च - भेदं पञ्चम - चारित्र - लाभाय॥६॥

धर्मः सर्व-सुखाकरो हित-करो, धर्मं बुधाश्चिन्वते,
धर्मेणैव समाप्यते शिव-सुखं धर्माय तस्मै नमः।
धर्मान्-नास्त्-यपरः सुहृद्-भव-भृतां धर्मस्य मूलं दया,
धर्मे चित्त-महं दधे प्रतिदिनं हे धर्म ! मां पालय॥७॥

धम्मो मंगल-मुक्किट्ठं अहिंसा संयमो तवो।
देवा वि तं णमंसंति जस्स धम्मे सया मणो॥८॥

अञ्चलिका

इच्छामि भन्ते ! [१]वीरभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचारित्त-तव वीरियाचारेसु, जम-णियम-संजम-सील-मूलुत्तर-गुणेसु, सव्व-मइचारं सावज्ज-जोगं पडिविरदोमि, असंखेज्जलोग अज्झवसाय-

१. पडिक्कमणादिचार मालोचेउं पणमंति।

ठाणाणि, अप्पसत्थ- जोग-सण्णा- णिंदिय-कसाय- गारव-किरियासु मण-वयण-काय-करण-दुप्पणिहा-णाणी, परि-चिंतियाणि, किण्ह-णील-काउ-लेस्साओ, विकहा-पालि कुंचिएण, उम्मग-हस्स- रदि-अरदि- सोय-भय-दुगंछ-वेयण-विज्जंभ-जम्भाइ-आणि, अट्ट-रुद्द-संकिलेस- परिणामाणि-परिणामदाणि, अणिहुद-कर-चरण-मण-वयण-काय-करणेण, अक्खित्त-बहुल-परायणेण, अपडि- पुण्णेण वा सरक्खरावय-परिसंघाय-पडिवत्तिएण, अच्छा- कारिदं मिच्छा-मेलिदं, आ-मेलिदं, वा-मेलिदं, अण्णहा-दिण्णं, अण्णहा-पडिच्छिदं, आवासएसु-परिहीणदाए, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

वद-समि-दिंदिय रोधो, लोचाऽवासय-मचेल-मण्हाणं।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेयभत्तं च॥१॥

एदे खलु मूल-गुणा, समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता।
एत्थ पमाद-कदादो, अइचारादो णियत्तोऽहं॥२॥

छेदोवट्ठावणं होउ मज्झं

अथ सर्वाऽतिचार-विशुद्ध्यर्थं रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमण क्रियायां कृत-दोष-निराकरणार्थं पूर्वाऽचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म- क्षयार्थं भाव- पूजा- वंदना-स्तव-समेतं चतुर्विंशति-तीर्थंकर-भक्ति कायोत्सर्गं कुर्वेऽहं।

णमो अरिहंताणं आदि सामायिक दण्डक पेज नं. 137 पर पढ़े।

चतुर्विंशति तीर्थंकर भक्ति

चउवीसं तित्थयरे उसहाइ - वीर- पच्छिमे वन्दे।
सव्वे सगण-गण-हरे सिद्धे सिरसा [१]णमंस्सामि ॥१॥

ये लोकेऽष्ट - सहस्र लक्षण - धरा, ज्ञेयार्णवाऽन्तर्गता,
ये सम्यग्-भव-जाल-हेतु-मथनाश्-चन्द्रार्क-तेजोऽधिकाः।
ये साध्विन्द्र-सुराप्सरो-गण-शतैर्-गीत-प्रणूताऽर्चितास्,
तान देवान वृषभादि-वीर-चरमान् भक्त्या नमस्याम्-यहम्॥२॥

नाभेयं देवपूज्यं, जिनवर-मजितं सर्व-लोक-प्रदीपम्,
सर्वज्ञं संभवाऽख्यं, मुनि-गण-वृषभं नन्दनं देवदेवम्॥

१. णमंसामि

कर्मारिघ्नं सुबुद्धिं वर-कमल-निभं पद्म-पुष्पाभि-गंधम्।
क्षांतं दान्तं सुपार्श्वं, सकल-शशि-निभं चन्द्रनामान-मीडे ॥३॥

विख्यातं पुष्पदन्तं, भव-भय-मथनं शीतलं लोक नाथं
श्रेयांसं शील-कोशं, प्रवर-नर-गुरुं वासुपुज्यं सुपूज्यम्॥
मुक्तं दान्तेंद्रियाऽश्वं, विमल-मृषि-पतिं सिंहसैन्यं मुनीद्रं,
धर्मं सद्धर्म-केतुं, शम-दम-निलयं स्तौमि शांतिं शरण्यम्॥४॥

कुंथुं सिद्धाऽलयस्थं, श्रमण पतिमरं त्यक्त भोगेषु चक्रं,
मल्लिं विख्यात-गोत्रं, खचर-गण-नुतं सुव्रतं सौख्य-राशिम्।
देवेन्द्राऽर्च्यं नमीशं, हरि-कुल-तिलकं नेमिचन्द्रं भवान्तं,
पार्श्वं नागेन्द्र-वंद्यं, शरण-मह-मितो वर्धमानं च भक्त्या॥५॥

अञ्चलिका

इच्छामि भन्ते ! चउवीस-तित्थयर-भत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं पंच-महा-कल्लाण-संपण्णाणं, अट्ठ-महा-पाडिहेर-सयाणं, चउतीसातिसय-विसेस संजुत्ताणं, बत्तीस-देविंद-मणि-मउड-मत्थय-महिदाणं, बलदेव-वासुदेव-चक्कहर-रिसि-मुणि-जइ-अणगारोव गूढाणं, थुइ-सय-सहस्स-णिलयाणं-उस-हाइ-वीर- पच्छिम-मंगल-

महा-पुरिसाणं, णिच्च-कालं अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं।

वद-समि-दिंदिय रोधो, लोचाऽवासय मचेल-मण्हाणं।
खिदि सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं च॥१॥

एदे खलु मूलगुणा, समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता।
एत्थ पमाद - कदादो, अइचारादो णियत्तोऽहं॥२॥

[१]छेदोवट्ठावणं होउ मज्झं

अथ सर्वाऽतिचार-विशुद्ध्यर्थं रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमण क्रियायां कृत-दोष- निराकरणार्थं पूर्वाऽचार्यानुक्रमेण सकल- कर्मक्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्ध भक्ति, श्री प्रतिक्रमण-भक्ति, श्री निष्ठितकरण वीर भक्ति, श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर भक्ति कृत्त्वा तद्धीनाधिक-दोष विशुद्ध्यर्थं, आत्म पवित्री - करणार्थं श्री समाधि भक्ति कायोत्सर्गं कुर्वेऽहं। (कायोत्सर्ग करें)

---

१. छेदोवट्ठावणं

अथेष्ट प्रार्थना (लघु समाधि भक्ति)

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः।

शास्त्राभ्यासो जिनपति-नुतिः संगतिः सर्वदार्यैः।
सद्-वृत्तानां गुण-गण-कथा दोष-वादे च मौनम्॥
सर्वस्यापि प्रिय-हित-वचो भावना-चात्म-तत्त्वे।
सपद्यंतां मम भव-भवे यावदेतेऽपवर्गः॥१॥

तव पादौ मम हृदये, ममहृदयं तव पद द्वये लीनम्।
तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद्-यावन्-निर्वाण-सम्प्राप्तिः॥२॥

अक्खर पयत्थहीणं, मत्ता-हीणं च जं मए भणियम्।
तं खमउ णाण-देव ! य, मज्झवि दुक्खक्खयं कुणउ[१]॥३॥

आलोचना

इच्छामि भन्ते ! समाहि-भत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, रयणत्तय-सरूव-परमप्पझाण-लक्खण-समाहि-भत्तीए णिच्चकालं अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइ- गमणं समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं।

(इतिश्रमण रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमण समाप्तम्)

---

१. दिंतु

अथ पाक्षिकादि प्रतिक्रमणम्

नमोऽस्तु आचार्य-वन्दनायां प्रतिष्ठापन-सिद्ध-भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्। (कायोत्सर्ग करें)

श्री सिद्ध भक्ति

सम्मत्त-णाण दंसण-वीरिय-सुहुमं तहेव अवगहणं।
अगुरु-लघु-मव्वावाहं अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं॥१॥

तवसिद्धे, णयसिद्धे संजमसिद्धे चरित्तसिद्धे य।
णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमंसामि॥२॥

इच्छामि, भंते ! सिद्धभत्ति काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं, सम्मणाण सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं, अट्ठविहकम्म- विप्पमुक्काणं अट्ठगुण संपण्णाणं उड्ढलोय-मत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तवसिद्धाणं, णयसिद्धाणं, संजमसिद्धाणं, चरित्तसिद्धाणं, अतीताणागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं सव्वसिद्धाणं णिच्च कालं, अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

नमोऽस्तु आचार्य-वन्दनायां प्रतिष्ठापन-श्रुत-भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्। (कायोत्सर्ग करें)

श्री श्रुत भक्ति

कोटी-शतं द्वादश चैव कोट्यो, लक्षाण्यशीतिस्-त्र्यधिकानि चैव।
पंचाश-दष्टौ च सहस्र-संख्या-मेतच्छ्रुतं पंच पदं नमामि॥१॥
अरहंत-भासियत्थं गणहर-देवेहिं गंथियं सम्मं।
पणमामि भत्तिजुत्तो सुद-णाण-महोवहिं सिरसा॥२॥

इच्छामि भंते ! सुदभत्तिकाउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं, अंगोवंग-पइण्णय-पाहुडय-परियम्म-सुत्त- पढमाणिओग-पुव्वगय-चूलिया चेव सुत्तत्थयथुइ-धम्मकहाइयं णिच्चकालं अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुण सम्पत्ति होउ मज्झं।

नमोऽस्तु आचार्य-वन्दनायां प्रतिष्ठापनाऽचार्य-भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्। (कायोत्सर्ग करें)

श्री आचार्य भक्ति

श्रुतजलधिपारगेभ्यः स्वपरमतविभावनापटुमतिभ्यः।
सुचरित-तपो-निधिभ्यो नमो गुरुभ्यो गुण-गुरुभ्यः ॥१॥

छत्तीस-गुण-समग्गे पंच-विहाचार-करण संदरिसे।
सिस्साणुग्गह-कुसले धम्माइरिए सदा वंदे ॥२॥

गुरु-भत्ति संजमेण य तरंति संसार-सायरं घोरं।
छिण्णंति अट्ठ-कम्मं जम्मण-मरणं ण पावेंति ॥३॥

ये नित्यं व्रत-मंत्र-होम-निरता ध्यानाग्नि-होत्रा कुलाः।
षट्-कर्माभि-रतास्तपो-धन-धनाः साधु क्रियाः साधवः॥
शील-प्रावरणा गुण-प्रहरणाश्-चन्द्रार्क-तेजोऽधिकाः।
मोक्ष-द्वार-कपाट-पाटन-भटाः प्रीणंतु मां साधवः॥४॥

गुरवः पान्तु नो नित्यं ज्ञान-दर्शन-नायकाः।
चारित्रार्णव-गम्भीरा मोक्ष-मार्गोपदेशकाः॥५॥

इच्छामि भंते ! आयरियभत्ति काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं सम्मणाण, सम्मदंसण, सम्मचरित्त जुत्ताणं पंचविहाचाराणं, आइरियाणं, आयारादि-सुद- णाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं, ति-रयण-गुण-पालण- रयाणं, सव्वसाहूणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ,

कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

(यहाँ शिष्यों और साधर्मियों से युक्त आचार्य (गुरु) अपने इष्ट देव को नमस्कार करें पश्चात् ''समतासर्वभूतेषु'' इत्यादि पाठ और वृहदसिद्ध एवं चारित्रभक्ति अञ्चलिका सहित बोलें)

नमः श्रीवर्धमानाय निर्धूत - कलिलात्मने।
सालोकानां त्रिलोकानां यद्-विद्या दर्पणायते॥१॥

समता सर्व - भूतेषु संयमः शुभ - भावनाः।
आर्त्त-रौद्र-परित्यागस्-तद्धि सामायिकं मतं॥२॥

अथ सर्वाऽतिचार विशुद्ध्यर्थं पाक्षिक (चातुर्मासिक) (वार्षिक) प्रतिक्रमण-क्रियायां कृत-दोष-निराकरणार्थं पूर्वाऽचार्याऽनुक्रमेण, सकल- कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा -वन्दना- स्तव-समेतं श्रीसिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

णमो अरहंताणं आदि दण्डक पेज नं. 137 पर पढ़े।
श्री सिद्ध भक्ति आगे पेज नं. 282 पर पढ़े।

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं आलोचना चारित्र भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

णमो अरहंताणं आदि दण्डक पेज नं. 137 पर पढ़े।
चारित्र भक्ति आगे पेज नं. 297 पर पढ़े।

बृहद्-आलोचना

नोट :- यह बृहद् आलोचना आठ दिन में, पाक्षिक चातुर्मासिक में और वार्षिक प्रतिक्रमण में होती है। अतः जब प्रतिक्रमण करना हो तब की अर्थात् उस समय की दिन गणना बोलें।

(इच्छामि भंते ! अट्ठमियम्मि आलोचेउं, अट्ठण्हं दिवसाणं, अट्ठण्हं राइणं, अब्भंतरदो, पंचविहो आयारो णाणाऽयारो, दंसणाऽयारो, तवाऽयारो विरियाऽयारो, चारित्ताऽयारो चेदि॥१॥)

(इच्छामि भंते ! पक्खियम्मि आलोचेउं, पण्णरसण्हं दिवसाणं, पण्णरसण्हं राइणं, अब्भंतरदो, पंचविहो आयारो, णाणाऽयारो, दंसणाऽयारो, तवाऽयारो, वीरियाऽयारो चरित्ताऽयारो चेदि॥२॥)

(इच्छामि भंते ! चउमासियम्मि आलोचेउं, चउण्हं मासाणं, अट्ठण्हं पक्खाणं, वीसुत्तर-सयदिवसाणं, वीसुत्तरसय-राइणं, अब्भंतरदो, पंचविहो आऽयारो, णाणायारो दंसणायारो तवायारो, वीरियायारो चरित्तायारो चेदि॥३॥)

(इच्छामि भंते ! संवच्छरियम्मि आलोचेउं, बारसण्हं मासाणं, चउवीसण्हं, पक्खाणं, तिण्हं-छावट्ठिसय- दिवसाणं, तिण्हं-छावट्ठि-सय-राइणं अब्भंतरदो, पंचविहो आयारो, णाणाऽयारो, दंसणाअयारो, तवाऽयारो, वीरियाऽयारो चरित्ताऽयारो चेदि।।४।।)

तत्थ णाणायारो अट्ठविहो काले, विणए, उवहाणे, बहुमाणे, तहेव अणिण्हवणे, विंजण-अत्थ तदुभये चेदि। णाणायारो अट्ठविहो परिहाविदो, से अक्खर-हीणं वा, सर-हीणं वा, विंजण-हीणं वा, पद हीणं वा, अत्थ-हीणं वा, गंथ-हीणं वा, थएसु वा, थुइसु वा, अत्थक्खाणेसु वा, अणियोगेसु वा, अणियोग-द्दारेसु वा, अकाले-सज्झाओ कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, काले वा, परिहाविदो, अच्छाकारिदं वा, मिच्छा- मेलिदं वा, आ-मेलिदं, वा-मेलिदं, अण्णहा-दिण्हं, अण्णहा-पडिच्छिदं, आवासएसु-परिहीणदाए तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।१।।

दंसणायारो अट्ठविहो

णिस्संकिय णिकंक्खिय णिव्विदिगिंच्छा अमूढदिट्ठी य।
उवगूहण ठिदिकरणं वच्छल्ल-पहावणा चेदि।।१।।

दंसणाऽयारो अट्ठविहो परिहाविदो, संकाए, कंखाए, विदिगिंछाए, अण्ण-दिट्ठी-पसंसणाए, परपाखंड-पसंसणाए, अणायदण-सेवणाए, अवच्छल्लदाए, अपहावणाए, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥२॥

तवाऽयारो बारसविहो अब्भंतरो-छव्विहो, बाहिरो छव्विहो चेदि। तत्थ बाहिरो अणासणं, आमोदरियं, वित्ति-परिसंखा, रस-परिच्चाओ, सरीर-परिच्चाओ, विवित्त सयणासणं चेदि। तत्थ अब्भंतरो पायच्छित्तं, विणओ, वेज्जावच्चं, सज्झाओ, झाणं, विउस्सग्गो चेदि। अब्भंतरं बाहिरं बारसविहं-तवोकम्मं, ण कदं, णिसण्णेण पडिक्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥३॥

वीरियाऽयारो पंचविहो परिहाविदो वर-वीरिय-परिक्कमेण, जहुत्त-माणेण, बलेण, वीरिएण, परिक्कमेण णिगूहियं, तवो-कम्मं, ण कदं, णिसण्णेण पडिक्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥४॥

चरित्ताऽयारो तेरसविहो परिहाविदो पंच-महव्वदाणि, पंच-समिदीओ, तिगुत्तीओ चेदि। तत्थ पढमे महव्वदे

पाणादिवादादो वे रमणं से पुढवि-काइया जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा, आऊ-काइया जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा, तेऊ-काइया जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा, वाऊ- काइया-जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा, वणप्फदिकाइया जीवा अणंताऽणंता हरिया, बीआ, अंकुरा, छिण्णा, भिण्णा एदेसिं, उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥१॥

बे-इंदिया-जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा कुक्खि, किमि, संख, खुल्लय-वराडय-अक्ख-रिट्ठय-गण्डबाल, संबुक्क, सिप्पि, पुलविकाइया एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥२॥

ते-इंदिया-जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा कुन्थूद्देहिय विंछिय-गोभिंद-गोजुव-मक्कुण पिपीलियाइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥३॥

चउरिंदिया-जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा दंसमसय-मक्खि-पयंग-कीड-भमर-महुयर-गोमच्छि-याइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥४॥

पंचिंदिया-जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा अंडाइया, पोदाइया, जराइया, रसाइया, संसेदिमा, सम्मुच्छिमा, उब्भेदिमा, उववादिमा, अवि-चउरासीदि-जोणि- पमुह-सद-सहस्सेसु एदेसिं, उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥५॥

अहावरे दुव्वे महव्वदे मुसावादादो वे रमणं से, कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, राएण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हस्सेण वा भयेण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, केण-वि- कारणेण जादेण वा, सव्वो मुसावादो भासिओ, भासाविओ, भासिज्जंतो वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥२॥

अहावरे तव्वे महव्वदे अदिण्णा-दाणादो वे रमणं से, गामे वा, णयरे वा, खेडे वा, कव्वडे वा, मडम्बे वा, मंडले वा, पट्टणे वा, दोणमुहे वा, घोसे वा, आसमे वा, सहाए वा, संवाहे वा, सण्णिवेसे वा, तिण्हं वा, कट्ठं वा, वियडिं वा, मणिं वा, एवमाइयं अदिण्णं, गिण्हियं, गेण्हावियं, गेण्हिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥३॥

अहावरे चउत्थे महव्वदे मेहुणादो वे रमणं से देविएसु वा, माणुसिएसु वा, तेरिच्छिएसु वा, अचेयणिएसु वा, मणुण्णा-मणुण्णेसु रूवेसु, मणुण्णा-मणुण्णेसु सद्देसु, मणुण्णा-मणुण्णेसु गंधेसु, मणुण्णा-मणुण्णेसु रसेसु, मणुण्णा-मणुण्णेसु फासेसु, चक्खिदिय-परिणामे, सोदिंदिय-परिणामे, घाणिंदिय-परिणामे, जिब्भिंदिय परिणामे, फासिंदिय परिणामे, णो-इंदिय परिणामे, अगुत्तेण अगुत्तिंदिएण, णवविहं बंभचरियं, ण रक्खियं, ण रक्खावियं, ण रक्खिज्जंतो वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥४॥

अहावरे पंचमे महव्वदे परिग्गहादो वे रमणं सो वि परिग्गहो दुविहो अब्भंतरो बाहिरो चेदि। तत्थ अब्भंतरो परिग्गहो

णाणावरणीयं, दंसणावरणीयं, वेयणीयं, मोहणीयं, आउग्गं, णामं गोदं, अंतरायं चेदि अट्ठविहो। तत्थ बाहिरो परिग्गहो उवयरण-भंड-फलह- पीढ-कमण्डलु, संथार-सेज्ज-उवसेज्ज, भत्तपाणादिभेदेण अणेयविहो, एदेण परिग्गहेण अट्ठविहं कम्मरयं बद्धं, बद्धावियं, बज्झन्तं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥५॥

अहावरे छट्ठे अणुव्वदे राइ-भोयणादो वे रमणं से असणं, पाणं, खाइयं, साइयं चेदि। चउव्विहो आहारो से तित्तो वा, कडुओ वा, कसाइलो वा, अमिलो वा, महुरो वा, लवणो वा, अलवणो वा, दुच्चिंतिओ, दुब्भासिओ, दुप्परिणामिओ दुस्समिणिओ, रत्तीए भुत्तो, भुंजावियो भुंज्जिजंतो वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥६॥

पंचसमिदीओ, इरियासमिदी, भाषासमिदी, एसणासमिदी, आदाण-णिक्खेवण समिदी, उच्चार-पस्सवण-खेल-सिंहाणय-वियडि-पइट्ठावण-समिदी चेदि।

तत्थ इरिया समिदी पुव्वुत्तर-दक्खिण-पच्छिम चउदिसि, वि दिसासु, विहरमाणेण, जुगंतर-दिट्ठिणा, भव्वेण दट्ठव्वा। डव-डव-चरियाए, पमाद-दोसेण, पाण-भूद-जीव-

सत्ताणं, उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥७॥

तत्थ भासा समिदी कक्कसा, कडुआ, परुसा णिट्ठुरा, परकोहिणी, मज्झंकिसा, अइमाणणी, अणयंकरा, छेयंकरा, भूयाण वहंकरा चेदि। दसविहा भासा, भासिया, भासाविया, भासिज्जंतो वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥८॥

तत्थ एसणासमिदी अहाकम्मेण वा, पच्छाकम्मेण वा, पुराकम्मेण वा, उद्दिट्ठयडेण वा, णिद्दिट्ठियडेण वा, कीडयडेण वा, साइया, रसाइया, सइंगाला, सधूमिया, अइगिद्धीए, अग्गीव, छण्हं जीव-णिकायाणं विराहणं, काऊण, अपरिसुद्धं, भिक्खं, अण्णं, पाणं, आहारियं, आहारावियं, आहारिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥९॥

तत्थ आदाण-णिक्खेवण-समिदी चक्कलं वा, फलहं वा, पोत्थयं वा, पीढं वा, कमण्डलुं वा, वियडिं वा, मणिं वा, एवमाइयं, उवयरणं, अप्पडिलेहिऊण- गेण्हंतेण वा, ठवंतेण वा, पाण-भूद-जीव-सत्ताणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥१०॥

तत्थ उच्चार-पस्सवण-खेल-सिंहाणय-वियडि-पइट्ठावणिया समिदी रत्तीए वा, वियाले वा, अचक्खुविसए, अवत्थंडिले, अब्भोवयासे, सणिद्धे, सवीए, सहरिए, एवमाइयासु, अप्पासु-गट्ठाणेसु, पइट्ठावंतेण, पाण-भूद-जीव सत्ताणं, उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥११॥

तिण्णि-गुत्तीओ मण-गुत्तीओ, वचि-गुत्तीओ काय गुत्तीओ चेदि। तत्थ मण-गुत्ती अट्टेझाणे, रुद्दे झाणे, इह लोय सण्णाए, पर-लोए-सण्णाए आहार-सण्णाए, भय-सण्णाए, मेहुण- सण्णाए, परिग्गह-सण्णाए, एवमाइयासु जा मण-गुत्ती, ण रक्खिया, ण रक्खाविया, ण रक्खिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥१२॥

तत्थ वचि-गुत्ती इत्थि-कहाए, अत्थ-कहाए, भत्त- कहाए, राय-कहाए, चोर-कहाए, वेर-कहाए, परपासंड-कहाए, एवमाइयासु जा वचि गुत्ती, ण रक्खिया, ण रक्खाविया, ण रखिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥१३॥

तत्थ कायगुत्ती चित्त-कम्मेसु वा, पोत्त-कम्मेसु वा, कट्ठ कम्मेसु वा, लेप्प कम्मेसु वा, लय-कम्मेसु वा, एवमाइयासु जा काय गुत्ती, ण रक्खिया, ण रक्खाविया, ण रखिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥१४॥

दोसु अट्ट-रुद्द-संकिलेस-परिणामेसु, तीसु अप्प सत्थ संकिलेस परिणामेसु, मिच्छा णाण- मिच्छादंसण-मिच्छा चरित्तेसु, चउसु उवसग्गेसु, चउसु सण्णासु, चउसु पच्चएसु पंचसु चरित्तेसु, छसु जीव णिकाएसु, छसु आवासएसु, सत्तसु भयेसु, अट्ठसु सुद्धीसु, णवसु बंभचेर गुत्तीसु, दससु समण-धम्मेसु, दससु धम्मज्झाणेसु, दससु मुण्डेसु, बारसेसु संजमेसु, बावीसाए परीसहेसु, पणवीसाए भावणासु, पणवीसाए किरियासु, अट्ठारस-सील-सहस्सेसु, चउरासीदि-गुण- सय-सहस्सेसु, मूल-गुणेसु, उत्तरगुणेसु (अट्ठमियम्मि), (पक्खियम्मि), (चउमासियम्मि), (संवच्छरियम्मि), अदिक्कमो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो जो तं पडिक्कमामि। मए पडिक्कंतं तस्स मे सम्मत्तमरणं, पंडियमरणं, वीरिय-मरणं, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-सम्पत्ति होदु मज्झं।

(नीचे लिखी सम्पूर्ण क्रिया मात्र आचार्य श्री करें।)

नमोऽस्तु सर्वाऽतिचार-विशुद्ध्यर्थं सिद्ध-भक्ति कार्योत्सर्गं करोम्यहं। (कायोत्सर्ग करें)

लघु सिद्ध भक्ति

सम्मत्त-णाण-दंसण-वीरिय सुहुमं तहेव अवगहणं।
अगुरु-लघु-मव्वावाहं अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं॥१॥

तव सिद्धे णय सिद्धे संजमसिद्धे चरित्त सिद्धे य।
णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमंसामि॥२॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! सिद्धभत्ति काउस्सग्गो कओ, तस्साऽलोचेउं, सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं, अट्ठविहकम्म- विप्पमुक्काणं, अट्ठगुणसंपण्णाणं, उड्ढलोय-मत्थयम्मि पइट्ठियाणं, तवसिद्धाणं, णयसिद्धाणं, संजम सिद्धाणं, चरित्त सिद्धाणं, अतीताऽणागदवट्टमाण- कालत्तय सिद्धाणं, सव्व सिद्धाणं, णिच्चकालं, अच्चेमि, पूज्जेमि, वंदामि,

णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण गुण-संपत्ति होदु मज्झं।

नमोऽस्तु सर्वाऽतिचार-विशुद्ध्यर्थ- मालोचना-योगि- भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्। (कायोत्सर्ग करें)

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं॥१॥

लघु योगि भक्ति

प्रावृट्-काले सविद्युत-प्र-पतित सलिले वृक्ष-मूलाऽधिवासाः,
हेमन्ते रात्रि-मध्ये प्रति-विगत- भयाः काष्ठ-वत्-त्यक्त देहाः।
ग्रीष्मे सूर्यांशु-तप्ता-गिरि-शिखर- गताः स्थान कूटांतर-स्थास्,
ते मे धर्मं प्रदद्युर्-मुनि-गण- वृषभा मोक्ष-निःश्रेणि-भूताः॥१॥

गिम्हे गिरि--सिहरत्था वरिसा-याले रुक्ख-मूल-रयणीसु
सिसिरे वाहिर-सयणा ते साहू वंदिमो णिच्चं॥२॥

गिरि - कन्दर - दुर्गेषु ये वसन्ति दिगम्बराः।
पाणि-पात्र-पुटाऽहारास्-ते यांति परमां गतिम्॥३॥

इच्छामि भंते ! योगिभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्साऽलोचेउं, अड्ढाइज्ज दीव-दो-समुद्देसु, पण्णारस कम्मभूमिसु, आदावण-रुक्ख-मूल-अब्भोवास- ठाण-मोण वीरासणेक्कपास -कुक्कुडासण-चउ- छ-पक्ख- खवणादिजोग -जुत्ताणं सव्वसाहूणं, णिच्चकालं, अच्चेमि, पूज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होदु मज्झं।

आलोचना

इच्छामि भंते ! चरित्ताऽयारो, तेरसविहो, परिहाविदो, पंच महव्वदाणि, पंच-समिदीओ, ति-गुत्तीओ चेदि। तत्थ पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वे रमणं से पुढवि-काइया जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा, आऊकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, तेऊ काइया जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा, वाऊ - काइया - जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा, वणप्फदि-काइया जीवा अणंताऽणंता हरिया, बीआ, अंकुरा, छिण्णा, भिण्णा एदेसिं, उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥१॥

बे-इंदिया जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा कुक्खि, किमि, संख, खुल्लय-वराडय-अक्ख-रिट्ठय-गण्डवाल संबुक्क, सिप्पि, पुलविकाइया एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥२॥

ते-इंदिया-जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा कुन्थूद्देहिय विंच्छिय-गोभिंद-गोजुव-मक्कुण पिपीलियाइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥३॥

चउरिंदिया-जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा दंसमसय-मक्खि-पयंग-कीड-भमर-महुयर-गोमच्छि-याइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥४॥

पचिंदिया-जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा अंडाइया, पोदाइया, जराइया, रसाइया, संसेदिमा, सम्मुच्छिमा, उब्भेदिमा, उववादिमा, अवि-चउरासीदि-जोणि-पमुह- सद- सहस्सेसु एदेसिं, उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥५॥

वद समि-दिंदिय रोधो लोचावासय-मचेल-मण्हाणं
खिदि-सयण-मदंतवणं ठिदि-भोयण मेयभत्तं च॥
एदे खलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता।
एत्थ पमाद कदादो अइचारादो णियत्तो हं॥२॥
छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं॥१॥

इस प्रकार आचार्य श्री उपर्युक्त पाठ को तीन बार बोलकर अरहंतदेव के समक्ष अपने दोषों की आलोचना करें। पश्चात् स्वयं प्रायश्चित लेकर निम्नलिखत पाठ तीन बार बोलें।

पंच महाव्रत-पञ्चसमिति-पञ्चेन्द्रियरोध- लोचादयो षडावश्यक-क्रिया-अष्टाविंशति- मूलगुणाः उत्तमक्षमामार्द-वार्जव-शौच-सत्य- संयम-तप- स्त्यागाकिञ्चन्य ब्रह्मचर्याणि दश-लाक्षणिको धर्मः, अष्टादश-शील-सहस्त्राणि, चतुरशीति-लक्षगुणाः, त्रयोदशविधं चारित्रं, द्वादशविधं तपश्चेति। सकलं-सम्पूर्णं अर्हत्सिद्धाऽचार्योपाध्याय-सर्व- साधु-साक्षिकं सम्यक्त्व- पूर्वकं दृढ़-व्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु॥१॥

पंचमहाव्रत........सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु॥२॥

पञ्चमहाव्रत........दृढव्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु॥३॥

निष्ठापनाचार्य भक्ति

नमोऽस्तु सर्वाऽतिचार विशुद्ध्यर्थं निष्ठापनाचार्य भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्। (कायोत्सर्ग करना)

श्रुत-जलधि-पारगेभ्यः स्व-पर-मत-विभावना-पटु-मतिभ्यः।
सुचरित-तपो-निधिभ्यो नमो गुरुभ्यो गुण-गुरुभ्यः॥१॥

छत्तीस-गुण-समग्गे पंच-विहाचार-करण-संदरिसे।
सिस्साणुग्गह-कुसले धम्माइरिए सदा वन्दे॥२॥

गुरु-भत्ति-संजमेण य तरंति संसार-सायरं घोरं।
छिण्णंति अट्ठ-कम्मं जम्मण-मरणं ण पावेंति॥३॥

ये नित्यं व्रत-मन्त्र-होम-निरता ध्यानाग्नि-होत्रा-कुला।
षट्-कर्माभि-रतास्तपो-धन-धनाः साधु क्रियाः साधवः।
शील-प्रावरणा गुण-प्रहरणा-श्चन्द्रार्क-तेजोधिकाः,
मोक्ष-द्वार-कपाट-पाटन-भटाः प्रीणंतु मां साधवः॥४॥

गुरवः पान्तु नो - नित्यं ज्ञान-दर्शन-नायकाः।
चारित्रार्णव-गंभीरा - मोक्ष-मार्गोपदेशकाः॥५॥

(यहाँ आचार्य सहित शिष्य मुनि और साधर्मी मुनि मिलकर आचार्य श्री के आगे निम्नलिखित पाठ बोलें)

इच्छामि भंते ! (पक्खियम्मि), (चउमासियम्मि), (संवच्छरियम्मि) आलोचेउं, पंचमहव्वदाणि तत्थ पढमं महव्वदं पाणादिवादादो वे रमणं, विदियं महव्वदं मुसावादादो वे रमणं, तिदियं महव्वदं अदिण्णा-दाणादो वे रमणं, चउत्थं महव्वदं मेहुणादो वे रमणं, पंचमं महव्वदं परिग्गहादो वे रमणं, छट्ठं अणुव्वदं राइभोयणादो वेरमणं, तिस्सु गुत्तीसु, णाणेसु, दंसणेसु, चरित्तेसु, बावीसाए परीसहेसु, पण-वीसाए भावणासु, पण-वीसाए किरियासु, अट्ठारस-सील-सहस्सेसु, चउरासीदि-गुण- सय-सहस्सेसु, बारसण्हं संजमाणं, बारसण्हं तवाणं, बारसण्हं अंगाणं, तेरसण्हं चरित्ताणं, चउदसण्हं पुव्वाणं, एयारसण्हं पडिमाणं दसविह मुण्डाणं, दसविह-समण-धम्माणं, दसविह-धम्मज्झाणाणं, णवण्हं बंभचेर-गुत्तीणं, णवण्हं णो-कसायाणं, सोलसण्हं कसायाणं, अट्ठण्हं कम्माणं, अट्ठण्हं सुद्धीणं, अट्ठण्हं पवयण-माउयाणं, सत्तण्हं भयाणं, सत्तविहसंसाराणं, छण्हं जीव-णिकायाणं, छण्हं आवासयाणं, पंचण्हं इन्दियाणं, पंचण्हं महव्वयाणं, पंचण्हं समिदीणं, पंचण्हं चरित्ताणं, चउण्हं सण्णाणं चउण्हं पच्चयाणं, चउण्हं उवसग्गाणं, मूलगुणाणं, उत्तरगुणाणं, दिट्ठियाए, पुट्ठियाए, पदोसियाए, परिदाव-णियाए, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, रागेण वा, दोसेण वा,

मोहेण वा, हस्सेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पिम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, एदेसिं अच्चासणदाए, तिण्हं दंडाणं, तिण्हं लेस्साणं, तिण्हं गारवाणं, तिण्हं अप्पसत्थ- संकिलेसपरिणामाणं, दोण्हं अट्टरुद्द, संकिलेस -परिणामाणं, मिच्छाणाण-मिच्छादंसण- मिच्छाचरित्ताणं, मिच्छत्त-पाउग्गं असंजमपाउग्गं, कसाय-पाउग्गं, जोग पाउग्गं, अप्पाउग्ग सेवणदाए, पाउग्ग-गरहणदाए इत्थ मे जो कोई (पक्खियम्मि) (चउमासियम्मि) (संवच्छरियम्मि) अदिक्कमो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो, तस्स भंते ! पडिक्कमामि पडिक्कंतं तस्स मे सम्मत्त-मरणं पंडियमरणं, वीरिय-मरणं, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति, होदु मज्झं।

वद-समि-दिंदिय-रोधो लोचाऽवासय-मचेल-मण्हाणं।
खिदि-सयण-मदंतवणं ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं च ॥१ ॥

एदे खलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता।
एत्थ पमाद-कदादो अइचारादो णियत्तो हं॥२ ॥

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं।

(यह पाठ तीन बार बोलना चाहिए)

पञ्चमहाव्रत-पञ्चसमिति-पञ्चेन्द्रियरोध लोचादि षडाऽवश्यक-क्रियाऽष्टाविंशति मूलगुणाः, उत्तमक्षमामार्दवार्जव -शौच-सत्य संयम-तप- स्त्यागाऽकिञ्चन्य- ब्रह्मचर्याणि दशलाक्षणिको धर्मः, अष्टादश-शील- सहस्त्राणि, चतुरशीति-लक्षगुणाः, त्रयोदशविधं चारित्रं, द्वादशविधं तपश्चेति, सकलं, सम्पूर्णं, अर्हत्सिद्धाऽचार्योपाध्याय-सर्व- साधु-साक्षिकं, सम्यक्त्व पूर्वकं दृढ़व्रतं, सुव्रतं समारूढं ते मे भवतु॥१॥

पञ्चमहाव्रत........सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु॥२॥

पञ्चमहाव्रत........समारूढं ते मे भवतु॥३॥

प्रतिक्रमण भक्तिः

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं (पाक्षिक) (चातुर्मासिक) (वार्षिक) प्रतिक्रमण क्रियायां कृत-दोष-निराकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव पूजा-वन्दना- स्तव समेतं श्री प्रतिक्रमण भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

णमो अरिहंताणं आदि दण्डक पेज नं. 137 पर पढ़े।

गणधर-वलय

जिनान् जिताऽराति-गणान् गरिष्ठान्,
देशाऽवधीन् सर्व-पराऽवधींश्-च।
सत्-कोष्ठ-बीजादि-पदाऽनुसारीन्।
स्तुवे गणेशानपि तद्-गुणाप्त्यै ॥१॥

संभिन्न-श्रोतान्वित-सन्-मुनीन्द्रान्,
प्रत्येक-सम्बोधित-बुद्ध-धर्मान्।
स्वयं-प्रबुद्धांश्च विमुक्ति-मार्गान्
स्तुवे गणेशानपि-तद्-गुणाप्त्यैः ॥२॥

द्विधा मनः पर्यय-चित्-प्रयुक्तान्,
द्विपञ्च-सप्तद्वय-पूर्व-सक्तान्।
अष्टांग नैमित्तिक शास्त्र दक्षान्,
स्तुवे गणेशानपि-तद् गुणाप्त्यैः ॥३॥

विकुर्वणाऽख्यर्द्धि-महा-प्रभावान्
विद्याधरांश्चारण-ऋद्धि-प्राप्तान्।
प्रज्ञाऽश्रितान् नित्य-ख-गामिनश्च,
स्तुवे गणेशानपि-तद् गुणाप्त्यैः ॥४॥

आशीर्-विषान् दृष्टि-विषान् मुनीन्द्रा-
नुग्राति-दीप्तोत्तम तप्त तप्तान्।
महाऽतिघोर-प्रतपः प्रसक्तान्,
स्तुवे गणेशानपि-तद्-गुणाप्त्यैः ॥५ ॥

वन्द्यान् सुरैर्-घोर-गुणांश्च लोके,
पूज्यान् बुधैर्-घोर-पराक्रमांश्च।
घोरादि-संसद-गुण ब्रह्म युक्तान्,
स्तुवे गणेशानपि तद् गुणाप्त्यैः ॥६ ॥

आमर्द्धि-खेलर्द्धि-प्रजल्ल-विडर्द्धि-
सर्वर्द्धि-प्राप्तांश्च व्यथादि-हंत्रून्।
मनो-वचः काय-बलोपयुक्तान्
स्तुवे गणेशानपि-तद्-गुणाप्त्यैः ॥७ ॥

सत् क्षीर-सर्पिर्-मधुराऽमृतर्द्धीन्,
यतीन् वराऽक्षीण महानसांश्च।
प्रवर्धमानांस्-त्रिजगत्-प्रपूज्यान्,
स्तुवे गणेशानपि-तद्-गुणाप्त्यैः ॥८ ॥

सिद्धालयान् श्रीमहतोऽतिवीरान्,
श्री वर्द्धमानर्द्धि विबुद्धि-दक्षान्।
सर्वान् मुनीन् मुक्तिवरा-नृषीन्द्रान्,
स्तुवे गणेशानपि-तद्-गुणाप्त्यैः॥९॥

नृ-सुर-खचर-सेव्या विश्व-श्रेष्ठर्द्धि-भूषा,
विविध-गुण-समुद्रा मार मातंग-सिंहाः।
भव-जल-निधि-पोता वन्दिता मे दिशन्तु,
मुनिगण-सकलाः श्री-सिद्धिदाः सदृषीन्द्राः॥१०॥

नित्यं यो गणभृन्मंत्र, विशुद्धसन् जपत्यमुम्।
आस्रवस्तस्य पुण्यानां, निर्जरा पापकर्मणाम्॥
नश्यादुपद्रव कश्चिद्, व्याधिभूत विषादिभिः।
स-दसत् वीक्षणे स्वप्ने, समाधिश्च भवेन्मृतो॥

(यहाँ आचार्य श्री निम्नलिखित प्रतिक्रमण दण्डक बोले और उतने काल पर्यन्त सर्व शिष्य एवं साधर्मी मुनिगण कायोत्सर्ग मुद्रा से स्थित रहकर सुनें।)

प्रतिक्रमण-दण्डक

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं॥१॥

णमो जिणाणं[१], णमो ओहि जिणाणं[२], णमो परमोहि-जिणाणं[३], णमो सव्वोहि-जिणाणं[४], णमो अणंतोहि-जिणाणं[५], णमो कोट्ठ-बुद्धीणं[६], णमो बीज-बुद्धीणं[७], णमो पादाणु-सारीणं[८], णमो संभिण्ण-सोदारणं[९], णमो सयं-बुद्धाणं[१०], णमो पत्तेय-बुद्धाणं[११], णमो बोहिय-बुद्धाणं[१२], णमो उजुमदीणं[१३], णमो विउल-मदीणं[१४], णमोदस पुव्वीणं[१५], णमो चउदस पुव्वीणं[१६], णमो अट्ठंग-महा-णिमित्त- कुसलाणं[१७], णमो विउव्वइड्ढि-पत्ताणं[१८], णमो विज्जाहराणं[१९], णमो चारणाणं[२०], णमो पण्ण-समणाणं[२१], णमो आगासगामीणं[२२], णमो आसी- विसाणं[२३], णमो दिट्ठिविसाणं[२४], णमो उग्ग तवाणं[२५], णमो दित्त-तवाणं[२६], णमो तत्त-तवाणं[२७], णमो महा तवाणं[२८], णमो घोर-तवाणं[२९], णमो घोर-गुणाणं[३०], णमो घोर परक्कमाणं[३१], णमो घोर-गुण-बंभयारीणं[३२], णमो आमोसहि-पत्ताणं[३३], णमो खेल्लोसहि-पत्ताणं[३४], णमो जल्लो सहि-पत्ताणं[३५], णमो विप्पोसहि-पत्ताणं[३६], णमो सव्वोसहि-पत्ताणं[३७], णमो मण-बलीणं[३८], णमो वचि-बलीणं[३९], णमो कायबलीणं[४०], णमो खीर-सवीणं[४१], णमो सप्पि-सवीणं[४२], णमो महुर सवीणं[४३], णमो अमिय-सवीणं[४४],

णमो अक्खीण महाणसाणं[४५], णमो बड्ढमाणाणं[४६], णमो सिद्धाऽयदणाणं[४७], णमो भयवदो-महदि-महावीर- बड्ढमाण-बुद्ध-रिसीणो[४८] चेदि।

जस्संतियं धम्म-पहं णियंच्छे, तस्संतियं वेणइयं पउं जे।
काएण वाचा मणसा वि णिच्चं, सक्कारए तं सिर-पंचमेण॥१॥

सुदं मे आउस्संतो ! इह खलु समणेण, भयवदो, महदि-महावीरेण, महा-कस्सवेण, सव्वण्हुणा, सव्व लोग-दरिसिणा, सदेवासुर-माणुसस्स लोयस्स, आगदिगदि-चवणोववादं, बंधं, मोक्खं, इड्ढिं, ठिदिं, जुदिं, अणुभागं, तक्कं, कलं, मणो, माणसियं, भूतं, कयं, पडिसेवियं, अदिकम्मं, अरुहकम्मं, सव्वलोए, सव्वजीवे, सव्वभावे, सव्वं समं जाणंता पस्संता विहर-माणेण, समणाणं, पंचमहव्वदाणि, राइभोयण-वेरमण-छट्ठाणि अणुव्वदाणि स-भावणाणि, समाउग पदाणि, स-उत्तर-पदाणि, सम्मं धम्मं उवदेसिदाणि। तं जहा -

पढमे महव्वदे पाणा- दिवादादो वे रमणं, विदिए महव्वदे मुसावादादो वे रमणं, तिदिए महव्वदे अदिण्णादाणादो वे रमणं, चउत्थे महव्वदे मेहुणादो वे रमणं, पंचमे महव्वदे परिग्गहादो वे रमणं, छट्ठे अणुव्वदे राइ-भोयणादो वे रमणं चेदि।

तत्थ पढमे महव्वदे सव्वं भंते ! पाणादिवादं पच्चक्खामि जावज्जीवं, तिविहेण-मणसा, वचसा, काएण, से एइंदिया वा, बे इंदिया वा, ते इंदिया वा, चउरिदिंया वा, पंचिंदिया वा, पुढवि-काइए वा, आऊ-काइए वा, तेऊ-काइए-वा, वाऊ-काइए-वा, वणप्फदि-काइए वा, तस काइए वा, अंडाइए वा, पोदाइए वा, जराइए वा, रसाइए वा, संसेदिमे वा, समुच्छिमे वा, उब्भेदिमे वा, उववादिमे वा, तसे वा, थावरे वा, बादरे वा, सुहुमे वा, पाणे वा, भूदे वा, जीवे वा, सत्ते वा, पज्जत्ते वा, अपज्जत्ते वा, अविचउरासीदि- जोणि-पमुह-सद-सहस्सेसु, णेव सयं पाणादिवादिज्ज णो अण्णेहिं पाणे, अदिवादावेज्ज, अण्णेहिं पाणे, अदिवादिज्जंतो वि ण समणुमणिज्ज। तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं, वोस्सरामि।

पुव्विंचणं भंते ! जं पि मए रागस्स वा, दोसस्स वा, मोहस्स वा, वसंगदेण सयं पाणे अदिवादिदे, अण्णेहिं पाणे, अदिवादाविदे, अण्णेहिं पाणे अदिवादिज्जंते वि समणुमण्णिदो तं वि।

*** इमस्स णिग्गंथस्स, पवयणस्स, अणुत्तरस्स, केवलियस्स, केवलि-पण्णत्तस्स धम्मस्स-अहिंसा- लक्खणस्स, सच्चा- हिट्ठियस्य, विणय- मूलस्स, खमा-बलस्स अट्ठारस-सील- सहस्स- परिमंडियस्स, चउरासीदि-गुण-सय-सहस्स, विहू-सियस्स, णवसु- बंभचेर-गुत्तस्स, णियदि-लक्खणास्स, परिचाग- फलस्स, उवसम-पहाणस्स, खंतिमग्ग-देसयस्स, मुत्ति-मग्ग- पयासयस्स, सिद्धि-मग्गपज्जव, साहणस्स, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, अण्णाणेण वा, अदंसणेण वा, अवीरिएण वा, असंयमेण वा असमणेण वा, अणहि-गमणेण वा, अभिमंसिदाए वा, अबोहिदाए वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हस्सेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, केण वि कारणेण जादेण वा, आलसदाए, बालिसदाए, कम्म-भारिगदाए, कम्मगुरु-गदाए, कम्म-दुच्चरिदाए, कम्म-पुरुक्कडदाए, ति-गारव-गुरु- गदाए, अबहुसुददाए, अविदिद- परमट्ठदाए, तं सव्वं पुव्वं, दुच्चरियं गरहामि। आगमेसिं च अपच्चक्खियं-पच्चक्खामि, अणालोचियं-आलोचेमि, अणिंदियं- णिंदामि, अगरहियं-गरहामि, अपडिक्कंतं- पडिक्कमामि, विराहणं

वोस्सरामि, आराहणं अब्भुट्ठेमि, अण्णाणं वोस्सरामि, सण्णाणं अब्भुट्ठेमि, कुदंसणं वोस्सरामि, सम्मदंसणं अब्भुट्ठेमि, कुचरियं वोस्सरामि, सुचरियं अब्भुट्ठेमि, कुतवं वोस्सरामि, सुतवं अब्भुट्ठेमि, अकरणिज्जं वोस्सरामि, करणिज्जं अब्भुट्ठेमि, अकिरियं वोस्सरामि, किरियं अब्भुट्ठेमि, पाणादिवादं वोस्सरामि, अभयदाणं अब्भुट्ठेमि, मोसं वोस्सरामि, सच्चं अब्भुट्ठेमि, अदिण्णादाणं वोस्सरामि, दिण्णं-कप्प-णिज्जं अब्भुट्ठेमि, अबंभं वोस्सरामि, बंभचरियं अब्भुट्ठेमि, परिग्गहं वोस्सरामि, अपरिग्गहं अब्भुट्ठेमि, राइ-भोयणं वोस्सरामि, दिवा- भोयण-मेग-भत्तं- पच्चुप्पणं-फासुगं-अब्भुट्ठेमि, अट्ट- रुद्द- ज्झाणं वोस्सरामि, धम्म सुक्क-ज्झाणं अब्भुट्ठेमि, किण्ह-णील-काउ-लेस्सं वोस्सरामि, तेउ-पम्म- सुक्क-लेस्सं अब्भुट्ठेमि, आरंभं वोस्सरामि, अणारंभं अब्भुट्ठेमि, असंजमं वोस्सरामि, संजमं अब्भुट्ठेमि, सग्गंथं वोस्सरामि, णिग्गंथं अब्भुट्ठेमि, सचेलं वोस्सरामि, अचेलं अब्भुट्ठेमि, अलोचं वोस्सरामि, लोचं अब्भुट्ठेमि, ण्हाणं वोस्सरामि, अण्हाणं अब्भुट्ठेमि, अखिदि सयणं वोस्सरामि, खिदि-सयणं अब्भुट्ठेमि, दंतवणं वोस्सरामि, अदंतवणं अब्भुट्ठेमि, अट्ठिदि-भोयणं वोस्सरामि, ठिदि-भोयण- मेग-भत्तं अब्भुट्ठेमि, अपाणिपत्तं वोस्सरामि, पाणिपत्तं अब्भुट्ठेमि, कोहं वोस्सरामि, खंतिं अब्भुट्ठेमि, माणं

वोस्सरामि, मद्दवं अब्भुट्ठेमि, मायं वोस्सरामि, अज्जवं अब्भुट्ठेमि, लोहं वोस्सरामि, संतोसं अब्भुट्ठेमि, अतवं वोस्सरामि, दुवादस-विह-तवो- कम्मं अब्भुट्ठेमि मिच्छत्तं परिवज्जामि, सम्मत्तं उवसंपज्जामि, असीलं परिवज्जामि, सुसीलं उवसंपज्जामि, ससल्लं परिवज्जामि, णिसल्लं उवसंपज्जामि, अविणयं परिवज्जामि, विणयं उवसंपज्जामि, अणाचारं परिवज्जामि, आचारं उवसंपज्जामि, उम्मग्गं परिवज्जामि, जिणमग्गं उवसंपज्जामि, अखंतिं परिवज्जामि, खंतिं उवसंपज्जामि, अगुत्तिं परिवज्जामि, गुत्तिं उवसंपज्जामि, अमुत्तिं परिवज्जामि, सुमुत्तिं उवसंपज्जामि, असमाहिं परिवज्जामि, सुसमाहिं उवसंपज्जामि, ममत्तिं परिवज्जामि, णिम्ममत्तिं उवसंपज्जामि, अभावियं भावेमि, भावियं ण भावेमि! इमं णिग्गंथं पव्वयणं, अणुत्तरं केवलियं-पडिपुण्णं, णेगाइयं, सामाइयं संसुद्धं, सल्लघट्टाणं-सल्लघत्ताणं, सिद्धि मग्गं, सेढि मग्गं, खंति-मग्गं, मुत्ति-मग्गं, पमुत्ति मग्गं, मोक्ख-मग्गं पमोक्ख-मग्गं, णिज्जाण मग्गं, णिव्वाण मग्गं, सव्व-दुक्ख-परिहाणि-मग्गं, सुचरिय- परिणिव्वाण-मग्गं, जत्थ-ठिया-जीवा, सिज्झंति, बुज्झंति, मुंचंति, परिणिव्वाणयंति, सव्व-दुक्खाणमंतं करेंति, तं सद्दहामि, तं पत्तियामि, तं रोचेमि,

तं फासेमि, इदो उत्तरं, अण्णं णत्थि, ण भूदं, ण भविस्सदि कयाचि वा, कुदोचि वा, णाणेण वा, दंसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, सीलेण वा, गुणेण वा, तवेण वा णियमेण वा, वदेण वा, विहारेण वा, आलएण वा, अज्जवेण वा, लाहवेण वा, अण्णेण वा, वीरिएण वा, समणोमि, संजदोमि, उवरदोमि, उवसंतोमि, उवहि-णियडि-माण-माया-मोस-मूरण, मिच्छा णाण, मिच्छा दंसण, मिच्छा चरित्तं च पडिविरदोमि। सम्म णाण-सम्मदंसण- सम्मचरित्तं च रोचेमि। जं जिण वरेहिं पण्णत्तो, जो मए पक्खिय (चउमासिय) (संवच्छरिय) इरयावहि-केस-लोचाइचारस्स, संथारादिचारस्स, पंथादिचारस्स, सव्वादिचारस्स, उत्तमट्ठस्स, सम्मचारित्तं च रोचेमि।

पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वे रमणं, उवट्ठावण-मंडले, महत्थे, महागुणे, महाणुभावे, महाजसे, महापुरिसाणु-चिण्णे, अरहंत-सक्खियं, सिद्ध-सक्खियं, साहु सक्खियं, अप्प-सक्खियं, पर-सक्खियं, देवता-सक्खियं, उत्तमट्ठम्हि। ''इदं मे महव्वदं, सुव्वदं, दिढव्वदं होदु, णित्थारयं, पारयं, तारयं, आराहियं चावि ते मे भवतु।''

प्रथमं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां, सम्यक्त्वपूर्वकं दृढ़व्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु॥३॥

णमो अरिहंताणं................सव्वसाहूणं॥३॥

आहावरे विदिए महव्वदे सव्वं भंते ! मुसावादं पच्चक्खामि, जावज्जीवेण, तिविहेण मणसा-वचसा- काएण, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हस्सेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पिम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, अणेण केण वि कारणेण जादेण वा, णेव सयं मोसं भासेज्ज, णो अण्णेहिं मोसं भासाविज्ज, णो अण्णेहिं भासिज्जंतं वि समणुमणिज्ज, तस्स भंते! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं वोस्सरामि।

पुव्विंचणं भंते! जं वि मए रागस्स वा, दोसस्स वा, मोहस्स वा, वसंगदेण सयं मोसं भासियं, अण्णेहिं मोसं भासावियं, अण्णेहिं मोसं भासिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तं वि।

इमस्स णिग्गंथस्स.............सम्मचरित्तं च रोचेमि। पेज नं. 192 पर देखें

विदिए महव्वदे मुसावादादो वे रमणं, उवट्ठावण-मंडले, महत्थे, महागुणे, महाणुभावे, महाजसे, महापुरिसाणु-चिण्णे, अरहंत-सक्खियं, सिद्ध-सक्खियं, साहु सक्खियं, अप्प-सक्खियं, पर सक्खियं, देवता-सक्खियं, उत्तमट्ठम्हि। "इदं मे महव्वदं, सुव्वदं, दिढव्वदं होदु, णित्थारयं, पारयं, तारयं, आराहियं चावि ते मे भवतु।"

द्वितीयं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां, सम्यक्त्वपूर्वकं दृढ़व्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु॥३॥

णमो अरिहंताणं................सव्वसाहूणं॥३॥

आहावरे तिदिए महव्वदे सव्वं भंते ! अदिण्णा-दाणं पच्चक्खामि, जावज्जीवं, तिविहेण मणसा-वचसा-काएण, से देसे वा, गामे वा, णयरे वा, खेडे वा, कव्वडे वा, मडम्बे वा, मंडले वा, पट्टणे वा, दोण मुहे वा, घोसे वा, आसणे वा, सहाए वा, संवाहे वा, सण्णिवेसे वा, तिणं वा, कट्ठं वा, वियडिं वा, मणिं वा, खेत्ते वा, खले वा, जले वा, थले वा, पहे वा, उप्पहे वा, रण्णे वा, अरण्णे वा, णट्ठं वा, पमुट्ठं वा, पडिदं वा, अपडिदं वा, सुणिहिदं वा, दुण्णिहिदं वा, अप्पं

वा, बहुं वा, अणुयं वा, थूलं वा, सचित्तं वा, अचित्तं वा, मज्झत्थं वा, बहित्थं वा, अविदंतंतरसोहण -णिमित्तं, वि णेव सयं अदत्तं गेण्हिज्ज, णो अण्णेहिं अदत्तं गेण्हाविज्ज णो अण्णेहिं अदत्तं गेण्हिज्जंतं विसमणुमणिज्ज, तस्स भंते ! अइचारं, पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं वोस्सरामि।

पुव्विंचणं भंते! जं वि मए रागस्स वा, दोसस्स वा, मोहस्स वा, वसंगदेण, सयं अदत्तं गेण्हिदं, अण्णेहिं अदत्तं गेण्हाविदं, अण्णेहिं अदत्तं गेण्हिज्जंतं, वि समणुमण्णिदो तं वि।

इमस्स णिग्गंथस्स.............सम्मचरित्तं च रोचेमि। पेज नं. 192 पर देखें

तिदिए महव्वदे अदिण्णा-दाणादो वे रमणं, उवट्ठावण-मंडले, महत्थे, महागुणे, महाणुभावे, महाजसे, महापुरिसाणु-चिण्णे, अरहंत-सक्खियं, सिद्ध-सक्खियं, साहु सक्खियं, अप्प-सक्खियं, पर-सक्खियं, देवता-सक्खियं, उत्तमट्ठम्हि। ''इदं मे महव्वदं, सुव्वदं, दिढव्वदं होदु, णित्थारयं, पारयं, तारयं, आराहियं चावि ते मे भवतु।''

तृतीयं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां, सम्यक्त्व पूर्वकं दृढ़व्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु॥३॥

णमो अरिहंताणं................सव्वसाहूणं॥३॥

आहावरे चउत्थे महव्वदे सव्वं भंते ! अबंभं पच्चक्खामि, जावज्जीवं, तिविहेण मणसा-वचसा- काएण, से देविएसु वा, माणुसिएसु वा, तिरिच्छिएसु वा, अचेयणिएसु वा, कट्ठ-कम्मेसु वा, चित्त कम्मेसु वा, पोत्त कम्मेसु वा, लेप्प कम्मेसु वा, लय-कम्मेसु वा, सिल्ला-कम्मेसु वा, गिह-कम्मेसु वा, भित्ति कम्मेसु वा, भेदकम्मेसु वा, भंडकम्मेसु वा, धादु-कम्मेसु वा, दंत कम्मेसु वा, हत्थ संघट्टणदाए, पाद-संघट्टणदाए, पुग्गल-संघट्टणदाए, मणुण्णामणुण्णेसु सद्देसु, मणुण्णामणुण्णेसु रूवेसु, मणुण्णामणुण्णेसु गंधेसु, मणुण्णामणुण्णेसु रसेसु, मणुण्णामणुण्णेसु फासेसु, सोदिंदय परिणामे, चक्खिंदिय-परिणामे, घाणिंदिय-परिणामे, जिब्भिंदिय-परिणामे, फासिंदिय-परिणामे, णो-इन्दिय, परिणामे, अगुत्तेण, अगुत्तिंदिएण, णेव सयं अबंभं सेविज्ज, णो अण्णेहिं अबंभं सेवाविज्ज, णो अण्णेहिं अबंभं सेविज्जंतं वि समणुमणिज्ज, तस्स भंते ! अइचारं, पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं वोस्सरामि।

पुव्विंचणं भंते! जं वि मए रागस्स वा, दोसस्स वा मोहस्स वा, वसंगदेण सयं अबंभं सेवियं, अण्णेहिं अबंभं सेवावियं, अण्णेहिं अबंभं सेविज्जंतं वि समणुमण्णिदो तं वि।

इमस्स णिग्गंथस्स.............सम्मचरित्तं च रोचेमि। पेज नं. 192 पर देखें

चउत्थे महव्वदे अबंभादो वे रमणं, उवट्ठावण-मंडले, महत्थे, महागुणे, महाणुभावे, महाजसे, महापुरिसाणु-चिण्णे, अरहंत-सक्खियं, सिद्ध-सक्खियं, साहु-सक्खियं, अप्प-सक्खियं, पर सक्खियं, देवता-सक्खियं, उत्तमट्ठम्हि "इदं मे महव्वदं, सुव्वदं, दिढव्वदं होदु, णित्थारयं, पारयं, तारयं, आराहियं चावि ते मे भवतु।"

चतुर्थं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां, सम्यक्त्वपूर्वकं दृढ़व्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु॥३॥

णमो अरिहंताणं................सव्वसाहूणं॥३॥

आहावरे पंचमे महव्वदे सव्वं भंते ! दुविहं-परिग्गहं पच्चक्खामि। तिविहेण मणसा-वचसा-काएण। सो परिग्गहो दुविहो अब्भंतरो बाहिरो चेदि। तत्थ अब्भंतर परिग्गहं।

मिच्छत्त-वेय-राया- तहेव हस्सादिया य छद्दोसा।
चत्तारि तह कसाया चउदस अब्भंतरं गंथा॥१॥

तत्थ बाहिरं परिग्गहं से हिरण्णं वा, सुवण्णं वा, धणं वा, खेत्तं वा, खलं वा, वत्थुं वा, पवत्थुं वा, कोसं वा, कुठारं वा, पुरं वा, अंत-उरं वा, बलं वा, वाहणं वा, सयडं वा, जाणं वा, जपाणं वा, जुगं वा, गद्दियं वा, रहं वा, सदणं वा, सिवियं वा, दासी-दास-गो- महिस-गवेडयं मणि-मोत्तिय संख- सिप्पि पवालयं, मणिभाजणं वा, सुवण्ण भाजणं वा, रजत भाजणं वा, कंस भाजणं वा, लोह भाजणं वा, तंब भाजणं वा, अंडजं वा, वोडजं वा, रोमजं वा, वक्कलजं वा, चम्मजं वा, अप्पं वा, बहुं वा, अणुं वा, थूलं वा, सचित्तं वा, अचित्तं वा, अमत्थुं वा, बहित्थं वा, अवि वालग्ग-कोडि मित्तं पि णेव सयं असमण-पाउग्गं परिग्गहं गिण्हिज्ज णो अण्णेहिं असमण-पाउग्गं परिग्गहं-गेण्हाविज्ज, णो अण्णेहिं असमण-पाउग्गं परिग्गहं गिण्हिज्जंतं वि समणुमणिज्ज, तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं वोस्सरामि।

पुव्विंचणं भंते! जं वि मए रागस्स वा, दोसस्स वा, मोहस्स वा, वसंगदेण सयं असमण-पाउग्गं परिग्गहं गिण्हियं अण्णेहिं असमण-पाउग्गं-परिग्गहं गेण्हावियं, अण्णेहिं असमण-पाउग्गं-परिग्गहं गेण्हिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तं वि।

इमस्स णिग्गंथस्स.............सम्मचरित्तं च रोचेमि। पेज नं. 192 पर देखें

पंचमे महव्वदे परिग्गहादो वे रमणं, उवट्ठावण-मंडले, महत्थे, महागुणे, महाणुभावे, महाजसे, महापुरिसाण-चिण्णे, अरहंत-सक्खियं, सिद्ध-सक्खियं, साहु सक्खियं, अप्प-सक्खियं, पर सक्खियं, देवता-सक्खियं, उत्तमट्ठम्हि। "इदं मे महव्वदं, सुव्वदं, दिढव्वदं होदु, णित्थारयं, पारयं, तारयं, आराहियं चावि ते मे भवतु।"

पंचमं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्व पूर्वकं दृढ़व्रतं सुव्रतं समारूढं ते मे भवतु॥३॥

णमो अरिहंताणं.............सव्वसाहूणं॥३॥

आहावरे छट्ठे अणुव्वदे सव्वं भंते ! राइ-भोयणं पच्चक्खामि जावज्जीवं तिविहेण मणसा-वचसा-काएण, से असणं वा, पाणं वा, खादियं वा, सादियं वा, कडुयं वा, कसायं वा, अमिलं वा, महुरं वा, लवणं वा, अलवणं वा, सचित्तं वा, अचित्तं वा, तं-सव्वं-चउव्विहं-आहारं, णेव सयं रत्तिं भुंजिज्ज, णो अण्णेहिं रत्तिं भुंजाविज्ज, णो अण्णेहिं रत्तिं भुंजिज्जंतं पि समणुमणिज्ज, तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं वोस्सरामि।

पुव्विंचणं भन्ते! जं वि मए रागस्स वा, दोसस्स वा, मोहस्स वा, वसंगदेण वा, चउव्विहो आहारो, रत्तिं भुत्तो,

अण्णेहिं रत्तिं भुंजाविदो, अण्णेहिंरत्तिं भुंजिज्जंतो वि समणुमण्णिदो तं वि।

इमस्स णिग्गंथस्स.............सम्मचरित्तं च रोचेमि। पेज नं. 192 पर देखें

छट्ठे अणुव्वदे राइ-भोयणादो वे रमणं, उवट्ठावण-मंडले महत्थे, महागुणे, महाणुभावे, महाजसे, महापुरिसाण-चिण्णे, अरहंत-सक्खियं, सिद्ध-सक्खियं, साहु-सक्खियं, अप्प- सक्खियं, पर सक्खियं, देवता-सक्खियं, उत्तमट्ठम्हि इदं मे अणुव्वदं, सुव्वदं, दिढव्वदं होदु, णित्थारयं, पारयं, तारयं, आराहियं चावि ते मे भवतु।''

षष्ठं अणुव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां, सम्यक्त्वपूर्वकं दृढ़व्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु॥३॥

णमो अरिहंताणं................सव्वसाहूणं॥३॥

आलोचना चूलिका

चूलियंतु पवक्खामि भावना पंचविंसदी।
पंच-पंच अणुण्णादा एक्केक्कम्हि महव्वदे॥१॥

मणगुत्तो वचिगुत्तो इरिया-काय-संयदो।
एसणा-समिदि संजुत्तो पढमं वदमस्सिदो॥२॥

अकोहणो अलोहो य भय-हस्स-विवज्जिदो।
अणुवीचि-भास-कुसलो विदियं वदमस्सिदो॥३॥

अदेहणं भावणं चावि उग्गहं य परिग्गहे।
संतुट्ठो भत्तपाणेसु तिदियं वदमस्सिदो॥४॥

इत्थिकहा इत्थि - संसग्ग - हास-खेड-पलोयणे।
णियमम्मि ट्ठिदो णियत्तो य चउत्थं वदमस्सिदो॥५॥

सचित्ताचित्त - दव्वेसु बज्झ - मब्भंतरेसु य।
परिग्गहादो विरदो पंचमं वदमस्सिदो॥६॥

धिदिमंतो खमाजुत्तो, झाण-जोग-परिट्ठिदो।
परिसहाण-उरं देत्तो उत्तमं वदमस्सिदो॥७॥

जो सारो सव्वसारेसु सो सारो एस गोयम।
सारं झाणंति णामे ण सव्वं बुद्धेहिं देसिदं॥८॥

इच्चेदाणि पंचमहव्वदाणि, राइ-भोयणादो वेरमणं छट्ठाणि, सभावणाणि, समाउग्ग-पदाणि, स उत्तर-पदाणि, सम्मं धम्मं, अणुपाल-इत्ता, समणा, भयवंता, णिग्गंथा होऊण, सिज्झंति, बुज्झंति, मुच्चंति, परिणिव्वाणयंति सव्वदुक्खाणमंतं करेंति, परिविज्जाणंति। तं जहा -

पाणादिवादं चहि मोसगं च, अदत्त मेहुण्ण परिग्गहं च।
वदाणि सम्मं अणुपाल-इत्ता, णिव्वाण-मग्गं विरदा उवेंति॥१॥

जाणि काणि वि सल्लाणि गरहिदाणि जिण-सासणे।
ताणि सव्वाणि वोसरित्ता णिसल्लो विहरदे सया-मुणी॥२॥
उप्पण्णाऽणुप्पण्णा माया अणुपुव्वं सो णिहंतव्वा।
आलोयण पडिकमणं णिंदण गरहणादाए॥३॥
अब्भुट्ठिद-करण-दाए अब्भुट्ठिद-दुक्कड-णिराकरणदाए।
भवं भाव पडिक्कमणं सेसा पुण दव्वदो भणिदा॥४॥
एसो पडिक्कमण-विही पण्णत्तो जिणवरेहिं सव्वेहिं।
संजम तव-ट्ठिदाणं णिग्गंथाणं महरिसीणं॥५॥
अक्खर-पयत्थ-हीणं मत्ता-हीणं च जं भवे एत्थ।
तं खमउ णाण-देवय ! देउ समाहिं च बोहिं च॥६॥
काउण णमोक्कारं अरहंताणं तहेव सिद्धाणं।
आइरिय-उवज्झायाणं लोयम्मि य सव्वसाहूणं॥७॥

इच्छामि भंते ! पडिक्कमणमिदं, सुत्तस्स, मूलपदाणं, उत्तर-पदाण-मच्चासणदाए तं जहा -

पदादि की अवहेलना सम्बन्धी प्रतिक्रमण

णमोक्कारपदे, अरहंत पदे, सिद्धपदे, आइरियपदे, उवज्झाय-पदे, साहु-पदे, मंगल-पदे, लोगोत्तम-पदे, सरण-पदे सामाइये-पदे, चउवीस- तित्थयर-पदे, वंदण-पदे, पडिक्कमण-

पदे, पच्चक्खाण-पदे, काउस्सग्ग-पदे, असीहिय-पदे, निसीहिये-पदे, अंगंगेसु, पुव्वंगेसु, पइण्णएसु, पाहुडेसु, पाहुड-पाहुडेसु, कदकम्मेसु वा, भूद कम्मेसु वा, णाणस्स-अइक्कमणदाए, दंसणस्स-अइक्कमणदाए, चरित्तस्स-अइक्कमणदाए, तवस्स-अइक्कमणदाए, वीरियस्स-अइक्कमणदाए, से अक्खर-हीणं वा, सर हीणं वा, विंजण-हीणं वा, पद हीणं वा, अत्थ-हीणं वा, गंथ हीणं वा, थएसु वा, थुइसु वा, अट्टक्खाणेसु वा, अणि-योगेसु वा, अणि योगद्दारेसु वा, जे भावा पण्णत्ता, अरहंतेहिं, भयवंतेहि, तित्थयरेहिं, आदियरेहिं, तिलोग-णाहेहिं, तिलोग-बुद्धेहिं, तिलोग-दरसीहिं, ते सद्दहामि, ते पत्तियामि, ते रोचेमि, ते फासेमि, ते सद्दहंतस्स, ते पत्तयंतस्स, ते रोचयंतस्स, ते फासयंतस्स, जो मए (पक्खिओ) (चउमासिओ) (संवच्छरियो) अदिक्कमो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो, अकालो, सज्झाओ, कओ काले वा, परिहाविदो, अच्छाकारिदं, मिच्छामेलिदं, आमेलिदं, वा मेलिदं अण्णहा-दिण्णं, अण्णहा-पडिच्छदं, आवासएसु, परिहीणदाए तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

अह पडिवदाए, विदियाए, तिदियाए, चउत्थीए, पंचमीए, छट्ठीए, सत्तमीए, अट्ठमीए, णवमीए, दसमीए, एयारसीए, बारसीए, तेरसीए, चउद्दसीए, पुण्ण-मासीए, पण्णरस- दिवसाणं, पण्णरस-राईणं (चउण्हं-मासाणं, अट्ठणं-पक्खाणं, वीसुत्तरसय-दिवसाणं, वीसुत्तरसय राइणं) (बारसण्हं-मासाणं चउवीसण्हं-पक्खाणं) तिण्हिं-छावट्ठि-सय दिवसाणं, तिण्हिं छावट्ठि-सय राईणं) (पंचवरिसादो) परदो, अब्भतंरदो वा, दोण्हं अट्ट रुद्ध संकिलेस-परिणामाणं तिण्हं-अप्पसत्थ- संकिलेस-परिणामाणं, तिण्हं-दंडाणं, तिण्हं लेस्साणं, तिण्हं-गुत्तीणं, तिण्हं गारवाणं, तिण्हं-सल्लाणं, चउण्हं सण्णाणं, चउण्हं-कसायाणं, चउण्हं उवसग्गाणं, पंचण्हं-महव्वयाणं, पंचण्हं-इंदियाणं, पंचण्हं- समिदीणं, पंचण्हं-चरित्ताणं, छण्हं-आवासयाणं, छण्हं जीव णिकायाणं, सत्तण्हं-भयाणं, सत्त विहसंसाराणं, अट्ठण्हं-मयाणं अट्ठण्हं-सुद्धीणं, अट्ठण्हं कम्माणं, अट्ठण्हं-पवयण-माउयाणं, णवण्हं-बंभचेर-गुत्तीणं, णवण्हं-णो-कसायाणं, दस-विह-मुंडाणं, दसविह-समण- धम्माणं, दस विह- धम्मज्झाणाणं, बारसण्हं संजमाणं, बारसण्हं तवाणं, बारसण्हं अंगाणं, तेरसण्हं किरियाणं, चउदसण्हं पुव्वाण्हं, पण्णरसण्हं पमायाणं, सोलसण्हं कसायाणं, बाबीसाए परीसहेसु, पणवीसाए किरियासु,

पणवीसाए भावणासु, अट्ठारस-सील-सहस्सेसु, चउरासीदि-गुण-सय- सहस्सेसु, मूलगुणेसु, उत्तरगुणेसु, अदिक्कमो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो, तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि पडिक्कंतं, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदं, तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं वोस्सरामि, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, णमोक्कारं करेमि, पज्जुवासं करेमि, ताव कालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं॥१॥

श्रावक के 12 व्रतों के अन्तर्गत पांच अणुव्रतों का वर्णन

पढमं ताव सुदं मे आउस्संतो ! इह खलु समणेण, भयवदा, महदि, महावीरेण, महाकस्सवेण, सव्वण्हुणा, सव्व-लोय-दरसिणा, सावयाणं, सावियाणं, खुड्डुयाणं, खुड्डीयाणं, कारणेण, पंचाणुव्वदाणि, तिण्णि, गुणव्वदाणि, चत्तारि सिक्खावदाणि, बारस-विहं गिहत्थ-धम्मं सम्मं उवदेसियाणि। तत्थ इमाणि पंचाणुव्वदाणि पढमे अणुव्वदे थूलयडे पाणादिवादादो वे रमणं, विदिये अणुव्वदे थूलयडे मुसावादादो वे रमणं, तिदिये थूलयडे अणुव्वदे अदिण्णादाणादो

वे रमणं, चउत्थे अणुव्वदे थूलयडे सदार-संतोस-परदारा-गमण- वे रमणं, कस्स य पुणु सव्वदो विरदी, पंचमे अणुव्वदे, थूलयडे इच्छा-कद-परिमाणं चेदि, इच्चेदाणि पंच अणुव्वदाणि।

तीन गुणव्रतों का वर्णन

तत्थ इमाणि तिण्णि गुणव्वदाणि तत्थ पढमे गुणव्वदे दिसि-विदिसि पच्चक्खाणं, विदिये, गुणव्वदे, विविध-अणत्थ- दंडादो वे रमणं, तिदिये गुणव्वदे भोगोपभोग-परिसंखाणं चेदि, इच्चेदाणि तिण्णि गुणव्वदाणि।

चार शिक्षाव्रतों का वर्णन

तत्थ इमाणि चत्तारि सिक्खावदाणि तत्थ पढमे सामाइयं, विदिये पोसहोवासयं, तिदिये अतिथि- संविभागो, चउत्थे सिक्खावदे पच्छिम-सल्लेहणा-मरणं चेदि। इच्चेदाणि चत्तारि सिक्खावदाणि।

से अभिमद-जीवाजीव-उवलद्ध-पुण्ण- पाव-आसव-बंध-संवर-णिज्जर-मोक्ख-महि-कुसले, धम्माणु-रायरत्तो, पेम्माणुराय-रत्तो, अट्ठि-मज्जाणुराय- रत्तो, मुच्छिदट्ठे, गिहि-दट्ठे, विहि-दट्ठे, पालि दट्ठे, सेविदट्ठे, इणमेव णिग्गंथ-पवयणे, अणुत्तरे, से-अट्ठे सेवणुट्ठे।

सम्यक्त्व के आठ अंगों के नाम

णिस्संकिय णिक्कंखिय णिव्विदिगिंछा अमूढदिट्ठी य।
उवगूहण ट्ठिदिकरणं वच्छल्ल-पहावणा य ते अट्ठ॥१॥

सव्वेदाणि पंचाणुव्वदाणि, तिण्णि गुणव्वदाणि, चत्तारि सिक्खावदाणि; बारसविहं-गिहत्थ-धम्ममणु- पाल-इत्ता।

देशव्रत के ग्यारह स्थानों के नाम

दंसण-वय-सामाइय-पोसह-सचित्त-राइ-भत्ते य।
बंभाऽरंभ परिग्गह अणुमण-मुद्दिट्ठ देसविरदो य॥१॥

श्रावक धर्म

महु-मंस-मज्ज जूआ वेसादि-विवज्जणा सीलो।
पंचाणुव्वय-जुत्तो सत्तेहिं सिक्खावयेहिं संपुण्णो॥२॥

श्रावक निर्दोष व्रत पालने का फल

जो एदाइं वदाइं धरेइ, सावया-सावियाओ वा, खुड्डय-खुड्डियाओ वा, दह-अट्ठ-पंच, भवणवासिय-वाणविंतर- जोइसिय, सोहम्मीसाण-देवीओ वदिक्कमित्तु उवरिम अण्णदर-महड्डियासु देवेसु उववज्जंति। तं जहा-

सोहम्मीसाण- सणक्कुमार-माहिंद-बंभ- बंभुत्तर लांतव कापिट्ठ सुक्क- महासुक्क सतार-सहस्सार आणत-पाणत-आरण-अच्चुत- कप्पेसु उववज्जंति।

अडयंबर-सत्थधरा कडयंगद-बद्धनउडकय-सोहा।
भासुरवर-बोहिधरा देवा य महड्ढिया होंति॥१॥

समाधिमरण का फल

उक्कस्सेण दो-तिण्ण भव-गहणाणि, जहण्णेण सत्तट्ठ-भव-गहणाणि, तदो सुमाणुसत्तादो-सुदेवत्तं, सुदेवत्तादो-सुमाणुसत्तं, तदो साइहत्था, पच्छा-णिग्गंथा होऊण, सिज्झंति, बुज्झंति, मुंचंति, परिणिव्वाण-यंति, सव्वदुक्खाणमंतं करेंति। जाव अरहंताणं, भयवंताणं, णमोक्कारं करेमि, पज्जुवासं करेमि, तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

वद-समि-दिंदिय-रोधो लोचावासय-मचेल-मण्हाणं।
खिदि-सयण-मदंतवणं ठिदि-भोयण-मेय भत्तं च॥१॥
एदे खलु मूल गुणा समणाणं जिण वरेहिं पण्णत्ता।
एत्थ पमाद कदादो अइचारादो णियत्तो हं॥२॥

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं

अथ सर्वातिचार विशुद्ध्यर्थं पाक्षिक (चातुर्मासिक) (वार्षिक) प्रतिक्रमण-क्रियायां, कृत-दोष-निराकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना- स्तव-समेतं श्री निष्ठितकरण-चन्द्रवीरभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(यहाँ णमो अरहंताणं इत्यादि सामायिक दण्डक पेज नं. 137 से बोले)

यहाँ आचार्य श्री के साथ-साथ सभी मुनिराजों को निम्नलिखित सामायिक दण्डक कायोत्सर्ग और थोस्सामि स्तव पढ़कर वीरभक्ति आदि बोलना चाहिये।

श्री वीरभक्ति

पाक्षिक प्रतिक्रमण में 300 श्वासोच्छ्वास अर्थात् 100 बार पंच नमस्कार मंत्र का जाप चातुर्मासिक प्रतिक्रमण में 400 श्वासोच्छ्वास अर्थात् 134 बार पंच नमस्कार मंत्र का जाप और वार्षिक प्रतिक्रमण में 500 श्वासोच्छ्वास् अर्थात् 167 बार पंच नमस्कार मंत्र का जाप करना चाहिये। पश्चात् चतुर्विंशति स्तव अर्थात् थोस्सामि बोलना चाहिये।)

श्री चन्द्रप्रभ स्तवन

चन्द्रप्रभं चन्द्रमरीचि-गौरं, चन्द्रं द्वितीयं जगतीव कान्तम्।
वन्देऽभिवन्द्यं महतामृषीन्द्रं, जिनं जित-स्वान्त-कषाय-बन्धम्॥१॥

यस्याङ्ग-लक्ष्मी परिवेश-भिन्नं, तमस्-तमोरे रिव रश्मि-भिन्नम्।
ननाश बाह्यं-बहु मानसं च, ध्यान प्रदीपतिशयेन भिन्नम्॥२॥

स्व पक्ष-सौस्थित्य-मदाऽवलिप्ता, वाक् सिंह-नादै-र्विमदा बभूवुः।
प्रवादिनो यस्य मदार्द्र-गण्डा, गजा यथा केसरिणो निनादैः॥३॥

यः सर्व लोके- परमेष्ठितायाः, पदं बभूवाऽद्भूत-कर्म-तेजाः।
अनन्त धामाक्षर विश्व-चक्षुः, समस्त-दुःख क्षय शासनश्च॥४॥

स चन्द्रमा भव्य-कमुद्वतीनां, विपन्न-दोषाभ्र-कलङ्क-लेपः।
व्याकोश-वाङ्-न्याय-मयूख-मालः, पूयात् पवित्रो भगवान-मनो मे॥५॥

श्री वीर भक्ति

यः सर्वाणि चराचराणि विधिवद् द्रव्याणि तेषां गुणान्,
पर्यायानपि भूत-भावि-भवतः सर्वान् सदा सर्वदा।
जानीते युगपत् प्रतिक्षण-मतः सर्वज्ञ इत्युच्यते,
सर्वज्ञाय जिनेश्वराय महते वीराय तस्मै नमः॥१॥

वीरः सर्व-सुरासुरेन्द्र-महितो वीरं बुधाः संश्रिता,
वीरेणाऽभिहतः स्व-कर्म-निचयो वीराय भक्त्या नमः।
वीरात् तीर्थ-मिदं प्रवृत-मतुलं वीरस्य घोरं तपो,
वीरे श्री-द्युति-कांति-कीर्ति-धृतयो हे वीर ! भद्रं त्वयि॥२॥

ये वीर पादौ प्रणमन्ति नित्यं, ध्यान-स्थिता-संयमः-योग-युक्ताः।
ते वीत-शोका हि भवन्ति लोके, संसार दुर्गं विषमं तरन्ति॥३॥

व्रत-समुदय-मूलः संयम-स्कन्ध बन्धो,
यम नियम-पयोभिर्वर्धितः शील शाखः।
समिति-कलिक-भारो गुप्ति-गुप्त-प्रवालो,
गुण-कुसुम-सुगन्धिः सत्-तपश्चित्र-पत्रः॥४॥

शिव-सुख-फलदायी यो दया-छाययोघः[१],
शुभजन-पथिकानां खेदनोदे समर्थः।
दुरित-रविज-तापं प्रापयन्-नन्तभावं,
स भव-विभव-हान्यै नोऽस्तु चारित्र-वृक्षः॥५॥

चारित्रं सर्व-जिनैश्-चरितं प्रोक्तं च सर्व-शिष्येभ्यः।
प्रणमामि पञ्च-भेदं पञ्चम-चारित्र-लाभाय॥६॥

---

१. (द्या)

धर्मः सर्व-सुखाऽकरो हितकरो धर्मं बुधाश्चिन्वते,
धर्मेणैव समाप्यते शिव-सुखं धर्माय तस्मै नमः।
धर्मान् नास्त्-यपरः सुहृद्-भव-भृतां धर्मस्य मूलं दया,
धर्मे चित्तं-महं दधे प्रतिदिनं हे धर्म ! मां पालय॥७॥

धम्मो मंगल-मुक्किट्ठं अहिंसा संयमो तवो।
देवा वि तं णमस्संति जस्स धम्मे सया मणो॥८॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! वीरभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, सम्मणाण सम्मदंसण-सम्म-चारित्त-तव- वीरियाचारेसु, जम-णियम-संजम-सील-मूलुत्तर-गुणेसु, सव्वमइचारं, अज्झवसायठाणाणि, अप्पसत्थ-जोग- सण्णा- णिंदिय-कसाय-गारव-किरियासु मण-वयण- काय-करण- दुप्पणिहाणि, परिचिंतियाणि, किण्हणील काउ-लेस्साओ, विकहा-पालिकुंचिएण-उम्मग-हस्सरदि-अरदि-सोय-भय-दुगंछ-वेयण-विज्जंभ-जंभाइ-आणि-अट्टरुद्ध संकिलेस- परिणामाणि-परिणामिदाणि, अणिहुद- कर-चरण-मण- वयण-काय-करणेण, अक्खित्त-बहुल परायणेण, अपडिपुण्णेण

वा, सरक्खरावय-परिसंघाय पडिवत्तिएण, अच्छा-कारिदं, मिच्छा-मेलिदं, आ मेलिदं, वा-मेलिदं, अण्णहा-दिण्हं अण्णहा-पडिच्छिदं, आवासएसु परिहीणदाए कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

वद समि-दिंदिय-रोधो लोचावासय-मचेल-मण्हाणं।
खिदि-सयण-मदंतवणं ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं च॥१॥
एदे खलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता।
एत्थ पमाद-कदादो अइचारादो णियत्तो हं॥२॥

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं पाक्षिक (चातुर्मासिक) (वार्षिक) प्रतिक्रमण क्रियायां कृत-दोष-निरकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना, स्तव-समेतं, शान्ति चतुर्विंशति-तीर्थंकर-भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(यहाँ णमो अरहंताणं इत्यादि सामायिक दण्डक पेज नं. 137 से बोले)

श्री शान्ति कीर्तन

विधाय रक्षां परतः प्रजानां, राजा चिरं योऽप्रति-मप्रतापः।
व्यधात् पुरस्तात् स्वत एव शान्तिर्-मुनिर्-दया-मूर्ति-रिवाघशान्तिम्॥१॥

चक्रेण यः शत्रु भयङ्करेण, जित्वा नृपः सर्व-नरेन्द्र-चक्रम्।
समाधि-चक्रेण पुनर्-जिगाय, महोदयो दुर्जय-मोह चक्रम्॥२॥

राजश्रिया राजसु राजसिंहो- रराज यो राजसु भोगतन्त्रः।
आर्हन्त्य लक्ष्म्या पुनराऽत्मतन्त्रो, देवाऽसुरोदार-सभे-रराज॥३॥

यस्मिन् नभूद्राऽजनि राजचक्रं, मुनौ दया-दीधिति-धर्म-चक्रम्।
पूज्ये मुहुः प्राञ्जलि देव चक्रं, ध्यानोन्मुखे ध्वंसिकृतान्त-चक्रम्॥४॥

स्वदोष-शान्त्या-विहिताऽत्म-शान्तिः, शान्तेर्-विधाता शरणं गतानाम्।
भूयाद् भव-क्लेश-भयो पशान्त्यै, शान्ति र्जिनो मे भगवाञ्छरण्यः॥५॥

श्री चतुर्विंशति भक्ति

चउवीसं तित्थयरे, उसहाइ-वीर-पच्छिमे वन्दे।
सव्वे सगण-गण-हरे सिद्धे सिरसा णमंसामि॥१॥

ये लोकेऽष्टसहस्त्र-लक्षण धरा, ज्ञेयार्णवोऽन्तर्गता,
ये सम्यग्-भव जाल हेतु मथना-श्चन्द्रार्क-तेजोऽधिकाः।

ये साध्विन्द्र-सुराप्सरो-गण-शतै-र्गीत-प्रणूतार्च्चितास्-
तान्देवान्वृषभादि-वीर-चरमान्,भक्त्या नमस्याम्यहम्॥२॥
नाभेयं देवपूज्यं जिनवर-मजितं, सर्व-लोक-प्रदीपम्,
सर्वज्ञं संभवाख्यं मुनि-गण-वृषभं, नन्दनं देव देवम्।
कर्मारिघ्नं सुबुद्धिं वर-कमल-निभं, पद्म-पुष्पाभि-गन्धम्
क्षान्तं दान्तं सुपार्श्वं सकल-शशि-निभं, चन्द्रनामान-मीडे॥३॥
विख्यातं पुष्पदन्तं भव-भय-मथनं, शीतलं लोक-नाथम्,
श्रेयांसं शील-कोषं प्रवर-नर-गुरुं, वासुपूज्यं सुपूज्यम्।
मुक्तं दांतेन्द्रियाश्वं विमल-मृषि-पतिं, सैंह-सैन्यं मुनीन्द्रम्
धर्मंसद्धर्म-केतुं शम-दम निलयं, स्तौमि शान्तिं शरण्यम्॥४॥
कुन्थुं सिद्धालयस्थं श्रमण-पति-मरं त्यक्त-भोगेषु चक्रम्,
मल्लिं विख्यात-गोत्रं खचर-गण-नुतं सुव्रतं सौख्य-राशिम्।
देवेन्द्राऽर्च्यं नमीशं हरि-कुल-तिलकं नेमिचन्द्रं भवान्तम्,
पार्श्वं नागेन्द्र-वंद्यं शरणमहमितो वर्धमानं च भक्त्या॥५॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! चउवीस-तित्थयर-भत्ति- काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं पंच-महा-कल्लाण- संपण्णाणं, अट्ठ-महा पाडिहेर-सहियाणं चउतीसाति- सयविसेस-संजुत्ताणं बत्तीस

देविंद-मणि मउड-मत्थय- महिदाणं बलदेव-वासुदेव-चक्कहर रिसि-मुणि- जइअणगारोवगूढाणं, थुइ-सय-सहस्स णिलयाणं, उसहाइ-वीर पच्छिम-मंगल महा पुरिसाणं णिच्चकालं अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो, सुगइ-गमणं समाहि-मरणं, जिण-गुण संपत्ति होउ मज्झं।

वद-समि-दिंदिय रोधो लोचावासय-मचेल-मण्हाणं।
खिदि-सयण-मदंतवणं ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं च॥१॥
एदे खलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता।
एत्थ पमाद-कदादो अइचारादो णियत्तो हं॥२॥

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं

चारित्रालोचना सहित बृहदाचार्य भक्तिः

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं चारित्रा- ऽऽलोचना-चार्य भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(यहाँ णमो अरहंताणं इत्यादि दण्डक पेज नं. 137 से बोले।)

बृहद-आचार्य-भक्ति

सिद्ध-गुण-स्तुति-निरता-
नुद्धूत-रुषाग्नि-जाल-बहुल-विशेषान्।
गुप्तिभि-रभिसम्पूर्णान्-
मुक्ति-युतः सत्य-वचन-लक्षित-भावान्॥१॥

मुनि-माहात्म्य-विशेषान्
जिन-शासन-सत्प्रदीप भासुर-मूर्तीन्।
सिद्धि प्रपित् सुमनसो-
बद्ध-रजो-विपुल-मूल-घातन-कुशलान्॥२॥

गुण-मणि-विरचित-वपुषः-
षड्-द्रव्य-विनिश्चितस्य धातॄन् सततम्।
रहित-प्रमाद-चर्यान्
दर्शन-शुद्धान् गणस्य संतुष्टि-करान्॥३॥

मोह-च्छिदुग्र-तपसः,
प्रशस्त-परिशुद्ध-हृदय-शोभन-व्यवहारान्।
प्रासुक-निलया-ननघा-
नाशा-विध्वंसि-चेतसो-हत-कुपथान्॥४॥

धारित-विलसन् मुण्डान्-
वर्जित-बहुदण्ड-पिण्ड-मण्डल-निकरान्।
सकल-परीषह-जयिनः
क्रियाभि-रनिशं प्रमादतः परि-रहितान्॥५॥
अचलान् व्यपेत-निद्रान्
स्थान-युतान् कष्ट-दुष्ट-लेश्या-हीनान्।
विधि-नानाश्रित-वासा-
नलिप्त-देहान् विनिर्-जितेन्द्रिय-करिणः॥६॥
अतुला-नुत्कुटिकासान्
विविक्त-चित्ता-नखण्डित-स्वाध्यायान्।
दक्षिण-भाव-समग्रान्
व्यपगत-मद-राग-लोभ-शठ मात्सर्यान्॥७॥
भिन्नार्त-रौद्र-पक्षान्
सम्भावित-धर्म-शुक्ल-निर्मल-हृदयान्।
नित्यं पिनद्ध-कुगतीन्
पुण्यान् गण्योदयान् विलीन-गारव-चर्यान्॥८॥

तरु-मूल-योग-युक्ता-

नवकाशा-ताप-योग-राग-सनाथान्।

बहुजन-हितकर-चर्या-

नभया-ननघान् महानुभाव-विधानान्॥९॥

ईदृश-गुण-सम्पन्नान्

युष्मान् भक्त्या विशालया स्थिर-योगान्।

विधि-नानारत-मग्र्यान्

मुकुली-कृत-हस्त-कमल-शोभित-शिरसा॥१०॥

अभिनौमि सकल-कलुष-

प्रभवोदयजन्म-जरा-मरण-बंधन-मुक्तान्।

शिव-मचल-मनघ-मक्षय-

मव्याहत-मुक्ति-सौख्य-मस्त्विति-सततम्॥११॥

लघु-चारित्रालोचना

इच्छामि भंते ! चरित्तायारो, तेरसविहो, परिहाविदो, पंचमहव्वदाणि, पंच-समिदीओ, ति-गुत्तीओ चेदि। तत्थ पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वे रमणं से पुढवि-काइया-जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा, आऊ-काइया जीवा असंखेज्जोऽसंखेज्जा, तेऊ-काइया जीवा असंखेज्जोऽसंखेज्जा, वाऊ- काइया जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा, वणप्फदि-काइया जीवा अणंताऽणंता,

हरिया, बीआ, अंकुरा, छिण्णा, भिण्णा, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

बे-इंदिया-जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा कुक्खिकिमि-संख-खुल्लय-वराडय-अक्खरिट्ठय-गण्डवाल-संबुक्क-सिप्पि- पुलविकाइया एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

ते-इंदिया-जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा कुन्थूद्देहिय-विंच्छिय-गोभिंद-गोजुव-मक्कुण पिपीलियाइया, एदेसिं, उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

चउरिंदिया-जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा, दंसमसय-मक्खि-पयंग-कीड-भमर-महुयर-गोमच्छियाइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरन्तो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

पंचिंदिया-जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा अंडाइया, पोदाइया, जराइया, रसाइया, संसेदिमा, सम्मुच्छिमा, उब्भेदिमा, उववादिमा, अवि-चउरासीदि-जोणि-पमुह-सद-सहस्सेसु

एदेसिं, उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

इच्छामि भंते ! आइरिय भत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं, सम्मणाण, सम्म-दंसण,-सम्म- चरित्त-जुत्ताणं, पंच-विहाचाराणं, आइरियाणं, आयारादि-सुद-णाणो-वदेसयाणं उवज्झायाणं, ति- रयण-गुण-पालण-रयाणं, सव्व साहूणं, णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होदु मज्झं।

वद-समि-दिंदिय रोधो लोचावासय-मचेल-मण्हाणं।
खिदि-सयण-मदंतवणं ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं च॥१॥

एदे खलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता।
एत्थ पमाद-कदादो अइचारादो णियत्तो हं॥२॥

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं

बृहदालोचना सहित मध्यमाचार्य भक्तिः

अथ सर्वाऽतिचार-विशुद्ध्यर्थं बृहदाऽऽलोचनासहित मध्यमाऽऽचार्य- भक्ति-कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(यहाँ “णमो अरहंताणं” इत्यादि दण्डक पेज नं. 137 से बोले।)

मध्यमाचार्य भक्ति

देस-कुल-जाइ-सुद्धा विसुद्ध-मण-वयण-काय-संजुत्ता।
तुम्हं पाय-पयोरुह-मिह मंगल-मत्थु मे णिच्चं॥१॥
सग पर-समय-विदण्हू आगम-हेदूहिं चावि जाणित्ता।
सु-समत्था जिण-वयणे विणये सत्ताणु-रूवेण॥२॥
बाल-गुरु-बुड्ढ सेक्खग्-गिलाण-थेरे य खमण-संजुत्ता।
बट्टावयगा अण्णे दुस्सीले चावि जाणित्ता॥३॥
वद-समिदि-गुत्ति-जुत्ता मुत्ति-पहे ठाविया पुणो अण्णे।
अज्झावय-गुण-णिलया साहु-गुणेणावि संजुत्ता॥४॥
उत्तम-खमाए पुढवी पसण्ण-भावेण अच्छ-जल-सरिसा।
कम्मिंधण-दहणादो अगणी वाऊ असंगादो॥५॥
गयण-मिव णिरुवलेवा अक्खोहा सायरुव्व मुणि-वसहा।
एरिस-गुण-णिलयाणं पायं पणमामि-सुद्ध-मणो॥६॥
संसार-काणणे पुण बं-भम-माणेहिं भव्व-जीवेहिं।
णिव्वाणस्स हु मग्गो लद्धो तुम्हं पसाएण॥७॥
अविसुद्ध-लेस्स-रहिया-विसुद्ध-लेस्साहि परिणदा सुद्धा।
रुद्दट्टे पुण चत्ता धम्मे सुक्के य संजुत्ता॥८॥

उग्गह-ईहाऽवाया-धारण-गुण-संपदेहिं संजुत्ता।
सुत्तत्थ-भावणाए भाविय-माणेहिं वंदामि ॥९॥
तुम्हं गुण-गण-संथुदि अजाण-माणेण जो मया वुत्तो।
देउ मम बोहिलाहं गुरु भत्ति-जुदत्थओ णिच्चं ॥१०॥

बृहद् आलोचना

(इच्छामि भंते ! पक्खियम्मि आलोचेउं, पण्णरसण्हं दिवसाणं, पण्णरसण्हं राइणं, अब्भंतरदो, पंचविहो आयारो णाणायारो, दंसणायारो, तवायारो, वीरियायारो, चरित्तायारो चेदि।)

(इच्छामि भंते ! चउमासियम्मि आलोचेउं, चउण्हं मासाणं, अट्ठण्हं पक्खाणं, बीसुत्तर-सय-दिवसाणं बीसुत्तर-सय-राइणं, अबभंतरदो, पंचविहो आयारो, णाणायारो, दंसणायारो, तवायारो, वीरियायारो, चरित्तायारो, चेदि।)

(इच्छामि भंते ! संवच्छरियम्मि आलोचेउं, बारसण्हं मासाणं, चउवीसण्हं पक्खाणं, तिण्णिछावट्ठि-सय दिवसाणं, तिण्णि-छावट्ठि-सय-राइणं अब्भंतरदो, पंचविहो आयारो, णाणायारो, दंसणायारो, तवायारो, वीरियायारो, चरित्तायारो चेदि।)

तत्थ णाणायारो अट्ठविहो काले, विणए, उवहाणे, बहुमाणे, तहेव अणिण्हवणे, विंजण-अत्थतदुभये चेदि। णाणायारो अट्ठविहो परिहाविदो, से अक्खर-हीणं वा, सर-हीणं वा, विंजण-हीणं वा, पद-हीणं वा, अत्थ-हीणं वा, गंथ-हीणं वा, थएसु वा, थुइसु वा, अत्थक्खाणेसु वा, अणियोगेसु वा, अणियोगद्दारेसु वा, अकाले-सज्झाओ कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, काले वा, परिहाविदो, अच्छा-कारिदं वा, मिच्छा- मेलिदं वा, आ मेलिदं, वा-मेलिदं, अण्णहा-दिण्हं, अण्णहा-पडिच्छिदं, आवासएसु-परिहीणदाए तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

दंसणायारो अट्ठविहो

णिस्संकिय णिंकंक्खिय णिव्विदिगिंच्छा अमूढदिट्ठीय।
उवगूहण ठिदिकरणं वच्छल्ल-पहावणा चेदि॥१॥

दंसणायारो अट्ठविहो परिहाविदो, संकाए, कंखाए, विदिगिंछाए, अण्ण-दिट्ठी-पसंसणाए, पर-पाखंड-पसंसणाए, अणायदण-सेवणाए, अवच्छल्ल, अपहावणाए, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

तवायारो बारसविहो अब्भंतरो-छव्विहो, बाहिरो-छब्विहो चेदि। तत्थ बाहिरो अणसणं, आमोदरियं, वित्ति-परिसंखा, रस-परिच्चाओ, सरीर-परिच्चाओ विवित्त सयणासणं चेदि। तत्थ अब्भंतरो पायच्छित्तं, विणओ, वेज्जावच्चं, सज्झाओ, झाणं, विउस्सग्गो चेदि। अब्भंतरं बाहिरं बारसविहं- तवोकम्मं, ण कदं, णिसण्णेण पडिक्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥३॥

वीरियायारो पंचविहो परिहाविदो वर-वीरिय-परिक्कमेण, जहुत्त-माणेण, बलेण, वीरिएण, परिक्कमेण णिगूहियं, तवो कम्मं, ण कदं, णिसण्णेण पडिक्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

इच्छामि भंते ! चरित्तायारो, तेरसविहो, परिहाविदो, पंच-महव्वदाणि, पंच-समिदीओ, ति-गुत्तीओ चेदि। तत्थ पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वे रमणं से पुढवि-काइया-जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा, आऊ-काइया जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा, तेऊ-काइया जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा, वाऊ-काइया-जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा, वणप्फदिकाइया जीवा अणंता, णंता, हरिया, बीआ, अंकुरा, छिण्णा, भिण्णा, एदेसिं, उद्दावणं,

परिदावणं, विराहणं उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

बे-इंदिया-जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा कुक्खिकिमि-संख-खुल्लय-वराडय-अक्खरिट्ठय- गण्डवाल संबुक्क सिप्पि-पुलविकाइया एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

ते-इंदिया-जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा कुन्थूद्देहिय विंच्छिय-गोभिंद-गोजुव-मक्कुण पिपीलियाइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

चउरिंदिया-जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा दंसमसय-मक्खि-पयंग-कीड-भमर-महुयर-गोमच्छि-याइया, एदेसिं, उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

पंचिंदियाजीवा-असंखेज्जाऽसंखेज्जा अंडाइया, पोदाइया, जराइया, रसाइया, संसेदिमा, सम्मुच्छिमा, उब्भेदिमा, उववादिमा, अवि-चउरासीदि-जोणि-पमुह- सद-सहस्सेसु

एदेसिं, उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

वद-समि-दिंदिय रोधो, लोचावासय-मचेल-मण्हाणं।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं च॥१॥
एदे खलु मूलगुणा, समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता।
एत्थ पमाद-कदादो, अइचारादो णियत्तो हं॥२॥

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं

क्षुल्लकालोचना सहित क्षुल्लकाचार्य भक्तिः

अथ सर्वाऽतिचार-विशुद्ध्यर्थं क्षुल्लका-ऽऽलोचनाचार्य भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(यहाँ पूर्ववत् ''णमो अरहंताणं'' इत्यादि दण्डक पेज नं. 137 से बोलें।)

विजितमदनकेतुं, निर्मलं निर्विकारं,
रहितसकलसंगं, संयमासक्त चित्तं।
सुनयनिपुणभावं, ज्ञाततत्त्वप्रपञ्चम्
जननमरणभीतं, सद्गुरु नौमि नित्यम्॥१॥
सम्यग्दर्शन मूलं, ज्ञानस्कंधं चरित्रशाखाढ्यम्।
मुनिगण विहगाकीर्ण-माचार्य महाद्रुमं वंदे॥२॥

लघु आचार्य-भक्ति

प्राज्ञः प्राप्त-समस्त-शास्त्र-हृदयः प्रव्यक्त-लोक-स्थितिः,
प्रास्ताशः प्रतिभा-परः प्रशमवान् प्रागेवदृष्टोत्तरः
प्रायः प्रश्न-सहः प्रभुः पर-मनोहारी परानिन्दया,
ब्रूयाद धर्म-कथां गणी-गुण-निधिः प्रस्पष्ट-मिष्टाक्षरः ॥१॥

श्रुत-मविकलं शुद्धा वृत्तिः, पर-प्रति-बोधने,
परिणति- रुरूद्योगो मार्ग- प्रवर्तन- सद्- विधौ।
बुध- नुति- रनुत्सेको लोकज्ञता मृदुता- स्पृहा,
यति-पति-गुणा यस्मिन् नन्ये च सोऽस्तु गुरुः सताम्॥२॥

श्रुत-जलधि-पारगेभ्यः
स्व-पर- मत-विभावना-पटु-मतिभ्यः।
सुचरित-तपो-निधिभ्यो,
नमो गुरुभ्यो गुण-गुरुभ्यः॥३॥

छत्तीस-गुण-समग्गे, पञ्च-विहाचार-करण-संदरिसे।
सिस्साणुग्गह-कुसले, धम्माइरिए सदा वन्दे॥४॥

गुरु-भत्ति-संजमेण, य तरन्ति संसार-सायरं घोरम्।
छिण्णंति अट्ठ-कम्मं, जम्मण-मरणं ण पावेंति॥५॥

ये नित्यं व्रत-मन्त्र-होम-निरता, ध्यानाग्नि-होत्रा-कुलाः,
षट्-कर्माभिरता-स्तपोधन-धनाः साधु-क्रियाः साधवः।
शील-प्रावरणा गुण-प्रहरणा-श्चन्द्रार्क-तेजोऽधिका,
मोक्ष-द्वार-कपाट-पाटन-भटाः प्रीणन्तु मां साधवः ॥६ ॥

गुरवः पान्तु नो नित्यं, ज्ञान-दर्शन-नायकः।
चारित्राऽर्णव-गम्भीरा-मोक्ष-मार्गोपदेशकाः ॥७ ॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! आइरिय-भत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं, सम्म-णाण, सम्म-दंसण- सम्मचरित्त-जुत्ताणं, पंच-विहाचाराणं, आयरियाणं, आयारादि-सुद-णाणो, वदेसयाणं, उवज्झायाणं, ति-रयण-गुण-पालण-रयाणं, सव्व-साहूणं णिच्चकालं अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहि-मरणं, जिन-गुण-संपत्ति-होदु मज्झं।

वद-समि-दिंदिय-रोधो लोचावासय-मचेल-मण्हाणं।
खिदि-सयण-मदंतवणं ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं च॥ १ ॥
एदे खलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता।
एत्थ पमाद-कदादो अइचारादो णियत्तोऽहं॥२ ॥

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं

अथ सर्वाऽतिचार-विशुद्ध्यर्थं (पाक्षिक) (चातुर्मासिक) (वार्षिक) प्रतिक्रमण-क्रियायां, कृत दोष-निराकरणार्थं पूर्वाऽचार्यानुक्रमेण सकल कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं सिद्ध-चारित्र-प्रतिक्रमण-निष्ठितकरण-चन्द्रवीर -शान्ति- चतुर्विंशति-तीर्थंकर-चारित्राऽलोचनाऽचार्य बृहदा-लोचनाचार्य, मध्यमाऽलोचनाचार्य, क्षुल्लका-ऽलोचनाचार्य भक्ती: कृत्त्वा तद्धीनाऽधिकत्वादिदोष - विशुद्ध्यर्थं आत्म-पवित्रीकरणार्थं, समाधीभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

समाधि भक्ति

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः।

शास्त्राऽभ्यासो जिन-पति-नुतिः सङ्गति सर्वदाऽर्यैः,
सद्वृत्तानां गुण-गण-कथा दोष-वादे च मौनम्।
सर्वस्याऽपि प्रिय-हित-वचो भावना चाऽत्म-तत्त्वे,
सम्पद्यन्तां मम भव-भवे-यावदेतेऽपवर्गः॥१॥

तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनम्।
तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद् यावन् निर्वाण-सम्प्राप्तिः॥२॥

अक्खर-पयत्थ-हीणं, मत्ता हीणं च जं मए भणियं
तं खमउ णाणदेव य! मज्झवि दुक्खक्खयं कुणउ॥३॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! समाहिभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, रयण-त्तय-सरूव परमप्प-ज्झाण लक्खणं समाहि-भत्तीए णिच्चकालं अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण संपत्ति होदु मज्झं। (यहाँ एक कायोत्सर्ग करें)

॥ इति पाक्षिकादि–प्रतिक्रमण–समाप्त ॥

प्रायश्चित्त-याचना-विधि

हे स्वामिन् ! पक्षे (चातुर्मासे) (संवत्सरे) अष्टविंशति मूलगुणेषु (आर्यिका-व्रत-क्रियायां) मनसा वचसा कर्मणा कृत-कारितानुमोदनैः आहारे बिहारे निहारे च रागेण द्वेषेण मोहेन भयेन लज्जया प्रमादेन वा जागरणे स्वप्ने च ज्ञाताज्ञात-भावेन अतिक्रम-व्यतिक्रमातिचारानाचार इत्यादयो दोष लग्नाः तान् क्षमित्वा प्रायश्चित्त-दानेन शुद्धं कुर्यात् माम्।

श्रावक-प्रतिक्रमणम्

जीवे प्रमाद-जनिताः प्रचुराः प्रदोषा,
यस्मात्-प्रतिक्रमणतः प्रलयं प्रयान्ति।
तस्मात्-तदर्थ-ममलं गृहि-बोधनार्थं,
वक्ष्ये विचित्र-भव कर्म-विशोधनार्थम्॥१॥

पापिष्ठेन दुरात्मना जड़धिया मायाविना लोभिना,
रागद्वेष-मलीमसेन मनसा दुष्कर्म यन्निर्मितम्।
त्रैलोक्याधिपते ! जिनेन्द्र ! भवतः श्रीपादमूलेऽधुना,
निन्दापूर्वमहं जहामि सततं वर्वर्तिषुः सत्पथे॥२॥

खम्मामि सव्वजीवाणं, सव्वे जीवा खमंतु मे।
मेत्ती मे सव्वभूदेसु, बैरं मज्झं ण केण वि॥३॥

रागबंध - पदोसं च, हरिसं दीणभावयं।
उस्सुगत्तं भयं सोगं, रदिमरदिं च वोस्सरे॥४॥

हा दुट्ठ-कयं हा दुट्ठ-चिंतियं, भासियं च हा दुट्ठं।
अंतो अंतो डज्झमि, पच्छत्तावेण वेयंतो॥५॥

दव्वे खेत्ते काले, भावे य कदाऽवराह-सोहणयं।
णिंदण-गरहण-जुत्तो, मण-वच-कायेण पडिक्कमणं॥६॥

एइंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया पुढविकाइया, आउकाइया, तेउकाइया, वाउकाइया-वणप्फदिकाइया, तसकाइया, एदेसिं, उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणु-मण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

दंसण-वय सामाइय-पोसह-सचित्त-राइभत्ते य।
बंभाऽऽरंभ-परिग्गह-अणुमण-मुद्दिट्ठ-देसविरदे य॥

एयासु जहाकहिद-पडिमासु पमादाइकयाइचार-सोहणट्ठं छेदोवट्ठावणं, होउ मज्झं। अरहंत, सिद्ध आयरिय, उवज्झाय, सव्वसाहु, सक्खियं, सम्मत्त, पुव्वगं, सुव्वदं, दिढव्वदं, समारोहियं मे भवदु, मे भवदु, मे भवदु।

अथ देवसिय (राइय) पडिक्कमणाए सव्वाइचार-विसोहि-णिमित्तं पुव्वाइरिय कमेण आलोयण-सिद्ध भत्ति-काउस्सग्गं करोमि।

सामायिक दण्डक

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्व साहूणं॥

चत्तारि मंगलं-अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा-अरहंता-लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो। चत्तारि सरणं पव्वज्जामि-अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलि पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु पण्णारस- कम्म-भूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतयडाणं पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसयाणं, धम्मणायगाणं धम्म- वर-चाउरंग- चक्कवट्टीणं, देवाहि-देवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं सदा करेमि किरियम्मं।

करेमि भन्ते! सामायियं सव्व-सावज्ज- जोगं पच्चक्खामि जावज्जीवं तिविहेण मणसा, वचसा, काएण, ण करेमि ण कारेमि, ण अण्णं करंतं पि समणुमणामि तस्स भन्ते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाणं,

जाव अरहंताणं भयवंताणं, पज्जुवासं करेमि तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

(यहाँ तीन आर्वत एक शिरोनति करके २७ उच्छ्वास पूर्वक कायोत्सर्ग करें। पश्चात् नमस्कार कर तीन आवर्त और एक शिरोनति कर चतुर्विंशति स्तव पढ़ें।)

(चतुर्विंशति स्तव)

जीविय-मरणे लाहालाहे, संजोग विप्पजोगे य।
बंधुरिय सुह दुक्खादो, समदा सामायियं णाम॥१॥

थोस्सामि हं जिणवरे, तित्थयरे केवली अणंत जिणे।
णर-पवर-लोय-महिए, विहुय-रय-मले महप्पण्णे॥२॥
लोयस्सुज्जोय-यरे, धम्मं तित्थंकरे जिणे वंदे।
अरहंते कित्तिस्से, चौबीसं चेव केवलिणो॥३॥

उसह-मजियं च वन्दे, संभव-मभिणंदणं च सुमइं च।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वन्दे॥४॥

सुविहिं च पुप्फयंतं, सीयल सेयं च वासुपुज्जं च।
विमल-मणंतं भयवं, धम्मं संतिं च वंदामि॥५॥

कुंथुं च जिणवरिंदं, अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं।
वंदाम्यरिट्ठ णेमिं, तह पासं वड्ढमाणं च॥६॥

एवं मए अभित्थुआ, विहुय-रय-मला-पहीण-जर-मरणा।
चउवीसं पि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु॥७॥

कित्तिय वंदिय महिया, एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा।
आरोग्ग-णाण-लाहं, दिंतु समाहिं च मे बोहिं॥८॥

चंदेहिं णिम्मल-यरा, आइच्चेहिं अहिय-पया-संता।
सायर-मिव गंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु॥९॥

लघु सिद्ध भक्ति

श्रीमते वर्धमानाय, नमो नमित-विद्विषे।
यज्ज्ञानाऽन्तर्गतं भूत्वा, त्रैलोक्यं गोष्पदायते॥१॥

तवसिद्धे णयसिद्धे, संजम सिद्धे चरित सिद्धे य।
णाणम्मि दंसणम्मि य, सिद्धे सिरसा णमस्सामि॥२॥

इच्छामि भंते ! सिद्ध भत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं, अट्ठविह कम्म-विप्प-मुक्काणं, अट्ठगुण-संपण्णाणं, उड्ढलोएमत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तव सिद्धाणं, णय-सिद्धाणं, संजम-सिद्धाणं, चरित्त-सिद्धाणं, अतीताणागद-वट्टमाण-

कालत्तय-सिद्धाणं, सव्व-सिद्धाणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होदु मज्झं।

एकादश प्रतिमा स्वरूप

इच्छामि भंते ! देवसियं (राइय) आलोचेउं तत्थ-

पंचुम्बर सहियाइं, सत्तवि वसणाइं जो विवज्जेइ।
सम्मत्त-विशुद्ध मई, सो दंसण सावओ भणिओ॥१॥

पंच य अणुव्वयाइं, गुणव्वयाइं हवंति तह तिण्णि।
सिक्खावयाइं चत्तारि, जाण विदियम्मि ठाणम्मि॥२॥

जिणवयण धम्मचेइय, परमेट्ठि जिणालयाण णिच्चंपि।
जं वंदणं तिआलं, कीरइ सामाइयं तं खु॥३॥

उत्तम मज्झ जहण्णं, तिविहं पोसह विहाण मुद्दिट्ठं।
सगसत्तीए मासम्मि, चउसु पव्वेसु कायव्वं॥४॥

जं वज्जिजदि हरिदं, तय पत्तपवाल कंदफल वीयं।
अप्पासुगं च सलिलं, सचित्त णिव्वत्तिमं ठाणं॥५॥

मण वयण-काय कद, कारिदाणुमोदेहिं मेहुणं णवधा।
दिवसम्मि जो विवज्जदि, गुणम्मि सो सावओ छट्ठो ॥६ ॥

पुव्वुत्तणव विहाणं पि, मेहुणं सव्वदा विवज्जन्तो।
इत्थि कहादि णिवित्ती, सत्तमगुण बंभचारी सो ॥७ ॥

जं किं पि गिहारंभं, बहुथोवं वा सया विवज्जेदि।
आरंभ-णिवित्तमदी, सो अट्ठम सावओ भणिओ ॥८ ॥

मोत्तूण वत्थमित्तं, परिग्गहं जो विवज्जदेसेसं।
तत्थवि मुच्छं-ण करेदि, वियाण सो सावओ णवमो ॥९ ॥

पुट्ठो वाऽपुट्ठो वा, णियगेहिं परेहिं सग्गिह कज्जे।
अणुमणणं जो ण कुणदि, वियाण सो सावओ दसमो ॥१० ॥

उद्दिष्ट त्याग प्रतिमा

णव-कोडीसु विशुद्धं, भिक्खायरणेण भुंजदे भुंजं।
जायण रहियं जोग्गं, एयारस सावओ सो दु ॥११ ॥

एयारसम्मि ठाणे, उक्किट्ठो सावओ हवई दुविहो।
वत्थेय धरो पढमो, कोवीण परिग्गहो विदिओ ॥१२ ॥

तव वय णियमावासय, लोचं कारेदि पिच्छ गिण्हेदि।
अणुवेहा धम्मज्झाणं, करपत्ते एय-ठाणम्मि॥१३॥

एत्थ मे जो कोई देवसिओ (राइओ) अइचारो, अणाचारो तस्स भंते ! पडिक्कमामि पडिक्कमंतस्स मे सम्मत्त-मरणं, समाहि-मरणं, पंडियमरणं, वीरिय-मरणं, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

दंसण वय सामाइय, पोसह सचित्त रायभत्ते य।
बंभाऽऽरंभ परिग्गह, अणुमणमुद्दिट्ठ देसविरदे य॥१॥

एयासु जधा कहिद पडिमासु पमादाइ कयाइचार सोहणट्ठं छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं। अरहंत सिद्ध आयरिय उवज्झाय सव्वसाहु सक्खियं, सम्मत्त पुव्वगं, सुव्वदं दिढव्वदं समारोहियं मे भवदु, मे भवदु, मे भवदु।

अथ देवसिय (राइय) पडिक्कमणाए सव्वाइचार विसोहिणिमित्तं, पुव्वाइरियकमेण पडिक्कमण भत्ति काउस्सग्गं करोमि।

(णमो अरहंताणं इत्यादि दण्डक पेज नं. 237 पर पढ़े।)

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं॥१॥

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं॥२॥

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं॥३॥

णमोजिणाणं! णमोजिणाणं! णमोजिणाणं! णमो णिस्सिहीए! णमो णिस्सिहीए! णमो णिस्सिहीए! णमोत्थुदे! णमोत्थुदे! णमोत्थुदे! अरहंत! सिद्ध! बुद्ध ! णीरय! णिम्मल! सममण! सुभमण! सुसमत्थ! समजोग! समभाव ! सल्लघट्टाणं! सल्लघत्ताणं! णिब्भय! णीराय! णिद्दोस ! णिम्मोह! णिम्मम! णिस्संग ! णिस्सल्ल ! माण-माय-मोस-मूरण, तवप्-पहावण गुण-रयण, सील-सायर, अणंत, अप्पमेय, महदि-महावीर-वड्ढमाण बुद्धिरिसिणो, चेदि णमोत्थु दे, णमोत्थु दे, णमोत्थु दे।

मम मंगलं अरहंता य, सिद्धा य, बुद्धा य, जिणा य, केवलिणो, ओहिणाणिणो, मणपज्जयणाणिणो, चउदस पुव्वगामिणो, सुदसमिदि समिद्धा य, तवो य, बारह विहो

तवसी, गुणा य-गुणवंतो य, महरिसी तित्थं-तित्थंकरा य, पवयणं-पवयणी य, णाणं-णाणी य, दंसणं-दंसणी य, संजमो-संजदा य, विणओ-विणदा य, बंभचेरवासो, बंभचारी य, गुत्तीओ चेव-गुत्तिमंतो य, मुत्तिओचेव मुत्तिमंतो य, समिदीओ-चेव-समिदि मंतो य, सुसमय परसमय विदु खंति खंति-वंतो य, खवगा य, खीणमोहा य-खीणवंतो य, बोहिय बुद्धा य, बुद्धिमंतो य, चेइयरुक्खा य चेईयाणि।

उड्ढ-मह-तिरियलोए, सिद्धायदणाणि णमस्सामि, सिद्ध णिसीहियाओ, अट्ठावय पव्वये, सम्मेदे, उज्जंते, चंपाए, पावाए, मज्झिमाए, हत्थिवालियसहाय, जाओ अण्णाओ काओवि णिसीहियाओ जीवलोयम्मि इसिपब्भारतल-गयाणं सिद्धाणं बुद्धाणं कम्मचक्क-मुक्काणं णीरयाणं णिम्मलाणं गुरु आइरिय उवज्झायाणं पव्वतित्थेर कुलयराणं चउवण्णो य समण-संघो य, दससु भरहेरावएसु पंचसु महाविदेहेसु जो लोए संति साहवो संजदा तवसी एदे मम मंगलं पवित्तं एदेहं मंगलं करेमि भावदो विसुद्धो सिरसा अहि-वंदिऊण सिद्धे-काऊण अंजलिं मत्थयम्मि तिविहं तियरण सुद्धो।

पडिक्कमामि भंते! दंसण पडिमाए-संकाए[1], कंखाए[2], विदिगिंच्छाए[3], परपासंड पसंसणाए[4], पसंथुए[5], जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥१॥

पडिक्कमामि भंते! वद पडिमाए पढमे थूलयडे हिंसाविरदि वदे :- वहेण[1] वा, बंधेण[2] वा, छेएण[3] वा, अइभारारोहणेण[4] वा, अण्णपाण-णिरोहणेण[5] वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥२-१॥

पडिक्कमामि भंते! वद पडिमाए विदिये थूलयडे असच्चविरदि वदे :- मिच्छोपदेसेण[1] वा, रहो अब्भक्खाणेण[2] वा, कूडलेह करणेण[3] वा, णायाऽपहारेण[4] वा, सायारमंतभेएण[5] वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणु-मण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥-२-२॥

पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाए तिदिये थूलयडे थेणविरदि वदे :- थेणपओगेण[1] वा, थेण-हरियादाणेण[2] वा, विरुद्ध रज्जा-इक्कमणेण[3] वा, हीणाहियमाणुम्माणेण[4] वा, पडिरूवय ववहारेण[5] वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, कायेण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥२-३॥

पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाए चउत्थे थूलयडे अबंभविरदि वदे :- परविवाह करणेण[1] वा, इत्तरिया परिग्गहिदा[2]-ऽपरिग्गहिदा गमणेण[3] वा, अणंग कीडणेण[4] वा, कामतिव्वाभिणिवेसेण[5] वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥२-४॥

पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाए पंचमे थूलयडे परिग्गह परिमाणवदे :- खेत्त वत्थूणं परिमाणाऽइक्कमणेण[1] वा, धण धण्णाणं परिमाणाऽइक्कमणेण[2] वा, हरिण्ण सुवण्णाणं परिमाणाऽइक्कमणेण[3] वा, दासी दासाणं परिमाणाऽइक्कमणेण[4] वा, कुप्प भांड परिमाणाऽइक्कमणेण[5] वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा,

वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥२-५॥

पडिक्कमामि भंते! वद पडिमाए पढमे गुणव्वदेः- उड्ढवइक्कमणेण[1] वा, अहोवइक्कमणेण[2] वा, तिरियवइक्कमणेण[3] वा, खेत्त वड्ढिएण[4] वा, अंतराधाणेण[5] वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥२-६-१॥

पडिक्कमामि भंते! वद पडिमाए विदिये गुणव्वदेः- आणयणेण[1] वा, विणिजोगेण[2] वा, सद्दाऽणुवाएण[3] वा, रूवाऽणुवाएण[4] वा, पुग्गलखेवेण[5] वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥२-७-२॥

पडिक्कमामि भंते! वद पडिमाए तिदिए गुणव्वदेः- कंदप्पेण[1] वा, कुकुवेएण[2] वा, मोक्खरिएण[3] वा, असमक्खिया-हिकरणेण[4] वा, भोगोपभोगाऽणत्थकेण[5] वा, जो मए देवसिओ

(राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥२-८-३॥

पडिक्कमामि भंते! वद पडिमाए पढमे सिक्खावदेः- फासिंदिय भोगपरिमाणाऽइक्कमणेण[1] वा, रसणिंदियभोग परिमाणाऽइक्कमणेण[2] वा, घाणिंदिय भोग परिमाणाऽइक्कमणेण[3] वा, चक्खिंदिय भोग परिमाणाऽइक्कमणेण[4] वा, सवणिंदिय भोग परिमाणाऽइक्कमणेण[5] वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥२-९-१॥

पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाए विदिए सिक्खावदेः- फासिंदिय परिभोग परिमाणाऽइक्कमणेण[1] वा, रसणिंदिय परिभोग परिमाणाऽइक्कमणेण[2] वा, घाणिंदिय परिभोग परिमाणाऽइक्कमणेण[3] वा, चक्खिंदिय परिभोग परिमाणाऽइक्कमणेण[4] वा, सवणिंदिय परिभोग परिमाणाऽइक्कमणेण[5] वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥२-१०-२॥

पडिक्कमामि भंते! वद पडिमाए तिदिए सिक्खावदेः- सचित्त णिक्खेवेण[1] वा, सचित्त-पिहाणेण[2] वा, पर व्यएसेण[3] वा, कालाऽइक्कमणेण[4] वा, मच्छरिएण[5] वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥२-११-३॥

पडिक्कमामि भंते! वद पडिमाए चउत्थे सिक्खावदेः- जीविदाऽसंसणेण[1] वा, मरणाऽसंसणेण[2] वा, मित्ताऽणुराएण[3] वा, सुहाऽणुबंधेण[4] वा, णिदाणेण[5] वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥२-१२-४॥

पडिक्कमामि भंते! सामाइय पडिमाए :- मण दुप्-पणिधाणेण[1] वा, वय दुप्-पणिधाणेण[2] वा, काय दुप्-पणि- धाणेण[3] वा, अणादरेण[4] वा, सदि अणुव्वट्ठवणेण[5] वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥३॥

पडिक्कमामि भंते! पोसह पडिमाए:- अप्-पडिवेक्खियाऽपमज्जियो सग्गेण[1] वा, अप्-पडिवेक्खि-याऽपमज्जियादाणेण[2] वा, अप्पडिवेक्खियाऽपमज्जिया-संथारो वक्कमणेण[3] वा, आवस्सयणादरेण[4] वा, सदिअणुवट्ठावणेण[5] वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥४॥

पडिक्कमामि भंते ! सचित्त विरदि पडिमाए :- पुढविकाइया[1] जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा, आउकाइया[2] जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा, तेउ काइया[3] जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा, वाउकाइया[4] जीवा असंखेज्जाऽसंखेज्जा, वणप्फदिकाइया[5] जीवा अणंताऽणंता, हरिया, बीया, अंकुरा, छिण्णा, भिण्णा, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, जो मए देवसियो (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥५॥

पडिक्कमामि भंते ! राइभत्त विरदि पडिमाए :-णवविह बंभचरियस्स दिवा जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥६॥

पडिक्कमामि भंते ! बंभ पडिमाए:- इत्थि कहायत्तणेण[1] वा, इत्थि मणोहरांग निरिक्खिणेण[2] वा, पुव्वरयाऽणुस्सरणेण[3] वा, काम कोवण-रसा सेवणेण[4] वा, शरीर मंडणेण[5] वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥७॥

पडिक्कमामि भंते ! आरंभ विरदि पडिमाए :- कसायवसंगएण आरम्भो, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥८॥

पडिक्कमामि भंते ! परिग्गह विरदि पडिमाए :- वत्थमेत्त परिग्गहादो अवरम्मि परिग्गहे मुच्छा परिणामे जो मए देवसियो (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥९॥

पडिक्कमामि भंते ! अणुमण विरदि पडिमाए :- जं किं पि अणुमणणं पुट्ठापुट्ठेण जो मए देवसियो (राइयो) मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥१०॥

पडिक्कमामि भंते ! उद्दिट्ठ विरदि पडिमाए:- जं किं पि मए उद्दिट्ठ दोस बहुलं आहोरादियं, आहारियं वा, आहारावियं वा, आहारिज्जंतं वा जो मए देवसियो (राइयो) मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥११॥

निर्ग्रन्थ पद की वांछा

इच्छामि भंते ! इमं णिग्गंथं पवयणं अणुत्तरं केवलियं, पडिपुण्णं, णेगाइयं, सामाइयं, संसुद्धं, सल्लघट्टाणं, सल्लघत्ताणं, सिद्धिमग्गं, सेढिमग्गं, खंतिमग्गं, मुत्तिमग्गं, पमुत्तिमग्गं, मोक्खमग्गं, पमोक्खमग्गं, णिज्जाणमग्गं, णिव्वाणमग्गं, सव्वदु:ख परिहाणिमग्गं, सुचरिय परिणिव्वाणमग्गं, अवितहं, अविसंति-पवयणं, उत्तमं तं सद्दहामि, तं पत्तियामि, तं रोचेमि, तं फासेमि, इदोत्तरं अण्णं णत्थि, ण भूदं, ण भविस्सदि, णाणेण वा, दंसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, इदो जीवा सिज्झंति, बुज्झंति, मुच्चंति, परिणिव्वाण-यंति, सव्व दुक्खाण-मंतंकरेंति, पडि-वियाणंति समणोमि-संजदोमि, उवरदोमि, उवसंतोमि-उवहि-णियडि-माण-माया-मोसमूरण मिच्छाणाण-

मिच्छादंसण-मिच्छाचरित्तं च पडिविरदोमि, सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तं च रोचेमि, जं जिणवरेहिं पण्णत्तो, इत्थ मे जो कोई (राइओ) देवसिओ अइचारो अणाचारो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

इच्छामि भंते! पडिक्कमणाइचार-मालोचेउं जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो, काइयो, वाइयो, माणसिओ, दुच्चरिओ, दुच्चारिओ, दुब्भासिओ, दुप्परिणामिओ, णाणे, दंसणे, चरित्ते, सुत्ते, सामाइए, एयारसण्हं-पडिमाणं विराहणाए, अट्ठविहस्स कम्मस्स-णिग्घादणाए, अण्णहा उस्सासिदेण वा, णिस्सासिदेण वा, उम्मिस्सिदेण वा, णिम्मिस्सिदेण वा, खासिदेण वा, छिंकिदेण वा, जंभाइदेण वा, सुहुमेहिं-अंग-चलाचलेहिं, दिट्ठि चलाचलेहिं, एदेहिं सव्वेहिं, अ-समाहिं-पत्तेहिं, आयरेहिं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, पज्जुवासं, करेमि, तावकायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

दंसण वय सामाइय, पोसह सचित्त राइभत्ते य।
बंभाऽऽरंभ परिग्गह, अणुमण-मुद्दिट्ठ देसविरदे य॥१॥

एयासु जधा कहिद पडिमासु पमादाइ कयाइचार सोहणट्ठं छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं। अरहंत, सिद्ध, आयरिय,

उवज्झाय, सव्वसाहु, सक्खियं, सम्मत्त पुव्वगं, सुव्वदं दिढव्वदं समारोहिय मे भवदु, मे भवदु, मे भवदु।

अथ देवसिय (राइय) पडिक्कमणाए सव्वाइचार विसोहि, णिमित्तं, पुव्वाइरियकमेण निष्ठितकरण वीरभक्ति काउस्सग्गं करोमि।

(इति विज्ञाप्य–णमो अरहंताणं इत्यादि दण्डकं 236 पृष्ठे पठित्वा कायोत्सर्गं कुर्यात्। जीवियित्यादि स्तवं पठेत्।)

श्री वीर भक्ति

य: सर्वाणि चराचराणि विधिवद् द्रव्याणि तेषां गुणान्,
पर्यायानपि भूत-भावि-भवित: सर्वान् सदा सर्वदा।
जानीते युगपत् प्रतिक्षण मत: सर्वज्ञ-इत्युच्यते,
सर्वज्ञाय जिनेश्वराय महते वीराय तस्मै नम:॥१॥

वीर: सर्व-सुराऽसुरेन्द्र-महितो वीरं बुधा: संश्रिता:,
वीरेणाभिहत: स्व-कर्म-निचयो वीराय भक्त्या नम:।
वीरात् तीर्थ-मिदं-प्रवृत्त-मतुलं वीरस्य घोरं तपो,
वीरे श्री-द्युति-कान्ति-कीर्ति-धृतयो हे वीर ! भद्रं त्वयि॥२॥

ये वीर-पादौ प्रणमन्ति नित्यं,
ध्यान-स्थिता: संयम योग - युक्ता:।

ते वीत शोका हि भवन्ति लोके,
संसार दुर्गं विषमं तरन्ति ॥३॥

व्रत-समुदय मूलः संयम-स्कन्ध-बन्धो,
यम नियम पयोभि-र्वर्धितः शील-शाखः।
समिति-कलिक-भारो गुप्ति-गुप्त-प्रवालो,
गुण-कुसुम सुगन्धिः सत्-तपश्चित्र-पत्रः ॥४॥

शिव-सुख-फलदायी यो दया-छाय-योघः,
शुभजन-पथिकानां खेदनोदे-समर्थः।
दुरित-रविज-तापं प्रापयन्-नन्तभावं,
स भव-विभव-हान्यै नोऽस्तु चारित्र-वृक्षः ॥५॥

चारित्रं सर्व-जिनैश्चरितं प्रोक्तं च सर्व-शिष्येभ्यः।
प्रणमामि पञ्च-भेदं पञ्चम-चारित्र-लाभाय ॥६॥

धर्मः सर्व-सुखाकरो हितकरो धर्मं बुधाश्-चिन्वते,
धर्मेणैव समाप्यते शिव-सुखं धर्माय तस्मै नमः।
धर्मान्नास्त्-यपरः सुहृद् भव-भृतां धर्मस्य मूलं दया,
धर्मे चित्तमहं दधे प्रतिदिनं हे धर्म ! मां पालय ॥७॥

धम्मो मंगल-मुक्किट्ठं अहिंसा संयमो तवो।
देवा वि तस्स पणमंति जस्स धम्मे सया मणो ॥८॥

इच्छामि भंते ! वीरभत्ति काउस्सग्गं करेमि तत्थ देसासिआ, असणासिआ, ठाणासिआ, कालासिआ, मुद्दासिआ, काउसग्गासिआ, पणमासिआ, आवत्तासिआ, पडिक्कमणाए तत्थसु आवासएसु परिहीणदाए जो मए अच्चासणा देवसिय (राइयो) मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं॥९॥

दंसण वय सामाइय, पोसह सचित्त राइभत्ते य।
बंभाऽऽरंभ-परिग्गह, अणुमणमुद्दिट्ठ देसविरदे य॥

एयासु जधा कहिद पडिमासु पमादाइ कयाइचार सोहणट्ठं छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं। अरहंत-सिद्ध-आयरिय-उवज्झाय-सव्वसाहु सक्खियं, सम्मत्त पुव्वगं, सुव्वदं दिढव्वदं समारोहियं मे भवदु, मे भवदु, मे भवदु।

अथ देवसिय (राइय) पडिक्कमणाए सव्वाऽइचार विसोहिणिमित्तं, पुव्वाइरिय कमेण चउवीस तित्थयर भक्ति काउस्सग्गं करोमि।

(इति विज्ञाप्य–णमो अरहंताणं इत्यादि दण्डकं 236 पृष्ठे पठित्वा कायोत्सर्गं कुर्यात् – जीवियित्यादि स्तवं पठेत्।)

श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर भक्ति

चउवीसं तित्थयरे, उसहाइ-वीर-पच्छिमे वन्दे।
सव्वे सगण-गण-हरे, सिद्धे सिरसा णमस्सामि॥१॥

ये लोकेऽष्ट-सहस्त्र-लक्षण-धराः, ज्ञेयार्णवाऽन्तर्गताः,
ये सम्यग्-भव-जाल-हेतु-मथनाश्, चन्द्रार्क-तेजोऽधिकाः।
ये साध्विन्द्र-सुराप्सरो-गण-शतैर्, गीत-प्रणूत्याऽर्चितास्,
तान् देवान् वृषभादि-वीर-चरमान्, भक्त्या नमस्याम्यहम्॥२॥

नाभेयं देवपूज्यं जिनवर-मजितं, सर्व-लोकप्रदीपं,
सर्वज्ञं सम्भवाख्यं मुनिगणवृषभं, नन्दनं देवदेवम्।
कर्मारिघ्नं सुबुद्धिं, वर कमलनिभं पद्म पुष्पाऽभिगन्धं
क्षान्तं दान्तं सुपार्श्वं, सकल शशिनिभं चन्द्रनामानमीडे॥३॥

विख्यातं पुष्पदन्तं भव भय मथनं, शीतलं लोक-नाथं,
श्रेयांसं शील-कोशं, प्रवर-नर-गुरुं वासुपूज्यं सुपूज्यम्।
मुक्तं दान्तेन्द्रियाऽश्वं, विमल-मृषि पतिं सैंहसैन्यं मुनीन्द्रं,
धर्मं सद्धर्म-केतुं शम-दम-निलयं स्तौमि शांतिं शरण्यम्॥४॥

कुंथुं सिद्धाऽलयस्थं श्रमणपतिमरं त्यक्त-भोगेषु चक्रं,
मल्लिं विख्यात-गोत्रं खचर-गण-नुतं सुव्रतं सौख्य राशिम्।
देवेन्द्रार्च्यं नमीशं हरि कुल तिलकं नेमिचन्द्रं भवान्तं,
पार्श्वं नागेन्द्र वन्द्यं शरण-महमितो वर्धमानं च भक्त्या॥५॥

अञ्चलिका

इच्छामि भन्ते ! चउवीस-तित्थयर-भक्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं, पंच-महाकल्लाण-संपण्णाणं अट्ठमहा-पाडिहेरसहियाणं, चउतीसाऽतिसय-विसेस-संजुत्ताणं बत्तीस-देविंद-मणिमय-मउड-मत्थय-महिदाणं, बलदेव-वासुदेव-चक्कहर-रिसि-मुणि-जइ-अणगारोवगूढाणं, थुइ- सय-सहस्स-णिलयाणं, उसहाइ-वीर-पच्छिम-मंगल-महापुरिसाणं, सया णिच्चकालं अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण संपत्ति होउ मज्झं।

दंसण वय सामाइय, पोसह सचित्त राइभत्ते य।
बंभाऽऽरंभ परिग्गह, अणुमणमुद्दिट्ठ देसविरदे य॥

एयासु जधा कहिद पडिमासु पमादाइकयाऽदिचार सोहणट्ठं छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं। अरहंत-सिद्ध-आयरिय-उवज्झाय-सव्वसाहु सक्खियं, सम्मत्त पुव्वगं, सुव्वदं दिढव्वदं समारोहियं मे भवदु, मे भवदु, मे भवदु।

अथ देवसिय (राइय) पडिक्कमणाए सव्वाऽदिचार विसोहिणिमित्तं, पुव्वाऽयरिय कमेण आलोयण श्री सिद्ध भत्ति, पडिक्कमणभक्ति, णिट्ठिद करण वीरभक्ति, चउवीस-तित्थयर भत्ति, कृत्त्वा तद्धीनाधिकत्-वादिदोष परिहारार्थं सकल दोष

निराकरणार्थं सर्वमलातिचार विशुद्धयर्थं आत्मपवित्रीकरणार्थं समाधिभक्ति कायोत्सर्गं करोमि। (णमोकार ९ गुणिवा)

अथेष्ट प्रार्थना

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः।

शास्त्राभ्यासो जिनपति-नुतिः सङ्गतिः सर्वदार्यैः,
सद्वृत्तानां गुण-गण-कथा दोषवादे च मौनम्।
सर्वस्यापि प्रिय-हित-वचो भावना चात्म-तत्त्वे,
सम्पद्यन्तां मम भव-भवे यावदेतेऽपवर्गः॥१॥

तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनम्।
तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद् यावन् निर्वाण-सम्प्राप्तिः॥२॥

अक्खर-पयत्थ-हीणं मत्ता-हीणं च जं मए भणियं।
तं खमउ णाण देव! य, मज्झवि दुक्खक्खयं कुणउ॥३॥

अञ्चलिका

इच्छामि भन्ते ! समाहिभत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं, रयणत्तय-सरूव- परमप्प-ज्झाण- लक्खण-समाहि-भत्तीए सया णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण संपत्ति होउ मज्झं।

॥ इति श्रावक प्रतिक्रमण॥

आचार्य वन्दना

अथ पौर्वाह्णिक (आपराह्णिक) आचार्य वन्दना-क्रियायां पूर्वाऽचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्ध भक्ति कायोत्सर्गं कुर्वेऽहं।

(27 श्वासोच्छ्वास में कायोत्सर्ग करें)

सम्मत्त-णाण-दंसण-वीरिय-सुहुमं तहेव अवगहणं।
अगुरु-लघु-मव्वावाहं, अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं॥१॥

तव-सिद्धे णय-सिद्धे, संजम-सिद्धे चरित्त-सिद्धे य।
णाणम्मि दंसणम्मि य, सिद्धे सिरसा णमस्सामि॥२॥

(अञ्चलिका)

इच्छामि भन्ते! सिद्ध भत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त जुत्ताणं अट्ठविह-कम्म-विप्प-मुक्काणं, अट्ठ-गुण-संपण्णाणं, उड्ढलोय-मत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तव-सिद्धाणं, णय-सिद्धाणं, संजम-सिद्धाणं, चरित्त-सिद्धाणं, अतीताणागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्व-सिद्धाणं, णिच्चकालं, अच्चेमि,

पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-सम्पत्ति होउ मज्झं।

अथ पौर्वाह्णिक (आपराह्णिक) आचार्य वन्दना-क्रियायां पूर्वाऽचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना- स्तव-समेतं श्री श्रुत भक्ति कायोत्सर्गं कुर्वेऽहं।

(27 श्वासोच्छ्वास में कायोत्सर्ग करें)

कोटी-शतं द्वादश चैव कोट्यो, लक्षाण्यशीतिस् त्र्यधिकानि चैव।
पञ्चाश-दष्टौ च सहस्र-संख्या-मेतच्छ्रुतं पञ्च-पदं नमामि ॥१॥

अरहंत-भासियत्थं गणहर-देवेहिं गंथियं सम्मं।
पणमामि भत्तिजुत्तो सुदणाण-महोवहिं सिरसा ॥२॥

अञ्चलिका

इच्छामि भन्ते ! सुद भत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं अंगोवंग-पइण्णय-पाहुडय-परियम्म-सुत्त पढमाणिओग पुव्वगय-चूलिया चेव सुत्तत्थय-थुइ-धम्म-कहाइयं, णिच्चकालं अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं।

अथ पौर्वाह्णिक (आपराह्णिक) आचार्य वन्दना-क्रियायां पूर्वाऽऽचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना- स्तव-समेतं श्री आचार्य भक्ति कायोत्सर्गं कुर्वेऽहं।

(27 श्वासोच्छ्वास में कायोत्सर्ग करें)

श्रुत-जलधि-पारगेभ्यः, स्व-पर-मत-विभावना-पटु-मतिभ्यः।
सुचरित-तपो-निधिभ्यो, नमो गुरुभ्यो गुण-गुरुभ्यः ॥१॥

छत्तीस-गुण-समग्गे, पञ्च-विहाचार-करण-संदरिसे।
सिस्साणुग्गह-कुसले, धम्माइरिए सदा वन्दे ॥२॥

गुरु-भत्ति संजमेण य, तरन्ति संसार-सायरं घोरम्।
छिण्णंति अट्ठ-कम्मं, जम्मण-मरणं ण पावेंति ॥३॥

ये नित्यं व्रत-मंत्र-होम-निरता, ध्यानाग्नि-होत्राकुलाः
षट्-कर्माभि-रतास्तपोधन-धनाः, साधु-क्रियाः साधवः॥
शील-प्रावरणा-गुण-प्रहरणाश्-चन्द्रार्क-तेजोऽधिका,
मोक्ष-द्वार-कपाट-पाटन-भटाः प्रीणन्तु माम् साधवः ॥४॥

गुरवः पांतु नो नित्यं, ज्ञान दर्शन-नायकाः।
चारित्राऽर्णव-गम्भीरा, मोक्ष-मार्गोपदेशकाः ॥५॥

(अञ्चलिका)

इच्छामि भन्ते ! आइरिय भत्ति काउस्सग्गो कओ, तस्सालाचेउं सम्मणाण, सम्मदंसण-सम्मचारित जुत्ताणं, पंच-विहाचाराणं, आइरियाणं, आयारादि सुद- णाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं, तिरयण-गुण-पालण- रयाणं सव्वसाहूणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण गुण-सम्पत्ति होउ मज्झं।

गुरु भक्ति

श्री 'आदिसागर आचार्य' गुरुः चारित्र विभूषितं।
भिषजं मंत्रिकं ज्योति-र्विदं नैयायिकं कविम्।।
निमित्तज्ञं बुधैः पूज्यं, सर्व संग विदूरितं।
प्रभाव शालिनं धीरं, वंदे त्रैविध्य भक्तितः॥१॥

वंदे श्री 'महावीर कीर्ति' सुगुरुं विद्याब्धि पार प्रदं।
कालेद्यापि तपोनिधिं गुण गणैः, पूर्णम् पवित्रं स्वयं।।
नग्नत्वादिक दुष्ट शत परिषहैर्-भग्नोन यो योगिराट्।
पापान्यां कुबुद्धि कुष्ट कुहरात, संसार पाथोनिधे॥२॥

कल्पान्त काल वचनाविजयागुरूणां।
लोकोत्तराऽखिल गुणस्तवनं प्रशंसा॥
स्वामिन् नमोस्तु शिरसा मनसा वचोभिः।
दद्या शिवं विमल सागर सूरिवर्यः॥३॥

तुभ्यं नमः रवि समा तव तेजकाय।
तुभ्यं नमः शशि समुज्ज्वल वैभवाय॥
तुभ्यं नमः दुरित जाल विनाशनाय।
तुभ्यं नमः गुरु विराग शिव प्रदाय॥४॥

तुभ्यं नमः सकल संयम धारकाय।
तुभ्यं नमः परम तत्त्व प्रकाशकाय॥
तुभ्यं नमः सुयश मंगल बोधकाय।
तुभ्यं नमः भरत सिन्धु सुवन्दकाय॥५॥

तुभ्यं नमः परम धर्म प्रभावकाय।
तुभ्यं नमः प्रबल बुद्धि विकाशकाय॥
तुभ्यं नमः परम शांति प्रदायकाय।
तुभ्यं नमः 'विशद' सिन्धु गुणार्णवाय॥६॥

आहारे, विहारे, निहारे, शयने, जागरणे, सामायिके, पठन–पाठने, रागेण, दोषेण, मोहेन, भयेन, क्रोधमान, माया, लोभेन, प्रमादेन, त्रय योगेन यत् यत् दुष्कर्म देहि प्रायश्चित मम पापं मिथ्या भवतु।

कायोत्सर्ग करें।

सामायिक विधि

पूर्व दिशा में नौ बार णमोकार मंत्र का जाप्य कर नमस्कार करते हुए–

प्राग्-दिग्-विदिगन्तरे, केवलि-जिन-सिद्ध-साधुगण-देवाः ये सर्वर्द्धि-समृद्धा, योगि-गणाँस्तानहं वन्दे ॥१॥

दक्षिण दिशा में नौ बार णमोकार मंत्र का जाप्य कर नमस्कार करते हुये–

दक्षिण-दिग्-विदिगन्तरे, केवलि-जिन-सिद्ध-साधुगण- देवाः ये सर्वर्द्धि-समृद्धा, योगि-गणाँस्तानहं वन्दे ॥२॥

पश्चिम दिशा में नौ बार णमोकार मंत्र का जाप्य कर नमस्कार करते हुये–

पश्चिम-दिग्-विदिगन्तरे, केवलि-जिन-सिद्ध-साधुगण-देवाः ये सर्वर्द्धि-समृद्धा, योगि-गणाँस्तानहं वन्दे ॥३॥

उत्तर दिशा में नौ बार णमोकार मंत्र का जाप्य कर नमस्कार करते हुये–

उत्तर-दिग्-विदिगन्तरे, केवलि-जिन-सिद्ध-साधुगण-देवाः ये सर्वर्द्धि-समृद्धा, योगि-गणाँस्तानहं वन्दे ॥४॥

प्रतिज्ञा – पिच्छिका युक्त दोनों हाथों को मुकुलित कर और कुहनियों को उदर पर रखकर यथास्थान मस्तक झुकाते हुए प्रतिज्ञा करें –

तीर्थंकर केवलि, सामान्य केवलि, अनबद्ध केवलि, समुद्घात केवलि, उपसर्ग केवलि, मूक केवलि, अन्तःकृत केवलिभ्यो नमो नमः। तीर्थंकरोपदिष्टश्रुताय नमो नमः। सम्यग्दर्शन- ज्ञान-चारित्र-धारकाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुभ्यो नमो नमः। श्री मूलसंघे, कुन्दकुन्दाम्नाये, बलात्कार-गणे, सेन-गच्छे, नन्दी-संघस्य परम्परायाम्, श्री आदिसागराचार्या जातास्तत् शिष्याः श्री महावीर कीर्ति आचार्य-जातास्तत्

शिष्याः श्री विमलसागराचार्या-जातास्तत् शिष्याः श्री विरागसागराचार्य, श्री भरतसागराचार्या- जातास्तत् शिष्या श्री विशद सागराचार्य जातास्तत् शिष्याः..............अहम् (अपना नाम बोलना) जम्बू वृक्षोपलक्षित जम्बूद्वीपे, भरत क्षेत्रे, आर्य-खण्डे, भारत देशे,.............प्रान्ते..............नगरे १००८ श्री................. जिन-चैत्यालयमध्ये, अद्य वीर निर्वाण संवत्...............वि.संवत्................मासोत्तमासे..........मासे ....पक्षे..........शुभ तिथौ..........वासरे पौर्वाह्णिक (माध्यान्हिक) (आपराह्णिक) काले, घटिका-द्वय (४८ मिनट) पर्यन्तं सर्व-सावद्य-योग- विरतोऽस्मि।

ईर्यापथ शुद्धि

पडिक्कमामि भंते ! इरिया-वहियाए, विराहणाए, अणागुत्ते, अइग्गमणे, णिग्गमणे, ठाणे, गमणे, चंकमणे, पाणुग्गमणे, बीजुग्गमणे, हरिदुग्गमणे, उच्चारपस्सवण-खेल-सिंहाण- वियडिय पइट्ठावणियाए, जे जीवा एइंदिया वा, बेइंदिया वा, तेइंदिया वा, चउरिंदिया वा, पंचिंदिया वा, णोल्लिदा वा, पेल्लिदा वा, संघट्टिदा वा, संघादिदा वा, उद्दाविदा वा, परिदाविदा वा, किरिंच्छिदा वा, लेस्सिदा वा, छिंदिदा वा, भिंदिदा वा, ठाणदो वा, ठाणचंकमणदो वा, तस्स उत्तरगुणं, तस्स पायच्छित्त-करणं, तस्स विसोहि-करणं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, णमोक्कारं, पज्जुवासं करेमि, ताव कालं, पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि। (कायोत्सर्ग करें)

ईर्यापथ आलोचना

ईर्या - पथे प्रचलताद्य मया प्रमादा-
देकेन्द्रिय-प्रमुख-जीव-निकाय-बाधा।
निर्वर्तिता यदि भवेद-युगान्तरेक्षा,
मिथ्या तदस्तु दुरितं गुरु-भक्तितो मे॥१॥

इच्छामि भन्ते ! इरियावहियस्स आलोचेउं, पुव्वुत्तर-दक्खिण-पच्छिम-चउदिस-विदिसासु, विहरमाणेण जुगंतर-दिट्ठिणा, भव्वेण, दट्ठव्वा। पमाद-दोषेण, डव-डव-चरियाए, पाण-भूद-जीव-सत्ताणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

कृत्य प्रतिज्ञा

नमोऽस्तु भगवन् ! देव-वन्दनां करिष्यामि।

मुख्य मंगल

सिद्धं सम्पूर्ण-भव्यार्थ सिद्धेः कारण-मुत्तमम्।
प्रशस्त-दर्शन-ज्ञान-चारित्र-प्रतिपादनम्॥१॥
सुरेन्द्र - मुकुटाश्लिष्ट - पाद - पद्मांशु-केशरम्।
प्रणमामि महावीरं लोक-त्रितय मंगलम्॥२॥

सामायिक स्वीकार

खम्मामि सव्व-जीवाणं, सव्वे जीवा खमंतु मे।
मित्ती मे सव्व-भूदेसु, बैरं मज्झं ण केण वि॥१॥

राग-बंध पदोसं च, हरिसं दीण-भावयं।
उस्सुगत्तं भयं सोगं, रदि-मरदिं च वोस्सरे॥२॥
हा! दुट्ठ-कयं, हा! दुट्ठ-चिंतियं भासियं च हा! दुट्ठं।
अंतो-अंतो डज्झमि पच्छत्तावेण वेयंतो॥३॥
दव्वे खेत्ते काले भावे य कदा-वराह-सोहणयं।
णिंदण-गरहण-जुत्तो, मण-वच-काएण पडिक्कमणं॥४॥
समता सर्व-भूतेसु, संयमः शुभ-भावना।
आर्त्त-रौद्र-परित्यागस्-तद्धि सामायिकं मतं॥५॥

अथ कृत्य-विज्ञापना

भगवन्! नमोऽस्तु प्रसीदन्तु, प्रभू-पादा-वंदिष्येऽहं।
एषोऽहं सर्व-सावद्य-योगाद्-विरतोऽस्मि।

अथ पौर्वाह्णिक (माध्याह्निक) (अपराह्णिक) देव-वंदना-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्म-क्षयार्थं भाव-पूजा-वंदना-स्तव-समेतं श्री चैत्यभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(सर्वप्रथम पंचांग नमस्कार करें, पश्चात् तीन आवर्त और एक शिरोनति कर णमो अरिहंताणं आदि दण्डक पेज नं. 137 पर पढ़ें।)

श्री चैत्य भक्ति पेज नं. 285 पर पढ़ें।

अथ पौर्वाह्णिक/माध्याह्निक/अपराह्निक देव वंदना-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वंदना- स्तव समेतं श्री पंच- महागुरुभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

णमो अरिहंताणं आदि दण्डक पेज नं. 137 पर पढ़ें।

पंचमहागुरु भक्ति (प्राकृत)

मणुय-णाइंद-सुर-धरिय-छत्तत्तया,
पंचकल्लाण-सोक्खावली-पत्तया।
दंसणं णाण झाणं अणंतं बलं,
ते जिणा दिंतु अम्हं वरं मंगलं॥१॥

जेहिं झाणग्गि-वाणेहिं अइ-दड्ढयं,
जम्म-जर मरण-णयर-त्तयं दड्ढयं।
जेहिं पत्तं सिवं सासयं ठाणयं,
ते महं दिंतु सिद्धा वरं णाणयं॥२॥

पंच-आचार-पंचग्गि-संसाहया,
बारसंगाइ-सुअ-जलहि-अवगाहया।
मोक्ख-लच्छी महंती महंते सया,
सूरिणो दिंतु मोक्खं-गया-संगया॥३॥

घोर-संसार-भीमाडवी-काणणे,
तिक्ख-वियराल-णह-पाव-पंचाणणे।
णट्ठ-मग्गाण जीवाण पहदेसिया,
वंदिमो ते उवज्झाय अम्हे सया॥४॥

उग्ग-तव-चरण-करणेहिं झीणं गया,
धम्मवर-झाण-सुक्केक्क-झाणं-गया।
णिब्भरं तव-सिरी-ए-समा-लिंगया,
साहवो ते महा-मोक्ख-पह-मग्गया॥५॥

एण थोत्तेण जो पंचगुरु वंदए,
गुरुय-संसार-घण-वेल्लि सो छिंदए।
लहइ सो सिद्ध-सोक्खाइ बहु-माणणं,
कुणइ कम्मिंधणं पुंज-पज्जालणं॥६॥

अरुहा सिद्धा इरिया उवझाया साहु पंचपरमेट्ठी।
एदे पंच-णमोयारा भवे-2 मम सुहं दिंतु॥७॥

अञ्चलिका

इच्छामि भन्ते! पंचमहागुरु-भक्ति काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं। अट्ठ-महा-पाडिहेर-संजुत्ताणं अरहंताणं, अट्ठ-गुण-संपण्णाणं उड्ढ-लोय-मत्थयम्मि पइट्ठियाणं सिद्धाणं, अट्ठ-पवयण-मउ-संजुत्ताणं, आइरियाणं, आयारादि-सुद-णाणोवदेसयाणं, उवज्झायाणं, ति-रयण-गुण-पालण-रदाणं सव्वसाहूणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं।

अथ पौर्वाह्णिक (माध्याह्णिक) (अपराह्णिक) देव वंदना-क्रियायां पूर्वाऽचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वंदना-स्तव समेतं श्री चैत्यभक्ति, पंचगुरु- भक्ति कृत्त्वा तद्धीनाधिकत्वादि-दोष-विशुद्ध्यर्थं आत्म- पवित्री करणार्थं समाधि भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

द्वात्रिंशतिका-सामायिक पाठ

सत्त्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोदं, क्लिष्टेषु जीवेषु कृपा-परत्वम्।
माध्यस्थ भावं विपरीत वृत्तौ, सदा ममाऽत्मा विदधातु देव !॥१॥

शरीरतः कर्त्तु-मनन्त-शक्तिं, विभिन्न-मात्मान-मपास्त-दोषम्।
जिनेन्द्र ! कोषादिव खड्ग-यष्टिं, तव प्रसादेन ममास्तु शक्तिः॥२॥

दुःखे-सुखे वैरिणि-बन्धुवर्गे, योगे-वियोगे भवने-वने वा।
निराकृताऽशेष-ममत्व बुद्धेः, समं मनो मेऽस्तु सदापि नाथ !॥३॥

मुनीश! लीनाविव कीलिताविव, स्थिरौ निषाताविव बिम्बिताविव।
पादौ त्वदीयौ मम तिष्ठतां सदा, तमो धुनानौ हृदि दीपकाविव॥४॥

एकेन्द्रियाद्या यदि देव! देहिनः, प्रमादतः सञ्चरता इतस्ततः।
क्षता विभिन्ना मिलिता निपीडितास्ः, तदस्तु मिथ्या दुरनुष्ठितं तदा ॥५ ॥

विमुक्तिमार्ग-प्रतिकूल वर्तिना, मया कषायाक्ष-वशेन दुर्धिया।
चारित्र शुद्धेर्-यदकारि लोपनं, तदस्तु मिथ्या मम दुष्कृतं प्रभो ! ॥६ ॥

विनिन्दनाऽलोचन-गर्हणैरहं, मनोवचः काय कषाय - निर्मितम्।
निहन्मि पापं भव दुःख कारणं, भिषग्विषं मंत्र गुणै-रिवाखिलम्॥७ ॥

अतिक्रमं यद्-विमतेर्-व्यतिक्रमं, जिनातिचारं-सुचरित्र कर्मणः।
व्यधा-मनाचार-मपि प्रमादतः, प्रतिक्रमं तस्य करोमि शुद्धये ॥८ ॥

क्षतिं मनःशुद्धि-विधे-रतिक्रमं, व्यतिक्रमं शीलव्रते - र्विलंघनम्।
प्रभोऽतिचारं विषयेषु वर्तनं, वदन्त्-यनाचार-मिहाति-सक्तताम्॥९ ॥

यदर्थ मात्रा-पद-वाक्य-हीनं, मया प्रमादाद्यदि किञ्चनोक्तम्।
तन्मे क्षमित्वा विदधातु देवी, सरस्वती केवलबोध-लब्धिम्॥१० ॥

बोधिः समाधिः परिणाम-शुद्धिः, स्वात्मोपलब्धिः शिव-सौख्य-सिद्धिः।
चिन्तामणिं चिन्तित-वस्तु-दाने, त्वां वन्द्यमानस्य ममाऽस्तु देवि ॥११ ॥

यः स्मर्यते सर्व-मुनीन्द्र-वृन्दैर्, यः स्तूयते सर्व-नरामरेन्द्रैः।
यो गीयते वेदपुराणशास्त्रैः, स देवदेवो हृदये ममाऽस्ताम्॥१२ ॥

यो दर्शनज्ञान सुखस्वभावः, समस्त संसार विकार-वाह्यः।
समाधि-गम्यः परमात्म-संज्ञः, स देवदेवो! हृदये ममाऽस्ताम्॥१३॥

निषूदते यो भवदुःख-जालं, निरीक्षते यो जग-दन्तरालम्।
योऽन्तर्गतो योगि-निरीक्षणीयः, स देवदेवो हृदये ममाऽस्ताम्॥१४॥

विमुक्तिमार्ग प्रतिपादको यो- यो जन्ममृत्यु व्यसनाद्-यतीतः।
त्रिलोकलोकी विकलोऽकलङ्कः, स देवदेवो हृदये ममाऽस्ताम्॥१५॥

क्रोडी-कृताशेष-शरीरवर्गाः- रागादयो यस्य न सन्ति दोषाः।
निरिन्द्रयो ज्ञानमयोऽनपायः, स देवदेवो हृदये ममाऽस्ताम्॥१६॥

यो व्यापको विश्व-जनीनवृत्तेः- सिद्धो विबुद्धो धुत-कर्मबन्धः।
ध्यातो धुनीते सकलं विकारं- स देवदेवो हृदये ममाऽस्ताम्॥१७॥

न स्पृश्यते कर्म कलङ्क दोषैर्- यो ध्वान्त सङ्घैरिव तिग्मरश्मिः।
निरञ्जनं नित्य-मनेक-मेकं, तं देव-माप्तं शरणं प्रपद्ये॥१८॥

विभासते यत्र मरीचिमाली, न विद्यमाने भुवनाव-भासी।
स्वात्म स्थितं बोधमय-प्रकाशं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये॥१९॥

विलोक्यमाने सति यत्र विश्वं, विलोक्यते स्पष्टमिदं विविक्तं।
शुद्धं शिवं शान्त मनाद्यनन्तं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये॥२०॥

येन क्षता मन्मथ-मान-मूर्च्छा- विषाद-निद्रा-भय शोक-चिन्ताः।
क्षतोऽनले-नेव तरु-प्रपञ्चस्, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये॥२१॥

न संस्तरोऽश्मा न तृणं न मेदिनी, विधानतो नो फलको वि निर्मितः।
यतो निरस्ताक्ष-कषाय-विद्विषः, सुधीभि-रात्मैव-सुनिर्मलो मतः॥२२॥

न संस्तरो भद्र ! समाधि-साधनं-, न लोकपूजा न च संघमेलनम्।
यतस्ततोऽध्यात्म रतो भवानिशं, विमुच्य सर्वामपि बाह्य-वासनाम्॥२३॥

न सन्ति बाह्या मम केचनार्थाः-, भवामि तेषां न कदाचनाहम्।
इत्थं विनिश्चित्य विमुच्य बाह्यं, स्वस्थः सदा त्वं भव भद्र मुक्त्यै॥२४॥

आत्मान-मात्मन्-यवलोकमानस्, त्वं दर्शन ज्ञानमयो विशुद्धः।
एकाग्रचित्तः खलु यत्र-तत्र, स्थितोऽपि साधुर्-लभते समाधिम्॥२५॥

एकः सदा शाश्वतिको ममाऽत्मा, वि निर्मलः साऽधिगम-स्वभावः।
बहिर्भवाः सन्त्-यपरे समस्ता, न शाश्वताः कर्मभवाः स्वकीयाः॥२६॥

यस्यास्ति नैक्यं वपुषापि सार्द्धं, तस्यास्ति किं पुत्र-कलत्र मित्रैः।
पृथक्कृते चर्मणि रोमकूपाः, कुतो हि तिष्ठन्ति शरीरमध्ये॥२७॥

संयोगतो दुःखमनेक भेदं, यतोऽश्नुते जन्मवने शरीरी।
तस्-त्रिधासौ परिवर्जनीयो-यियासुना निर्वृति-मात्मनीनाम्॥२८॥

सर्वं निराकृत्य विकल्प-जालं, संसार-कान्तार-निपात-हेतुम्।
विविक्त-मात्मान-मवेक्ष्यमाणो-निलीयसे त्वं परमात्म तत्त्वे॥२९॥

स्वयं कृतं कर्म यदात्मना पुरा-, फलं तदीयं लभते शुभाशुभम्।
परेण दत्तं यदि लभ्यते स्फुटं, स्वयं कृतं कर्म निरर्थकं तदा॥३०॥

निजार्जितं कर्म विहाय देहिनो, न कोऽपि कस्यापि ददाति किञ्चन।
विचारयन्नेव-मनन्य-मानसः परो ददातीति विमुञ्च शेमुषीम्॥३१॥

यैः परमात्माऽमितगति-वन्द्यः, सर्व-विविक्तो भृश-मनवद्यः।
शश्व-दधीतो मनसि लभन्ते-मुक्ति-निकेतं विभव-वरं ते॥३२॥

इति द्वात्रिंशताऽवृत्तैः परमात्मान - मीक्षते।
योऽनन्यगत चेतस्को, यात्-यसौ पद-मव्ययम्॥३३॥

॥ इत्यमितगति सूरि विरचिता द्वात्रिंशतिका:॥

(चारित्र को नमन्)

अनंत सुखसंपन्न, येनात्माय क्षणादपि।
नमस्तस्मै पवित्राय, चारित्राय पुनः-पुनः॥

श्री ईर्यापथ भक्ति

अर्हद् भक्ति

(स्रग्धरा छंदः)

निःसंगोऽहं जिनानां सदन-मनुपमं त्रिःपरीत्येत्य भक्त्या,
स्थित्वा गत्वा निषद्योच्चरण-परिणतोऽन्तः शनैर्-हस्त-युग्मम्।
भाले संस्थाप्य बुद्ध्या मम, दुरित-हरं कीर्तये शक्र-वन्द्यम्,
निन्दा-दूरं सदाप्तं क्षय-रहित-ममुं ज्ञान-भानुं जिनेन्द्रम्॥१॥

(बसंततिलका छंदः)

श्रीमत् पवित्र-मकलंक-मनन्त-कल्पम्-
स्वायंभुवं सकल-मंगलमादि-तीर्थम्।
नित्योत्सवं मणिमयं निलयं जिनानाम्।
त्रैलोक्य-भूषणमहं शरणं प्रपद्ये॥२॥

(अनुष्टुप छंदः)

श्रीमत्-परम-गम्भीर, स्याद्वादाऽमोघ-लाञ्छनम्।
जीयात्-त्रैलोक्यनाथस्य, शासनं जिन-शासनम्॥३॥

श्री-मुखाऽलोकनादेव, श्री-मुखाऽलोकनं भवेत्।
आलोकन-विहीनस्य, तत् सुखाऽवाप्तयः कुतः॥४॥

(बसन्ततिलका छन्द)

अद्याभवत्-सफलता नयन-द्वयस्य,
देव ! त्वदीय-चरणाम्बुज-वीक्षणेन।
अद्य-त्रिलोक-तिलक ! प्रतिभासते मे,
संसार-वारिधि-रयं चुलुक प्रमाणः ॥५॥

(अनुष्टुप छन्द)

अद्य मे क्षालितं गात्रं नेत्रे च विमलीकृते।
स्नातोऽहं धर्म-तीर्थेषु जिनेन्द्र ! तव दर्शनात् ॥६॥

(उपेन्द्रवज्रा छंदः)

नमो नमः सत्त्व-हितंकराय, वीराय भव्याऽम्बुज-भास्कराय।
अनन्त-लोकाय सुराऽर्चिताय, देवाधि-देवाय नमो जिनाय ॥७॥

नमो जिनाय त्रिदशाऽर्चिताय, विनष्ट-दोषाय गुणाऽर्णवाय।
विमुक्ति-मार्ग-प्रतिबोधनाय, देवाधि-देवाय नमो जिनाय ॥८॥

(बसन्ततिलका छन्द)

देवाधिदेव! परमेश्वर! वीतराग! सर्वज्ञ! तीर्थंकर! सिद्ध! महानुभाव।
त्रैलोक्यनाथ! जिन-पुंगव! वर्धमान। स्वामिन्! गतोऽस्मि शरणं चरण-द्वयं ते।९।

(आर्या छंदः)

जित-मद-हर्ष-द्वेषा, जितमोह-परीषहाः जित-कषायाः।
जित-जन्म-मरण-रोगा, जित-मात्सर्या जयन्तु जिनाः ॥१०॥

जयतु जिन वर्धमानस्-त्रिभुवन-हित-धर्म-चक्र-नीरज-बन्धुः।
त्रिदशपति-मुकुट-भासुर चूड़ामणि-रश्मि-रञ्जितारुण-चरणः ॥११॥

(हरिणी छंदः)

जय जय जय त्रैलोक्य-काण्ड-शोभि-शिखामणे,
नुद नुद नुद स्वान्त-ध्वान्तं जगत्-कमलार्क नः।
नय नय नय स्वामिन् ! शान्तिं नितान्त-मनन्तिमाम्,
नहि नहि नहि त्राता, लोकैक-मित्र-भवत्-परः ॥१२॥

चित्ते मुखे शिरसि पाणि-पयोज-युग्मे,
भक्तिं स्तुतिं विनति-मञ्जलि-मञ्जसैव।
चेक्रीयते चरिकरीति चरीकरीति,
यश्चर्-करीति तव देव ! स एव धन्यः ॥१३॥

(मंदाक्रान्ता छंदः)

जन्मोन्मार्ज्यं भजतु भवतः पाद-पद्मं न लभ्यम्,
तच्चेत्-स्वैरं चरतु न च दुर्देवतां सेवतां सः।

अश्नात्-यन्नं यदिह सुलभं दुर्लभं चेन्मुधास्-ते,
क्षुद्-व्यावृत्यै कवलयति कः कालकूटं बुभुक्षुः ॥१४॥

(शार्दूल विक्रीडित छंद)

रूपं ते निरुपाधि-सुन्दर-मिदं, पश्यन् सहस्त्रेक्षणः,
प्रेक्षा-कौतुक-कारिकोऽत्र भगवन् नोपैत्-यवस्थान्तरम्।
वाणीं गद्‌गद्‌यन् वपुः पुलकयन् नेत्र-द्वयं श्रावयन्,
मूर्द्धानं, नमयन् करौ मुकुलयंश् चेतोऽपि निर्वापयन्॥१५॥

त्रस्ताऽरातिरिति-त्रिकालविदित-त्राता त्रिलोक्या इति,
श्रेयः सूति-रिति श्रियां निधिरिति, श्रेष्ठः सुराणा-मिति।
प्राप्तोऽहं शरणं शरण्य-मगतिस्-त्वां तत्-त्यजोपेक्षणम्,
रक्ष क्षेमपदं प्रसीद जिन ! किं, विज्ञापितैर्-गोपितैः॥१६॥

(उपजाति छंदः)

त्रिलोक-राजेन्द्र-किरीट-कोटि-प्रभाभि-रालीढ़-पदाऽरविन्दम्।
निर्मूल-मुन्मूलित-कर्म-वृक्षं, जिनेन्द्र-चन्द्रं प्रणमामि भक्त्या॥१७॥

कर चरण तनु विघाता, दटतो निहितः प्रमादतः प्राणी।
ईर्यापथ-मिति भीत्या मुञ्चे तद्दोष हान्यर्थम्॥१८॥

ईर्यापथे प्रचलताऽद्य मया प्रमादा,
देकेन्द्रिय प्रमुख जीव निकायबाधा।
निर्वर्तिता यदि भवेद युगाऽन्तरेक्षा,
मिथ्या तदस्तु दुरितं गुरुभक्तितो मे॥११॥

पडिक्कमामि भन्ते ! इरिया-वहियाए, विराहणाए, अणागुत्ते, अइग्गमणे, णिग्गमणे, ठाणे, गमणे, चंकमणे, पाणुग्गमणे, बीजुग्गमणे, हरिदुग्गमणे, उच्चार-पस्सवण-खेल-सिंहाण-वियडिय पइट्ठावणियाए, जे जीवा एइंदिया वा, बेइंदिया वा, तेइंदिया वा, चउरिंदिया वा, पंचिंदिया वा, णोल्लिदा वा, पेल्लिदा वा, संघट्टिदा वा, संघादिदा वा, उद्दाविदा वा, परिदाविदा वा, किरिंच्छिदा वा, लेस्सिदा वा, छिंदिदा वा, भिंदिदा वा, ठाणदो वा, ठाण-चंकमणदो वा, तस्स उत्तरगुणं, तस्स पायच्छित्त-करणं, तस्स विसोहि-करणं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, णमोक्कारं, पज्जुवासं करेमि, ताव कालं, पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

ॐ णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।

णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं॥ (जाप्यानि ९ बार)

ॐ नमो परमात्मने नमोऽनेकान्ताय शान्तये -

इच्छामि भन्ते ! आलोचेउं इरियावहियस्स पुव्वुत्तर-दक्खिण-पच्छिम चउदिसु विदिसासु विहरमाणेण, जुगंतर दिट्ठिणा, भव्वेण, दट्ठव्वा। पमाद दोसेण डवडव-चरियाए पाण-भूद-जीव-सत्ताणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

पापिष्ठेन दुरात्मना जड़धिया, मायाविना लोभिना,
रागद्वेष-मलीमसेन मनसा, दुष्कर्म यन्-निर्मितम्॥
त्रैलोक्याधिपते ! जिनेन्द्र ! भवतः श्रीपाद मूलेऽधुना,
निन्दापूर्व-महं जहामि सततं, निर्वर्तये कर्मणाम्॥१॥
जिनेन्द्र-मुन्मूलित कर्मबन्धं, प्रणम्य सन्मार्गकृत स्वरूपम्।
अनन्तबोधादि भवं-गुणौघं, क्रियाकलापं प्रकटं प्रवक्ष्ये॥२॥

लघुसिद्ध योगि भक्ति पेज नं. 178 पर पढ़े।
आचार्य वन्दना पेज नं. 262 पर पढ़े।

वर्धमान मंत्र : ॐ णमो भयवदो वड्ढमाणस्य रिसहस्स चक्कं जलंतं गच्छइ आयासं, पायालं, लोयाणं, भूयाणं, जये वा, विवादे वा, थंभणे वा, रणंगणे वा, रायंगणे वा, मोहेण वा, सव्वजीव सत्ताणं, अपराजिदो भवदु रक्ख रक्ख स्वाहा।

श्री सिद्ध भक्ति

(स्रग्धराछन्दः)

सिद्धा-नुद्धूत-कर्म-प्रकृति-समुदयान् साधितात्म-स्वभावान्,
वन्दे सिद्धि-प्रसिद्धयै तदनुपम-गुण-प्रग्रहाऽकृष्टि-तुष्टः।
सिद्धिः स्वाऽत्मोपलब्धिः प्रगुण-गुण-गणोच्छादि-दोषापहाराद्,
योग्योपादान-युक्त्या दृषद् इह यथा हेम-भावोपलब्धिः। १।

नाभावः सिद्धि-रिष्टा न निज-गुण-हतिस्तत् तपोभिर्न युक्तेः,
अस्त्यात्माऽनादि-बद्धः स्व-कृतज-फल-भुक्-तत्-क्षयान् मोक्षभागी।
ज्ञाता दृष्टा स्वदेह प्रमिति-रूप समाहार-विस्तार-धर्मा,
ध्रौव्योत्पत्ति-व्ययात्मा स्व-गुण-युत-इतो नान्यथा साध्य सिद्धिः। २।

स त्वन्तर्बाह्य-हेतुर्-प्रभव-विमल सद्दर्शन-ज्ञान चर्या-
संपद्धेति-प्रघात-क्षत दुरित-तया-व्यञ्जिताऽचिन्त्य-सारैः।
कैवल्यज्ञान-दृष्टि-प्रवर-सुख-महावीर्य सम्यक्त्वलब्धिः
ज्योतिर्-वातायनादि-स्थिर-परम-गुणै-रद्भुतैर्-भासमानः। ३।

जानन् पश्यन् समस्तं सम-मनुपरतं संप्रतृप्यन् वितन्वन्,
धुन्वन् ध्वान्तं नितान्तं निचित-मनुपमं प्रीणयन्नीश भावम्।
कुर्वन् सर्व-प्रजाना-मपर-मभिभवन् ज्योति-रात्मानमाऽत्मा-,
आत्मन्येवाऽत्मनासौ क्षण-मुपजनयन्-सत्-स्वयंभूः प्रवृत्तः। ४।

छिन्दन् शेषा-नशेषान्-निगल-बल-कलीं-स्तै-रनन्त-स्वभावैः,
सूक्ष्मत्वाऽग्र्यावगाहाऽगुरु-लघुक-गुणैः क्षायिकैः शोभमानः।
अन्यैश्चाऽन्य व्यपोह-प्रवण-विषय-संप्राप्ति-लब्धि-प्रभावै-
रूर्ध्व-व्रज्या स्वभावात् समय-मुपगतो धाम्नि संतिष्ठतेऽग्रये। ५।

अन्याऽकाराप्ति-हेतुर्, न च भवति परो येन तेनाल्प-हीनः,
प्रागात्मोपात्त-देह-प्रति-कृति-रूचि-राकार एव ह्यमूर्तः।
क्षुत्-तृष्णा-श्वास-कास-ज्वर-मरण-जरानिष्ट-योग-प्रमोह-
व्यापत्त्याद्युग्र दुःख-प्रभव-भव-हतेः कोऽस्य सौख्यस्य माता॥६॥

आत्मोपादान-सिद्धं स्वय-मतिशय-वद्-वीत-बाधं विशालम्,
वृद्धि ह्रास-व्यपेतं विषय-वि-रहितं निःप्रतिद्वन्द्व-भावम्।
अन्य-द्रव्याऽनपेक्षं, निरुपम-ममितं शाश्वतं सर्व-कालम्।
उत्कृष्टाऽनन्त-सारं, परम-सुखमतस्-तस्य सिद्धस्य जातम्। ७।

नार्थः क्षुत्-तृड्-विनाशाद् विविध-रस-युतै-रन्न-पानै-रशुच्या,
नास्पृष्टैर्-गन्ध-माल्यैर्-नहि मृदु-शयनैर्-ग्लानि-निद्राद्-यभावात्।
आतंकार्ते-रभावे तदुपशमन - सद्भेषजानर्थ तावद्,
दीपा-नर्थक्य-वद् वा व्यपगत-तिमिरे दृश्यमाने समस्ते। ८।

तादृक्-सम्पत्-समेता विविध-नय-तपः संयम-ज्ञान-दृष्टि-
चर्या-सिद्धाः समन्तात् प्रवितत्-यशसो विश्व देवाधिदेवाः।
भूता भव्या भवन्तः सकल जगति ये स्तूयमाना विशिष्टैस्,
तान् सर्वान् नौम्-यनन्तान् निजिग-मिषु-ररं तत्स्वरूपं त्रि सन्ध्यम्। १।

कृत्त्वा कायोत्सर्गं, चतुरष्ट दोष विरहितं सु परिशुद्धं।
अतिभक्ति संप्रयुक्तो, यो वंदते सो लघु लभते परं सुखम्॥

इच्छामि भन्ते ! सिद्धभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण सम्मचरित्त जुत्ताणं, अट्ठ-विह-कम्म-विप्प-मुक्काणं, अट्ठ-गुण-सम्पण्णाणं, उड्ढलोय-मत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तव-सिद्धाणं, णय सिद्धाणं, संजम सिद्धाणं, चरित्त सिद्धाणं, अतीताऽणागद-वट्टमाण-कालत्तय- सिद्धाणं, सव्व- सिद्धाणं, णिच्चकालं, अच्चेमि, पूजेमि, वन्दामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-सम्पत्ति होदु मज्झं।

आत्मदेव को नमन

या देवो सर्व जीवेषु श्रद्धारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥

श्री चैत्य भक्ति

श्री गौतमादि पदमद्भुत पुण्य बन्ध-
मुद्योतिताऽखिल-ममौघ-मघ प्रणाशम्।
वक्ष्ये जिनेश्वर-महं प्रणिपत्य तथ्यं,
निर्वाण कारण-मशेष जगद्-धितार्थम्॥

(हरिणी छन्दः)

जयति भगवान् हेमाम्भोज-प्रचार-वि जृम्भिता-
वमर-मुकुट-च्छायोद्गीर्ण-प्रभा-परिचुम्बितौ।
कलुष-हृदया मानोद्भ्रांताः परस्पर-वैरिणः,
विगत कलुषाः पादौ यस्य प्रपद्य विशश्वसुः॥१॥

तदनु जयति श्रेयान्-धर्मः प्रवृद्ध-महोदयः,
कुगति-विपथ-क्लेशाद्-योसौ विपाशयति प्रजाः।
परिणत नयस्यांगी-भावाद् विविक्त-विकल्पितम्,
भवतु भवतस्-त्रातृ त्रेधा जिनेन्द्र-वचोऽमृतम्॥२॥

तदनु जयताज्-जैनी वित्तिः प्रभंग तरंगिणी,
प्रभव विगम ध्रौव्य-द्रव्य स्वभाव-विभाविनी।

निरुपम-सुखस्येदं द्वारं विघट्य नि-रर्गलम्,
विगत-रजसं मोक्षं देयान् निरत्यय-मव्ययम्॥३॥
अर्हत्-सिद्धाऽचार्योपाध्यायेभ्यस्-तथा च साधुभ्यः।
सर्व-जगद्-वन्द्येभ्यो नमोऽस्तु सर्वत्र सर्वेभ्यः॥ ४॥
मोहादि-सर्व-दोषारि-घातकेभ्यः सदा हत-रजोभ्यः।
वि-रहित-रहस्-कृतेभ्यः पूजार्हेभ्यो नमोऽर्हद्भ्यः॥५॥

(आर्या छन्दः)

क्षान्त्याऽर्जवादि-गुण गण-सुसाधनं सकल-लोक-हित-हेतुम्।
शुभ-धामनि धातारं वंदे धर्मं जिनेन्द्रोक्तम्॥६॥
मिथ्याज्ञान-तमोवृत-लोकैक-ज्योति-रमित-गमयोगि।
सांगोपांग-मजेयं जैनं वचनं सदा वन्दे ॥७॥
भवन-विमान-ज्योतिर्-व्यन्तर-नरलोक विश्व-चैत्यानि।
त्रिजग-दभिवन्दितानां त्रेधा वन्दे जिनेन्द्राणाम्॥८॥
भुवनत्रयेऽपि भुवनत्रयाऽधिपाभ्यर्च्य - तीर्थ-कर्तृणाम्।
वन्दे भवाग्नि-शान्त्यै विभवाना - मालयाऽलीस्-ताः॥९॥
इति पञ्च-महापुरुषाः प्रणुता जिनधर्म-वचन-चैत्यानि।
चैत्यालयाश्च विमलां दिशन्तु बोधिं बुध-जनेष्टाम्॥१०॥

अकृतानि कृतानि-चाऽप्रमेय-द्युतिमन्ति द्युतिमत्सु मन्दिरेषु।
मनुजामर-पूजितानि-वन्दे, प्रतिबिम्बानि जगत्त्रये जिनानाम्॥११॥
द्युति-मण्डल-भासुरांग-यष्टीः, प्रतिमा अप्रतिमा जिनोत्तमानाम्।
भुवनेषु विभूतये प्रवृत्ता, वपुषा प्राञ्जलि-रस्मि वन्दमानः॥१२॥

विगतायुध-विक्रिया-विभूषाः प्रकृतिस्थाः कृतिनां जिनेश्वराणाम्।
प्रतिमाः प्रतिमा-गृहेषु, कान्त्याऽ-प्रतिमाः कल्मष-शान्तयेऽभिवन्दे॥१३॥

कथयन्ति कषाय-मुक्ति-लक्ष्मीं परया शान्ततया भवान्तकानाम्।
प्रणमाम्-यभिरूप-मूर्तिमन्ति, प्रतिरूपाणि विशुद्धये जिनानाम्॥१४॥

यदिदं मम सिद्धभक्ति-नीतं, सुकृतं दुष्कृत-वर्त्म-रोधि तेन।
पटुना जिनधर्म एव, भक्तिर्-भव ताज्-जन्मनि जन्मनि स्थिरा मे॥१५॥

अर्हतां सर्वभावानां दर्शन - ज्ञान - सम्पदाम्।
कीर्तयिष्यामि चैत्यानि यथाबुद्धि विशुद्धये॥१६॥
श्रीमद् - भवन - वासस्था स्वयं भासुर - मूर्तयः।
वन्दिता नो विधेयासुः प्रतिमाः परमां गतिम्॥१७॥

यावन्ति सन्ति लोकेऽस्मिन्-नकृतानि कृतानि च।
तानि सर्वाणि चैत्यानि वन्दे भूयांसि भूतये॥१८॥

ये व्यन्तर - विमानेषु स्थेयांसः प्रतिमागृहाः।
ते च संख्या-मतिक्रान्ताः सन्तु नो दोष-विच्छिदे ॥१९॥

ज्योतिषा - मथ लोकस्य भूतयेऽद्भुत - सम्पदः।
गृहाः स्वयम्भुवः सन्ति विमानेषु नमामि तान्॥२०॥

वन्दे सुर - किरीटाग्र-मणिच्-छायाऽभिषेचनम्।
याः क्रमेणैव सेवन्ते तदर्च्चाः सिद्धि-लब्धये॥ २१॥

इति स्तुति पथातीत-श्रीभृता-मर्हतां मम।
चैत्याना-मस्तु संकीर्तिः सर्वाऽस्रव-निरोधिनी॥२२॥

अर्हन्-महा-नदस्य त्रिभुवन-भव्यजन-तीर्थ-यात्रिक-दुरितम्-
प्रक्षालनैक-कारणमति-लौकिक-कुहक-तीर्थ-मुत्तम-तीर्थम्॥२३॥

लोकाऽलोक-सुतत्त्व-प्रत्यव-बोधन-समर्थ-दिव्यज्ञान-
प्रत्यह-वहत्प्रवाहं व्रत-शीलामल-विशाल-कूल-द्वि-तयम्॥२४॥
शुक्लध्यान-स्तिमित स्थित-राजद्-राजहंस-राजित-मसकृत्।
स्वाध्याय-मन्द्रघोषं नाना-गुण-समिति-गुप्ति-सिकता-सुभगम्॥२५॥

क्षान्त्याऽवर्त-सहस्रं सर्व-दया-विकच-कुसुम-विलसल्लतिकम्।
दुःसह परीषहाऽख्य-द्रुततर-रंग-त्तरंग-भङ्गुर-निकरम्॥२६॥

व्यपगत-कषाय-फेनं राग-द्वेषादि-दोष-शैवल-रहितम्।
अत्यस्त-मोह-कर्दम-मतिदूर-निरस्त-मरण-मकर-प्रकरम्॥२७॥

ऋषि-वृषभ-स्तुति-मन्द्रोद्रेकित-निर्घोष-विविध-विहग-ध्वानम्।
विविध-तपोनिधि-पुलिनं सास्रव-संवरण-निर्जरा-निःस्रवणम्॥२८॥

गणधर-चक्र-धरेन्द्र-प्रभृति-महा-भव्य-पुण्डरीकैः पुरुषैः।
बहुभिः स्नातं भक्त्या कलि-कलुष-मलाऽपकर्षणार्थ-ममेयम्॥२९॥

अवतीर्णवतः स्नातुं ममाऽपि दुस्तर-समस्त-दुरितं दूरम्।
व्यपहरतु परम-पावन-मनन्य, जय्य-स्वभाव-भाव-गम्भीरम्॥३०॥

(पृथ्वी छंद)

अताम्र-नयनोत्पलं सकल-कोप-वह्नेर्-जयात्।
कटाक्ष-शर-मोक्ष-हीन-मविकारतोद्रेकतः।
विषाद-मद-हानितः प्रहसितायमानं सदा,
मुखं कथयतीव ते हृदय-शुद्धि-मात्यन्तिकीम् ॥३१॥

निराभरण-भासुरं विगत-राग-वेगोदयात्,
निरम्बर-मनोहरं प्रकृति रूप निर्दोषतः।
निरायुध-सुनिर्भयं विगत-हिंस्य-हिंसा-क्रमात्,
निरामिष-सुतृप्ति-मद्-विविध-वेदनानां क्षयात्॥३२॥

मितस्थिति-नखांगजं गत-रजोमल-स्पर्शनं,
नवाम्बुरुह-चन्दन-प्रतिम-दिव्य-गन्धोदयम्।
रवीन्दु-कुलिशादि-दिव्य-बहु लक्षणाऽलङ्कृतं,
दिवाकर-सहस्र-भासुर-मपीक्षणानां प्रियम्॥३३॥

हितार्थ-परिपन्थिभिः प्रबल-राग-मोहाऽदिभिः
कलंकितमना जनो य-दभिवीक्ष्यशो शुद्ध्यते।
सदाऽभिमुख-मेव यज्जगति पश्यतां सर्वतः,
शरद् विमल-चन्द्र-मण्डल-मिवोत्थितं दृश्यते॥३४॥

तदेत-दमरेश्वर-प्रचल-मौलि-माला-मणि,
स्फुरत्-किरण-चुम्बनीय-चरणाऽरविन्द-द्वयम्।
पुनातु भगवज्-जिनेन्द्र तव रूप-मन्धीकृतम्,
जगत्-सकल-मन्यतीर्थ-गुरु-रूप-दोषोदयैः॥३५॥

क्षेपक श्लोकाः

मानस्तम्भाः सरांसि प्रविमलजल, सत्खातिका पुष्पवाटी।
प्राकारो नाट्यशाला द्वितयमुपवनं, वेदिकांतर्ध्वजाद्याः॥
शालः कल्पद्रुमाणां सुपरिवृत्तवनं, स्तूपहर्म्यावली च।
प्राकारःस्फाटिकोन्त-नृ-सुर-मुनिसभा,पीठिकाग्रे स्वयंभू।।१।।

वर्षेषु वर्षान्तर पर्वतेषु, नन्दीश्वरे यानि च मंदरेषु।
यावन्ति चैत्यायतनानि लोके,सर्वाणि वन्दे जिनपुंगवानाम्।२।

अवनितल-गतानां कृत्रिमाऽकृत्रिमाणाम्।
वन भवन गतानां दिव्य वैमानिकानाम्।
इह मनुज-कृतानां देव राजाऽर्चितानाम्,
जिनवर-निलयानां भावतोऽहं स्मरामि॥३॥

जम्बू-धातकि-पुष्करार्ध-वसुधा-क्षेत्र-त्रये ये भवाश्-,
चंद्राम्भोज शिखण्डि कण्ठ-कनक-प्रावृंघनाभाजिनाः॥
सम्यग्ज्ञान-चरित्र-लक्षणधरा दग्धाष्ट-कर्मेन्धनाः,
भूताऽनागत-वर्तमान-समये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः॥४॥

श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ, रजत गिरिवरे शाल्मलौ जम्बुवृक्षे,
वक्षारे चैत्यवृक्षे, रतिकर-रुचके कुण्डले मानुषांके॥
इष्वाकारेऽञ्जनाद्रौ, दधिमुख शिखरे व्यंतरे स्वर्गलोके।
ज्योतिर्लोकेऽभिवंदे, भुवनमहितले यानि चैत्यालयानि॥५॥

दौ कुन्देन्दुतुषारहार धवलौ द्वाविन्द्रनीलप्रभौ,
दौ बन्धूक समप्रभौ जिनवृषौ दौ च प्रियङ्गुप्रभौ।
शेषा षोडश जन्म-मृत्युरहिताः सन्तप्त हेमप्रभास्-,
ते सज्ज्ञान दिवाकराः सुरनुताः सिद्धि प्रयच्छन्तु नः॥६॥

देवा सुरेन्द्र नर-नाग समर्चितेभ्यः, पाप-प्रणाशकर भव्य मनोहरेभ्यः।
घंटा ध्वजादि परिवार विभूषितेभ्यो, नित्यं नमो जगति सर्व जिनालयेभ्यः॥६॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! चेइय-भत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं। अहलोय-तिरियलोय-उड्ढलोयम्मि, किट्टिमा-किट्टिमाणि जाणि जिणचेइयाणि ताणि सव्वाणि तीसु वि लोएसु भवणवासिय- वाणविंतर- जोइसिय- कप्पवासियत्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण ण्हाणेण, दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण अक्खेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण चुण्णेण, दिव्वेण दीवेण, दिव्वेण धूवेण, दिव्वेण वासेण, णिच्चकालं अच्चंति, पुज्जंति, वंदंति, णमस्संति अहमवि इह संतो तत्थ संताइं सया णिच्चकालं अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-सम्पत्ति होउ-मज्झं।

॥ इति चैत्य भक्तिः॥

अहोरात्रि के कृतिकर्म

चत्तारी पडिक्कमणे, किदियम्मो तिण्णि होंति सज्झाए
पुव्वण्हे अवरण्हे किदियम्मा, चोद्दसा होंति ॥ मू०6021॥

स्वाध्याये द्वादशेष्टा षड्-वन्दनेष्टौप्रतिक्रमे।
कायोत्सर्गा योगभक्तौ द्वौ चाहोरात्र-गोचराः॥

श्री श्रुत भक्ति

(आर्या छंदः)

स्तोष्ये संज्ञानानि परोक्ष - प्रत्यक्ष - भेद - भिन्नानि।
लोकालोक-विलोकन-लोलित-सल्लोक-लोचनानि सदा॥१॥

अभिमुख-नियमित-बोधन-माभिनिबोधिक-मनिन्द्रियेंद्रियजम्।
बह्वाद्यवग्रहादिक-कृत-षट्त्रिंशत्-त्रिशत-भेदम्॥२॥

विविधर्द्धि-बुद्धि-कोष्ठ-स्फुट-बीज-पदानुसारि-बुद्ध्यधिकम्।
संभिन्न - श्रोतृ - तया, सार्धं श्रुतभाजनं वन्दे॥३॥

श्रुतमपि-जिनवर-विहितं गणधर-रचितं द्व्यनेक-भेदस्थम्
अंगांऽगबाह्य - भावित - मनन्त-विषयं नमस्यामि॥४॥

पर्यायाऽक्षर - पद - संघात - प्रतिपत्तिकाऽनुयोग-विधीन्।
प्राभृतक - प्राभृतकं प्राभृतकं वस्तु - पूर्वं च॥५॥

तेषां समासतोऽपि च विंशति-भेदान् समश्नुवानं तत्।
वन्दे द्वादशधोक्तं गम्भीर - वर - शास्त्र-पद्धत्त्या॥६॥

आचारं सूत्रकृतं स्थानं समवाय - नामधेयं च।
व्याख्या - प्रज्ञप्तिं च ज्ञातृकथोपासकाऽध्ययने॥७॥

वन्देऽन्तकृद्दश - मनुत्तरोपपादिक दशं दशावस्थम्।
प्रश्नव्याकरणं हि विपाकसूत्रं च विनमामि॥८॥

परिकर्म च सूत्रं च स्तौमि प्रथमानुयोग-पूर्वगते।
सार्द्धं चूलिकयापि च, पंचविधं दृष्टिवादं च॥९॥

पूर्वगतं तु चतुर्दशधोदित -मुत्पादपूर्व-माद्यमहम्।
आग्रायणीय - मीडे पुरु - वीर्याऽनुप्रवादं च॥१०॥

संततमह-मभिवन्दे तथास्ति - नास्ति प्रवादपूर्वं च।
ज्ञानप्रवाद - सत्यप्रवाद - मात्मप्रवादं च॥११॥

कर्मप्रवाद - मीडेऽथ - प्रत्याख्यान - नामधेयं च।
दशमं विद्याधारं पृथुविद्यानुप्रवादं च॥१२॥

कल्याण - नामधेयं प्राणावायं क्रियाविशालं च।
अथ लोकबिंदुसारं वन्दे लोकाऽग्रसार पदम्॥१३॥

दश च चतुर्दश चाऽष्टावष्टादश च द्वयो-र्द्विषट्कं च।
षोडश च विंशतिं च त्रिंशतमपि पञ्चदश च तथा॥१४॥

वस्तूनि दश दशान्येष्-वनुपूर्वं भाषितानि पूर्वाणाम्।
प्रतिवस्तु प्राभृतकानि विंशतिं-विंशतिं नौमि॥१५॥

पूर्वान्तं ह्यपरान्तं ध्रुव - मध्रुव-च्यवन लब्धि-नामानि।
अध्रुव - सम्प्रणिधिं चाप्यर्थं भौमावयाद्यं च॥१६॥

सर्वार्थ - कल्पनीयं ज्ञानमतीतं त्वनागतं कालम्।
सिद्धि-मुपाध्यं च तथा चतुर्दश-वस्तूनि द्वितीयस्य॥१७॥

पञ्चमवस्तु - चतुर्थं - प्राभृतकस्याऽनुयोग - नामानि।
कृतिवेदने तथैव स्पर्शन - कर्मप्रकृतिमेव॥१८॥

बन्धन-निबन्धन-प्रक्रमाऽनुपक्रम-मथाभ्युदय-मोक्षौ।
सङ्क्रमलेश्ये च तथा लेश्यायाः कर्म-परिणामौ॥१९॥

सात - मसातं दीर्घं ह्रस्वं भवधारणीय - संज्ञं च।
पुरुपुद्गलाऽत्मनाम च निधत्त-मनिधत्त-मभिनौमि॥२०॥

सनिकाचित-मनिकाचित-मथ-कर्मस्थितिक-पश्चिमस्कंधौ।
अल्पबहुत्त्वं च यजे तद्द्वाराणां चतुर्विंशम्॥२१॥

कोटीनां द्वादश शत - मष्टापञ्चाशतं सहस्राणाम्।
लक्षत्र्यशीति-मेव च पञ्च च वन्दे श्रुतपदानि॥२२॥

षोडश शतं चतुस्त्रिंशत् कोटीनां त्र्यशीति-लक्षाणि !
शतसंख्याऽष्टा सप्तति-मष्टाशीतिं च पद-वर्णान्॥२३॥

सामायिकं चतुर्विंशति - स्तवं वन्दना प्रतिक्रमणम्।
वैनयिकं कृतिकर्म च पृथु-दशवैकालिकं च तथा॥२४॥

वर-मुत्तराऽध्ययन मपि कल्पव्यवहार - मेव - मभिवन्दे।
कल्पाऽकल्पं स्तौमि महाकल्पं पुण्डरीकं च॥२५॥

परिपाट्या प्रणिपतितोऽस्म्यहं महापुण्डरीकनामैव।
निपुणान्-यशीतिकं च प्रकीर्णकान्यंग-बाह्यानि॥२६॥

पुद्गल - मर्यादोक्तं प्रत्यक्षं सप्रभेद - मवधिं च।
देशाऽवधि - परमाऽवधि - सर्वाऽवधि - भेद - मभिवन्दे॥२७॥

परमनसि स्थितमर्थं मनसा परिविद्य मन्त्रि-महित-गुणम्।
ऋजु-विपुलमति-विकल्पं स्तौमि मनः पर्ययज्ञानम्॥२८॥

क्षायिक-मनन्त-मेकं त्रिकाल-सर्वार्थ-युगपदवभासम्।
सकल - सुख - धाम सततं वन्देऽहं केवलज्ञानम्॥२९॥

एव-मभिष्टुवतो मे ज्ञानानि समस्त-लोक-चक्षूंषि।
लघु भवताज्ज्ञानर्द्धिर्-ज्ञानफलं सौख्य-मच्यवनम्॥३०॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! सुदभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, अंगोवंग-पइण्णए पाहुडय-परियम्म सुत्त-पढऽमाणिओग-पुव्वगय-चूलिया चेव सुत्तत्थय-थुइ-धम्मकहाइयं णिच्चकालं अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होदु मज्झं।

॥ इति श्रुतभक्तिः॥

श्री चारित्र भक्ति

शार्दूलविक्रीडित छंदः

येनेन्द्रान् भुवन - त्रयस्य विलसत्-केयूर-हारांऽगदान्,
भास्वन्-मौलि- मणिप्रभा-प्रविसरोत्-तुंगोत्तमांगान्नतान्।
स्वेषां पाद - पयोरुहेषु मुनयश्-चक्रुः प्रकामं सदा,
वन्दे पञ्चतयं तमद्य निगदन्-नाचार-मभ्यर्चितम्॥१॥

अर्थ-व्यञ्जन-तद्द्वया-विकलता-कालोपधा-प्रश्रयाः,
स्वाऽचार्याद्यनपह्नवो बहु-मति-श्चेत्यष्टधा व्याहृतम्।
श्री-मज्ज्ञाति-कुलेन्दुना भगवता तीर्थस्य कर्त्राऽञ्जसा,
ज्ञानाचार-महं त्रिधा प्रणिपताभ्युद्धूतये कर्मणाम्॥२॥

शंका-दृष्टि-विमोह-काङ्क्षणविधि-व्यावृत्ति-सन्नद्धतां,
वात्सल्यं विचिकित्सना-दुपरतिं धर्मोपबृह्य-क्रियाम्।
शक्त्या शासन-दीपनं हित-पथाद् भ्रष्टस्य संस्थापनं,
वन्दे दर्शन-गोचरं सुचरितं मूर्ध्ना नमन्नाऽदरात्॥३॥

एकान्ते शयनोपवेशन - कृतिः संतापनं तानवम्,
संख्या-वृत्ति-निबन्धना - मनशनं विष्वाण-मर्द्धोदरम्।
त्यागं चेन्द्रिय-दन्तिनो मदयतः स्वादो रसस्याऽनिशम्,
षोढा बाह्य-महं स्तुवे शिव गति-प्राप्त्यभ्युपायं तपः॥४॥

स्वाध्यायः शुभकर्मणश्-च्युतवतः संप्रत्-यवस्थापनम्,
ध्यानं व्यापृतिरामयाऽविनि गुरौ, वृद्धे च बाले यतौ॥
कायोत्सर्जन सत्-क्रिया विनय-इत्येवं तपः षड्विधं,
वन्देऽभ्यन्तर-मन्तरंग बलवद्-विद्वेषि विध्वंसनम्॥५॥

सम्यग्ज्ञान विलोचनस्य दधतः, श्रद्धान - मर्हन्मते,
वीर्यस्याविनिगूहनेन तपसि, स्वस्य प्रयत्नाद्यतेः॥
या वृत्तिस्तरणीव नौ-रविवरा, लध्वी भवोदन्वतो,
वीर्याचार-महं तमूर्जित गुणं, वन्दे सतामर्चितम्॥६॥

तिस्रः सत्तम गुप्तयस्तनु-मनो, भाषा निमित्तोदयाः,
पञ्चेर्यादि-समाश्रयाः समितयः, पञ्च व्रतानीत्यपि।
चारित्रोपहितं त्रयोदश तयं, पूर्वं न दृष्टं परै-
राचारं परमेष्ठिनो जिनपतेर्-वीरं नमामो वयम्॥७॥

आचारं सह - पञ्चभेद - मुदितं, तीर्थं परं मंगलम्,
निर्ग्रन्थानपि सच्चरित्रमहतो, वन्दे समग्रान् यतीन्।
आत्माधीन सुखोदया मनुपमां, लक्ष्मी-मविध्वंसिनीम्-
इच्छन्केवल दर्शनावगमन, प्राज्य प्रकाशोज्ज्वलाम्॥८॥

अज्ञानाद्य दवीवृतं नियमिनोऽवर्तिष्यहं चाऽन्यथा,
तस्मिन् नर्जित-मस्यति प्रतिनवं चैनो निराकुर्वति।

वृत्ते सप्ततयीं निधिं सुतपसा-मृद्धिं नयत्-यद्भुतं,
तन्मिथ्या गुरुदुष्कृतं भवतु मे स्वं निंदितो निंदितम्॥९॥

संसार-व्यसनाहति प्रचलिता, नित्योदय प्रार्थिनः,
प्रत्यासन्न विमुक्तयः सुमतयः, शान्तैनसः प्राणिनः।
मोक्षस्यैव कृतं विशाल-मतुलं, सोपान मुच्चैस्तरा-
मारोहन्तु चरित्र-मुत्तम-मिदं, जैनेन्द्र-मोजस्विनः॥१०॥

अञ्चलिका

इच्छामि भन्ते ! चारित्त भत्ति काउस्सग्गो कओ, तस्स आलोचेउं सम्मणाणजोयस्स सम्मत्ताहिट्ठियस्स, सव्वपहाणस्स, णिव्वाणमग्गस्स, कम्मणिज्जर-फलस्स, खमाहारस्स, पञ्चमहव्वय सम्पण्णस्स, तिगुत्तिगुत्तस्स, पञ्चसमिदिजुत्तस्स, णाणज्झाण साहणस्स, समया इव पवेसयस्स, सम्मचारित्तस्स णिच्चकालं, अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं, समाहिमरणं जिणगुण संपत्ति होउ मज्झं।

॥ इति श्री चारित्र भक्तिः ॥

बृहदालोचना पेज नं. 167 पर पढ़ें।

श्री योगि भक्ति

जाति जरोरुरोग मरणातुर, शोक सहस्त्रदीपिताः,
दुःसह नरक पतन सन्त्रस्त धियः प्रतिबुद्धचेतसः।
जीवितमंबु बिंदुचपलं, तडिदभ्रसमा विभूतयः,
सकलमिदं विचिन्त्यमुनयः, प्रशमाय-वनान्त-माश्रिताः ॥१॥
व्रत समिति गुप्ति संयुताः, शमसुखमाधाय मनसि वीतमोहाः।
ध्यानाऽध्ययनवशंगताः, विशुद्धये कर्मणां तपश्चरन्ति ॥२॥
दिनकर किरणनिकर-संतप्त, शिलानिचयेषु निष्पृहाः,
मलपटलाऽवलिप्त तनवः, शिथिली कृतकर्म बंधनाः।
व्यपगत-मदनदर्प रतिदोष, कषाय विरक्त मत्सराः,
गिरि-शिखरेषु चंडकिरणाभि, मुखस्थितयो दिगम्बराः ॥३॥
सज्ज्ञानाऽमृतपायिभिः क्षान्तिपयः सिञ्च्यमानपुण्यकायैः।
धृतसंतोषच्छत्रकैः, तापस्तीव्रोऽपि सह्यते मुनीन्द्रैः ॥४॥
शिखिगल कज्जलालिमलिनैर्-विबुधाधिपचाप चित्रितैः,
भीम-रवैर्-विसृष्टचण्डाशनि, शीतल वायु वृष्टिभिः।
गगनतलं विलोक्य जलदैः, स्थगितं सहसा तपोधनाः,
पुनरपि तरुतलेषु विषमासु, निशासु विशंकमासते ॥५॥

जलधारा-शरताडिता, न चलन्ति चरित्रतः सदा नृसिंहाः।
संसार दुःख भीरवः, परीषहा राति-घातिनः प्रवीराः॥६॥
अविरतबहल तुहिनकण, वारिभि-रंघ्रिप-पत्र पातनै-,
रनवरत-मुक्तसात्कार्-रवैः, पुरुषैरथानिलैः शोषितगात्रयष्टयः।
इह श्रमणा धृतिकंबलाऽवृताः शिशिर-निशां,
तुषार विषमां गमयन्ति, चतुःपथे स्थिताः॥७॥
इति योगत्रय धारिणः, सकल-तपशालिनः प्रवृद्धपुण्यकायाः।
परमानंद सुखैषिणः, समाधि-मग्रयं दिशंतु नो भदंताः॥८॥
योगीश्वरान् जिनान्-सर्वान् योगिनिर्धूत कल्मषान्।
योगैस्-त्रिभि-रहं वंदे, योगस्कंध प्रतिष्ठितान्॥९॥

क्षेपक श्लोकानि

प्रावट्-काले सविद्युत्-प्र-पतित, सलिले वृक्ष-मूलाधिवासाः,
हेमन्ते रात्रि-मध्ये प्रति-विगत-भयाः काष्ठ-वत्-व्यक्त देहाः।
ग्रीष्मे सूर्यांशु-तप्ता-गिरि-शिखर-गताः स्थान-कूटांतर-स्थास्-
ते मे धर्मं प्रदद्युर्-मुनि, गण-वृषभा मोक्ष-निःश्रेणि-भूताः॥१॥
गिम्हे गिरि-सिहरत्था, वरिसा-याले रुक्ख-मूल-रयणीसु।
सिसिरे वाहिर-सयणा, ते साहू वंदिमो णिच्चं॥२॥
गिरि-कन्दर-दुर्गेषु, ये वसन्ति दिगम्बराः।
पाणि-पात्र-पुटाहारास्-ते यांति परमां गतिम्॥३॥

अञ्चलिका

इच्छामिभन्ते ! योगि-भक्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्साऽलोचेउं अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णारस-कम्म-भूमिसु, आदावण- रुक्ख-मूलअब्भोवास- ठाणमोण-वीरासणेक्क पास कुक्कुडासण चउ-छ-पक्खखवणादि जोगजुत्ताणं, सव्वसाहूणं णिच्चकालं, अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

श्री पञ्चमहागुरु भक्ति

श्रीमद-मरेन्द्र-मुकुट-प्रघटित- मणि-किरण-वारि-धाराभिः।
प्रक्षालित-पद-युगलान्, प्रणमामि जिनेश्वरान् भक्त्या॥१॥
अष्टगुणैः समुपेतान्, प्रणष्ट-दुष्टाष्ट-कर्मरिपु-समितीन्।
सिद्धान् सतत-मनन्तान्-नमस्करो मीष्ट तुष्टि संसिद्ध्यै॥२॥
साचार-श्रुत-जलधीन्-प्रतीर्य शुद्धोरुचरण-निरतानाम्।
आचार्याणां पदयुग-कमलानि दधे शिरसि मेऽहम्॥३॥
मिथ्या-वादि-मद्रोग्र-ध्वान्त-प्रध्वन्सि-वचन-संदर्भान्।
उपदेशकान् प्रपद्ये मम दुरितारि-प्रणाशाय॥४॥
सम्यग्दर्शन - दीप - प्रकाशका- मेय- बोध-सम्भूताः।
भूरि-चरित्र-पताकास्-ते साधु-गणास्तु मां पान्तु॥५॥

जिन-सिद्धसूरि-देशक-साधु-वरानमल गुण गणोपेतान्।
पञ्चनमस्कार पदैस्-त्रि-सन्ध्य-मभिनौमि मोक्ष-लाभाय॥६॥
एषः पञ्च नमस्कारः, सर्व पाप प्रणाशनः।
मंगलानां च सर्वेषां, प्रथमं मंगलं भवेत्॥७॥
अर्हत्-सिद्धाऽचार्योपाध्यायाः - सर्व-साधवः।
कुर्वन्तु मंगलाः सर्वे, निर्वाण परमश्रियम्॥८॥
सर्वान् जिनेन्द्र चन्द्रान, सिद्धानाऽचार्य पाठकान् साधून्।
रत्नत्रयं च वन्दे, रत्नत्रय सिद्धये भक्त्या॥९॥
पांतु श्रीपाद पद्मानि, पञ्चानां परमेष्ठिनां।
लालितानि सुराधीश, चूड़ामणि मरीचिभिः॥१०॥
प्रातिहार्यैर्-जिनान् सिद्धान्, गुणैः सूरीन् स्व-मातृभिः।
पाठकान् विनयैः साधून्, योगांगै-रष्टभिः स्तुवे॥११॥

अञ्चलिका

इच्छामि भन्ते ! पंचमहागुरु-भत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्साऽलोचेउं, अट्ठ-महा-पाडिहेर-संजुत्ताणं, अरहंताणं, अट्ठ गुण-सम्पण्णाणं, उड्ढलोय मत्थयम्मि पइट्ठियाणं, सिद्धाणं, अट्ठ-पवय-णमउ संजुत्ताणं आइरियाणं, आयारादि सुदणाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं, ति-रयण-गुण पालण-रदाणं सव्वसाहूणं, सया णिच्चकालं अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-सम्पत्ति होउ मज्झं।

॥ इति पञ्च गुरु भक्तिः ॥

श्री शांति भक्ति

(शार्दूलविक्रीडित छन्दः)

न स्नेहाच्छरणं प्रयान्ति भगवन् ! पाद-द्वयं ते प्रजाः,
हेतुस्तत्र विचित्र दुःख निचयः संसार घोराऽर्णवः।
अत्यन्त स्फुरदुग्र रश्मि निकर-व्याकीर्ण भूमण्डलो,
ग्रैष्मः कारयतीन्दु पाद सलिलच्-छायाऽनुरागं रविः ॥१॥

क्रुद्धाऽशीर्विष-दष्ट दुर्जय विष-ज्वालावली विक्रमो,
विद्या-भेषज मन्त्र तोय हवनैर्-याति प्रशान्तिं यथा।
तद्-वत्ते चरणारुणाऽम्बुज युग-स्तोत्रोन्मुखानां नृणाम्,
विघ्नाः काय विनायकाश्च सहसा शाम्यन्त्यहो विस्मयः ॥२॥

सन्तप्तोत्तम काञ्चन क्षितिधर-श्री स्पर्द्धि गौरद्युते,
पुंसां त्वच्चरण-प्रणाम करणात् पीडाः प्रयान्तिक्षयं।
उद्यद्भास्कर विस्फुरत् कर शत व्याघात निष्कासिता,
नाना देहि विलोचन-द्युतिहरा शीघ्रं यथा शर्वरी ॥३॥

त्रैलोक्येश्वर भंग लब्ध विजया-दत्यन्त रौद्राऽत्मकान्,
नाना जन्म शताऽन्तरेषु पुरतो जीवस्य संसारिणः।
को वा प्रस्खलतीह केन विधिना कालोग्र दावानलान्,
न स्याच्चेत्तव पाद पद्म युगल स्तुत्यापगा वारणम् ॥४॥

लोकाऽलोक निरन्तर प्रविततृ-ज्ञानैक मूर्त्ते विभो !,
नाना रत्न पिनद्ध दण्ड रुचिर श्वेतात पत्र-त्रयः।
त्वत्पाद द्वय पूत गीत-रवतः शीघ्रं द्रवन्त्या-मया,
दर्पाऽध्मात मृगेन्द्र भीम निनदाद् वन्या यथा कुञ्जराः ॥५ ॥

दिव्य स्त्री नयनाभिराम विपुल श्री मेरु चूडामणे,
भास्वद् बाल दिवाकर-द्युति हर प्राणीष्ट भामण्डल।
अव्याबाध - मचिन्त्यसार - मतुलं त्यक्तोपमं शाश्वतं,
सौख्यं त्वच्चरणाऽरविन्द युगल स्तुत्यैव सम्प्राप्यते ॥६ ॥

यावन्नोदयते प्रभा परिकरः श्रीभास्करो भासयंस्,
तावद् धारयतीह पंकजवनं निद्राऽतिभार श्रमम्।
यावत्-त्वच्चरण द्वयस्य भगवन्! न स्यात् प्रसादोदयस्-
तावज्जीव निकाय एष वहति प्रायेण पापं महत् ॥७ ॥

शान्तिं शान्ति जिनेन्द्र शान्त मनसस् - त्वत्पाद पद्माऽश्रयात्,
संप्राप्ताः पृथिवी तलेषु बहवः शान्त्यर्थिनः प्राणिनः।
कारुण्यान् मम भक्तिकस्य च विभो ! दृष्टिं प्रसन्नां कुरु,
त्वत्पाद द्वय दैवतस्य गदतः शान्त्यष्टकं भक्तितः ॥८ ॥

शान्ति जिनं शशि निर्मल वक्त्रं, शीलगुण व्रत संयम पात्रम्।
अष्टशताऽर्चित लक्षण गात्रं, नौमि जिनोत्तम-मम्बुज नेत्रम्॥९॥

पञ्चम-मीप्सित-चक्रधराणां, पूजित-मिन्द्र-नरेन्द्र-गणैश्च।
शान्तिकरं गण-शान्ति-मभीप्सुः, षोडश-तीर्थंकरं-प्रणमामि॥१०॥

दिव्यतरुः सुर-पुष्प-सुवृष्टिर्-दुन्दुभि - रासन-योजन घोषौ।
आतप-वारण-चामर-युग्मे, यस्य विभाति च मण्डल तेजः॥११॥

तं जगदर्चित-शान्ति-जिनेन्द्रं, शान्तिकरं शिरसा प्रणमामि।
सर्व गणाय तु यच्छतु शान्तिं, मह्यमरं पठते परमां च॥१२॥

येऽभ्यर्चिता मुकुट-कुण्डल-हार-रत्नैः,
शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुत-पादपद्माः।
ते मे जिनाः प्रवर-वंश-जगत्प्रदीपाः,
तीर्थंकराः सतत शान्तिकरा भवन्तु॥१३॥

(उपजाति छन्दः)

सम्पूजकानां प्रतिपालकानां,
यतीन्द्र-सामान्य-तपोधनानाम्।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः,
करोतु शांतिं भगवज्-जिनेन्द्रः॥१४॥

क्षेमं सर्वप्रजानां, प्रभवतु बलवान धार्मिको भूमिपालः।
काले-काले च सम्यग्, वितरतु मघवा व्याधयो यान्तु नाशम्।
दुर्भिक्षं चौरमारिः, क्षणमपि जगतां-मा स्मभूज्जीव-लोके।
जैनेन्द्रं धर्मचक्रम्, प्रभवतु सततं, सर्व-सौख्य-प्रदायि॥१५॥

तद् द्रव्य मव्यय-मुदेतु शुभ स देशः,
संतन्यतां प्रतपतां सततं सकालः।
भावः स नन्दतु सदा य-दनुग्रहेण,
रत्नत्रयं प्रतपतीह मुमुक्षुवर्गे॥१६॥

प्रध्वस्त घाति कर्माणः, केवल ज्ञान भास्कराः।
कुर्वन्तु जगतां शान्तिं, वृषभाद्या जिनेश्वराः॥१७॥

क्षेपक श्लोकानिः

शांति शिरोधृत जिनेश्वर शासनानां,
शान्तिः निरन्तर तपोभव भावितानां।
शान्तिः कषाय जय जृम्भित वैभवानां,
शान्तिः स्वभाव महिमान्-मुपागतानाम्॥१॥

जीवन्तु संयम सुधारस पान तृप्ता,
नंदंतु शुद्ध सहसोदय सुप्रसन्नाः।
सिद्धयंतु सिद्धि सुख संगकृताऽभियोगाः,
तीव्रं तपन्तु जगतां त्रितयेऽर्हदाज्ञा॥२॥

शान्तिः शम्-तनुताम् समस्त जगतः, संगच्छतां धार्मिकैः,
श्रेयः श्री परिवर्धतां नयधरा, धुर्यो धरित्री पतिः।
सद्विद्या-रसमुद्गिरन्तु कवयो, नामाप्य धस्यास्तु मां,
प्रार्थ्यं वा कियदेक एव शिवकृद्, धर्मो जयत्वर्हताम्॥३॥

इच्छामि भन्ते! संतिभत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं, पञ्च-महा-कल्लाण-संपण्णाणं, अट्ठ-महापा-डिहेर-सहियाणं, चउतीसातिसय-विसेस-संजुत्ताणं, बत्तीस-देवेंद-मणिमय-मउड-मत्थय-महियाणं बलदेव वासुदेव-चक्कहर-रिसि-मुणि-जदि-अणगारोव गूढ़ाणं, थुइ-सय-सहस्स-णिलयाणं, उसहाइ-वीर- पच्छिम-मंगल -महापुरिसाणं णिच्चकालं, अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइगमणं, समाहि-मरणं जिण-गुण सम्पत्ति होदु मज्झं।

श्री समाधि भक्ति

स्वात्माऽभिमुख - संवित्ति, लक्षणं श्रुत - चक्षुषा।
पश्यन्-पश्यामि देव! त्वां, केवलज्ञान-चक्षुषा॥१॥

शास्त्राऽभ्यासो जिनपति-नुतिः, संगति सर्वदाऽर्यैः।
सद्वृत्तानां गुणगण-कथा, दोषवादे च मौनम्॥
सर्वस्यापि प्रियहित वचो, भावना चाऽत्मतत्त्वे।
संपद्यन्तां मम भव - भवे यावदेतेऽपवर्गः॥२॥

जैनमार्गरुचि-रन्य मार्ग निर्वेगता जिनगुण स्तुतौ मतिः।
निष्कलंक विमलोक्ति भावनाः, संभवन्तु मम जन्म-जन्मनि॥३॥

गुरुमूले यति-निचिते-चैत्यसिद्धान्त वार्धि सद्घोषे।
मम भवतु जन्म जन्मनि, सन्यसन समन्वितं मरणम्॥४॥
जन्म-जन्म कृतं पापं, जन्मकोटि समाऽर्जितम्।
जन्म-मृत्यु-जरा-मूलं, हन्यते जिन वंदनात्॥५॥

आबाल्याज्-जिनदेवदेव ! भवतः, श्री पादयोः सेवया,
सेवासक्त विनेय कल्पलतया, कालोऽद्ययावद्गतः।
त्वां तस्याः फलमर्थयेत-दधुना, प्राण प्रयाणक्षणे,
त्वन्नाम प्रतिबद्ध वर्ण पठने, कण्ठोऽस्त्वकुण्ठो मम॥६॥

तवपादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पदद्वये लीनम्।
तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद्यावन् निर्वाण संप्राप्ति॥७॥

एकापि समर्थेयं, जिन भक्ति-दुर्गतिं निवारयितुम्।
पुण्यानि च पूरयितुं, दातुं मुक्तिश्रियं कृतिनः॥८॥

पञ्च अरिंजयणामे पञ्च, य मदि-सायरे जिणेवन्दे।
पञ्च जसोयरणामे, पञ्च य सीमंदरे वन्दे॥९॥

रयणत्तयं च वंदे, चउवीस जिणे च सव्वदा वंदे।
पञ्चगुरूणां वंदे, चारणचरणं सदा वंदे॥१०॥

अर्ह-मित्यक्षरं ब्रह्म, वाचकं परमेष्ठिनः।
सिद्धचक्रस्य सद्-बीजं, सर्वतः प्रणि-दध्महे॥११॥

कर्माऽष्टक विनिर्मुक्तं, मोक्षलक्ष्मी निकेतनम्।
सम्यक्त्वादि गुणोपेतं, सिद्धचक्रं नमाम्यहम्॥१२॥

(शार्दूलविक्रीडित छंदः)

आकृष्टिं सुरसंपदां वि-दधते, मुक्तिश्रियो वश्यता-
मुच्चाटं विपदां चतुर्गति भुवां, विद्वेष मात्मैनसाम्।
स्तम्भं दुर्-गमनं प्रति-प्रयततो, मोहस्य सम्मोहनं,
पायात्पञ्च नमस् क्रियाक्षरमयी, साऽराधना देवता॥१३॥

अनन्तानन्त संसार, संतितिच्छेद कारणम्।
जिनराज पदाम्भोज, स्मरणं शरणं मम॥१४॥

अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरणं मम।
तस्मात् कारुण्य भावेन, रक्ष-रक्ष जिनेश्वर ! ॥१५॥

नहित्राता - नहित्राता - नहित्राता - जगत्त्रये।
वीतरागात्परो देवो!, न भूतो न भविष्यति॥१६॥

जिनेभक्तिर् - जिनेभक्तिर् - जिनेभक्तिर् - दिने-दिने।
सदामेऽस्तु सदामेऽस्तु, सदामेऽस्तु भवे-भवे॥१७॥

याचेऽहं-याचेऽहं, जिन! तव चरणाऽरविंदयोर्-भक्तिम्।
याचेऽहं - याचेऽहं, पुनरपि तामेव-तामेव॥१८॥

विघ्नौऽघाः प्रलयं यान्ति, शाकिनी-भूत पन्नगाः।
विषो निर्विषतां याति, स्तूयमाने जिनेश्वरे!॥१९॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! समाहिभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, रयणत्तय-सरूव-परमप्प-ज्झाण लक्खणं समाहि-भत्तीये णिच्चकालं अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण संपत्ति होउ मज्झं।

॥ इति समाधिभक्तिः ॥

श्री नन्दीश्वर भक्ति

(आर्यागीतिका छन्दः)

त्रिदशपति मुकुट तट गतमणि, गणकर निकर सलिल धाराधौत।
क्रमकमल युगल जिनपति रुचिर, प्रतिबिम्ब विलय विरहित निलयान्॥१॥

निलयानहमिह महसां सहसा, प्रणिपतन पूर्व-मवनौम्यवनौ।
त्रय्यां त्रय्या शुद्ध्या निसर्ग, शुद्धान्विशुद्धये घनरजसाम्॥२॥

भावनसुर-भवनेषु, द्वासप्तति शत-सहस्त्र-संख्याभ्यधिकाः।
कोट्यः सप्त प्रोक्ता, भवनानां भूरि-तेजसां भुवनानाम्॥३॥

त्रिभुवन-भूत-विभूनां, संख्यातीतान्-यसंख्य-गुण-युक्तानि।
त्रिभुवन-जन-नयन-मनः, प्रियाणि भवनानि भौम-विबुध-नुतानि॥४॥

यावन्ति सन्ति कान्त-ज्योतिर्-लोकाधिदेवताऽभिनुतानि।
कल्पेऽनेक-विकल्पे, कल्पातीतेऽहमिन्द्र-कल्पानल्पे॥५॥

विंशति-रथ त्रि-सहिता, सहस्त्र-गुणिता च सप्तनवतिः प्रोक्ता।
चतु रधिकाशीति रतः, पञ्चक-शून्येन वि निहतान्-यनघानि॥६॥

अष्टा पञ्चाशदतश्-चतुःशतानीह मानुषे च क्षेत्रे।
लोकालोक-विभाग-प्रलोकानऽऽलोक-संयुजां जय-भाजाम्॥७॥

नव-नव-चतुःशतानि च, सप्त च नवतिः सहस्त्र-गुणिताः षट् च।
पञ्चाशत्पञ्च-वियत्, प्रहताः पुनरत्र कोट्योऽष्टौ प्रोक्ताः॥८॥

एतावन्त्येव सता-मकृत्रि-माण्यथ जिनेशिनां भवनानि।
भुवन-त्रितये-त्रिभुवन-सुर-समिति-समर्च्यमान-सप्रतिमानि॥९॥

वक्षार-रुचक-कुण्डल-रौप्य-नगोत्तर-कुलेषु कारनगेषु।
कुरुषु च जिनभवनानि,त्रिशतान्-यधिकानि तानि षड्विंशत्या॥१०॥

नन्दीश्वर-सद्द्वीपे, नन्दीश्वर-जलधि-परिवृते धृत-शोभे।
चन्द्र-कर-निकर-सन्निभ-रुन्द्र-यशो-वितत-दिङ्-मही-मण्डलके॥११॥

तत्रत्याऽञ्जन-दधिमुख-रतिकर-पुरु-नग-वराख्य-पर्वत-मुख्याः।
प्रतिदिश-मेषा-मुपरि, त्रयो-दशेन्द्राऽर्चितानि जिनभवनानि॥१२॥

आषाढ़-कार्तिकाख्ये, फाल्गुनमासे च शुक्ल पक्षेऽष्टम्याः।
आरभ्याष्ट-दिनेषु च, सौधर्म-प्रमुख-विबुधपतयो भक्त्या॥१३॥

तेषु महामह-मुचितं, प्रचुराऽक्षत-गन्ध-पुष्प-धूपै-र्दिव्यैः।
सर्वज्ञ-प्रतिमाना- मप्रतिमानां प्रकुर्वते सर्व-हितम्॥१४॥

भेदेन वर्णना का, सौधर्मः स्नपन-कर्तृता-मापन्नः।
परिचारक-भावमिताः, शेषेन्द्रा-रुन्द्र-चन्द्र-निर्मल-यशसः॥१५॥

मंगल-पात्राणि पुनस्तद्-, देव्यो बिभ्रति स्म शुभ्र-गुणाढ्याः।
अप्सरसो नर्तक्यः शेष-सुरास्तत्र लोकनाऽव्यग्रधियः॥१६॥

वाचस्पति-वाचामपि, गोचरतां संव्यतीत्य यत्-क्रममाणम्।
विबुधपति-विहित-विभवं, मानुष-मात्रस्य कस्य शक्तिः स्तोतुम्॥१७॥

निष्ठापित-जिनपूजाश्- चूर्ण-स्नपनेन दृष्ट विकृत विशेषाः।
सुरपतयो नन्दीश्वर- जिनभवनानि प्रदक्षिणी कृत्य पुनः॥१८॥

पञ्चसु मंदरगिरिषु, श्रीभद्रशाल नन्दन-सौमनसम्।
पाण्डुकवनमिति तेषु, प्रत्येकं जिनगृहाणि चत्त्वार्-येव॥१९॥

तान्यथ परीत्य तानि च, नमसित्वा कृत सुपूजनास्तत्राऽपि।
स्वास्पदमीयुः सर्वे, स्वास्पद मूल्यं स्वचेष्टया संगृह्य॥२०॥

सहतोरण सद्-वेदी- परीतवनयाग-वृक्ष-मानस्तम्भः।
ध्वजपंक्ति दशक गोपुर, चतुष्टय त्रितय-शाल-मण्डप-वर्यैः॥२१॥

अभिषेक प्रेक्षणिका, क्रीडन संगीत नाटकाऽलोक-गृहैः।
शिल्पि विकल्पित-कल्पन- संकल्पाऽतीत-कल्पनैः समुपेतैः॥२२॥

वापी सत्पुष्करिणी, सुदीर्घिकाद्यम्बु संसृतैः समुपेतैः।
विकसित जलरुह कुसुमैर्- नभस्यमानैः शशिग्रहर्क्षैः शरदि॥२३॥

भृंगाराब्दक-कलशा- द्युपकरणै-रष्टशतक-परिसंख्यानैः।
प्रत्येकं चित्रगुणैः, कृतझण झणनिनद-वितत-घंटाजालैः॥२४॥

प्रविभाजंते नित्यं, हिरण्य-मयानीश्चरेशिनां भवनानि।
गंधकुटी गत मृगपति, विष्टर-रुचिराणि-विविध-विभव-युतानि॥२५॥

येषु-जिनानां प्रतिमाः, पञ्चशत-शरासनोच्छ्रिताः सत्प्रतिमाः।
मणिकनक-रजत विकृता, दिनकर कोटि-प्रभाधिक-प्रभदेहाः ॥२६॥

तानि सदा वंदेऽहं, भानु प्रतिमानि यानि कानि च तानि।
यशसां महसां प्रतिदिश-मतिशय-शोभा-विभाञ्जि पाप विभाञ्जि॥२७॥

सप्तत्-यधिक-शतप्रिय, धर्मक्षेत्रगत-तीर्थंकर-वर-वृषभान्।
भूत-भविष्यत् संप्रति- काल-भवान् भवविहानये विनतोऽस्मि॥२८॥

अस्या-मवसर्पिण्यां, वृषभजिनः प्रथम तीर्थकर्ता भर्ता।
अष्टापद गिरि मस्तक, गतस्थितो मुक्तिमाप पापान्-मुक्तः॥२९॥

श्री वासुपूज्य भगवान, शिवासु पूजासु पूजितस्-त्रिदशानाम्।
चम्पायां दुरित-हरः, परमपदं प्रापदापदा-मन्तगतः॥३०॥

मुदित-मति बल मुरारि-प्रपूजितो जित कषाय रिपु-रथ जातः।
बृहदूर्जयन्त-शिखरे, शिखामणिस्-त्रिभुवनस्य-नेमिर्भगवान॥३१॥

पावापुर वर सरसां, मध्यगतः सिद्धि वृद्धि तपसां महसाम्।
वीरो नीरदनादो, भूरि-गुणश्चारु शोभमास्पद-मगमत्॥३२॥

सम्मद करिवन-परिवृत- सम्मेद गिरीन्द्र मस्तके विस्तीर्णे।
शेषा ये तीर्थंकराः, कीर्तिभृतः प्रार्थितार्थ सिद्धि-मवापन्॥३३॥

शेषाणां केवलिना- मशेष मतवेदिगणभृतां साधूनां।
गिरितल विवर दरीसरि- दुरुवनतरु-विटपि जलधि-दहन शिखासु॥३४॥

मोक्ष गतिहेतु-भूत- स्थानानि सुरेन्द्र रुन्द्र-भक्तिनुतानि।
मंगल भूतान्येता- न्यंगीकृत-धर्म कर्मणा-मस्माकम्॥३५॥

जिनपतयस्तत्-प्रतिमास्, तदालयास् तन्निषद्यका-स्थानानि।
ते ताश्च ते च तानि च, भवन्तु भव-घात-हेतवो भव्यानाम्॥३६॥

तीनों समय नन्दीश्वर भक्ति करने का फल

सन्ध्यासु तिसृषु नित्यं, पठेद्यदि स्तोत्र-मेतदुत्तम-यशसाम्।
सर्वज्ञानां सार्वं, लघु लभते श्रुतधरेडितं पद-ममितम्॥३७॥

अरिहंतों के शरीर सम्बन्धी दश अतिशय

नित्यं निःस्वेदत्वं, निर्मलता क्षीर-गौर-रुधिरत्वं च।
स्वाद्याकृति-संहनने, सौरूप्यं सौरभं च सौलक्ष्यम्॥३८॥

अप्रमित-वीर्यता च, प्रिय-हित वादित्व-मन्यदमित-गुणस्य।
प्रथिता दश-विख्याता, स्वतिशय-धर्मा स्वयं-भुवो देहस्य॥३९॥

केवलज्ञान के दश अतिशय

गव्यूति-शत-चतुष्टय-सुभिक्षता-गगन-गमन-मप्राणिवधः।
भुक्त्युपसर्गाऽभावश्, चतुरास्यत्वं च सर्व-विद्येश्वरता॥४०॥

अच्छायत्व-मपक्ष्म-स्पन्दश्च सम-प्रसिद्ध-नख-केशत्वम्।
स्वतिशय-गुणा भगवतो, घाति-क्षयजा भवन्ति तेऽपि दशैव॥४१॥

देवोंकृत चौदह अतिशय

सार्वार्ध-मागधीया, भाषा मैत्री च सर्व-जनता-विषया।
सर्वर्तु-फल-स्तबक-प्रवाल-कुसुमोपशोभित-तरु-परिणामाः॥४२॥

आदर्शतल-प्रतिमा, रत्नमयी जायते मही च मनोज्ञा।
विहरण-मन्वेत्-यनिलः परमानन्दश्च भवति सर्व-जनस्य॥४३॥

मरुतोऽपि सुरभि-गन्ध-, व्यामिश्रा योजनान्तरं भूभागम्।
व्युपशमित-धूलि-कण्टक- तृण-कीटक-शर्करोपलं प्रकुर्वन्ति॥४४॥

तदनु स्तनित कुमारा, विद्युन्माला-विलास-हास-विभूषाः।
प्रकिरन्ति सुरभि-गन्धिं, गन्धोदक-वृष्टि-माज्ञया त्रिदशपतेः॥४५॥

वर-पद्मराग-केसर-मतुल-सुख-स्पर्श-हेम-मय-दल-निचयम्।
पादन्यासे पद्मं सप्त, पुरः पृष्ठतश्च सप्त भवन्ति॥४६॥

फलभार-नम्र-शालि- ब्रीह्यादि-समस्त-सस्य-धृत-रोमाञ्चा।
परिहृषितेव च भूमिस्- त्रिभुवन नाथस्य वैभवं पश्यन्ती॥४७॥

शरदुदय-विमल-सलिलं, सर इव गगनं विराजते विगतमलम्।
जहति च दिशस्-तिमिरिकां, विगतरजः प्रभृति जिह्मता भावं सद्यः॥४८॥

एतेतेति त्वरितं ज्योतिर्-व्यन्तर-दिवौकसा-ममृतभुजः।
कुलिश भृदाज्ञापनया, कुर्वन्त्यन्ये समन्ततो व्याह्वानम्॥४९॥

स्फुर-दर-सहस्त्र-रुचिरं, विमल-महारत्न-किरण-निकर-परीतम्।
प्रहसित-किरण-सहस्र- द्युति-मण्डल-मग्रगामि-धर्म-सुचक्रम्॥५०॥

इत्यष्ट-मंगलं च स्वादर्श-प्रभृति-भक्ति-राग-परीतैः।
उपकल्प्यन्ते त्रिदशै-रेतेऽपि-निरुपमाऽतिशयाः॥५१॥

आठ प्रातिहार्यों का वर्णन-अशोक वृक्ष

वैडूर्य-रुचिर-विटप-प्रवाल-मृदु-पल्लवोपशोभित-शाखः।
श्रीमा-नशोक-वृक्षो वर-मरकत-पत्र-गहन-बहलच्छायः॥५२॥

पुष्प वृष्टि

मन्दार-कुन्द-कुवलय-नीलोत्पल-कमल-मालती-बकुलाद्यैः।
समद-भ्रमर-परीतैर्-व्यामिश्रा पतति कुसुम-वृष्टिर्-नभसः॥५३॥

चँवर

कटक-कटि-सूत्र-कुण्डल-केयूर-प्रभृति-भूषितांगौ स्वंगौ।
यक्षौ कमल-दलाक्षौ परि-निक्षिपतः सलील-चामर-युगलम्॥५४॥

भामण्डल

आकस्मिक-मिव युगपद्-दिवसकर-सहस्र-मपगत-व्यवधानम्।
भामण्डल-मविभावित-रात्रिन्दिव-भेद-मतित-रामाभाति॥५५॥

दुन्दुभिनाद

प्रबल-पवनाभिघात-प्रक्षुभित-समुद्र-घोष-मन्द्र-ध्वानम्।
दन्ध्वन्यते सुवीणा-वंशादि-सुवाद्य-दुन्दुभिस्-तालसमम्॥५६॥

क्षत्र त्रय

त्रिभुवन-पतिता-लाञ्छन-मिन्दुत्रय-तुल्य-मतुल-मुक्ता-जालम्।
छत्रत्रयं च सुबृहद्-वैडूर्य-विक्लृप्त-दण्ड-मधिक-मनोज्ञम्॥५७॥

दिव्य ध्वनि

ध्वनिरपि योजनमेकं, प्रजायते श्रोतृ-हृदयहारि-गम्भीरः।
ससलिल-जलधर-पटल-ध्वनितमिव प्रवितान्त-राशावलयम्॥५८॥

सिंहासन

स्फुरितांशु-रत्न-दीधिति-परिविच्छुरिताऽमरेन्द्र-चापच्छायम्।
ध्रियते मृगेन्द्रवर्यैः-स्फटिक-शिला-घटित-सिंह-विष्टर-मतुलम्॥५९॥

छियालीस मूलगुण

यस्येह चतुस्-त्रिंशत्-प्रवर-गुणा प्रातिहार्य-लक्ष्म्यश्चाष्टौ।
तस्मै नमो भगवते, त्रिभुवन-परमेश्वरार्हते गुण-महते॥६०॥

श्री अर्हन्तदेव की महिमा

क्षेपक-श्लोक (समोशरण महिमा)

गत्त्वा क्षितेर्वियति पंच सहस्र दण्डान्।
सोपान-विंशति सहस्र-विराजमाना॥
रेजे सभा धनद यक्षकृता यदीया।
तस्मै नमस्-त्रिभुवन प्रभवे जिनाय॥१॥

वेदिका

सालोऽथ वेदि-रथ वेदि-रथोऽपि सालो,
वेदिश्च साल इह वेदि-रथोऽपि सालः।
वेदिश्च भाति सदसि क्रमतो यदीये,
तस्मै नमस्त्रिभुवनप्रभवे जिनाय॥२॥

अष्टभूमियाँ

प्रासाद-चैत्य-निलयाः परिखात-वल्ली।
प्रोद्यान केतु सुरवृक्ष गृहाङ्गणाश्च॥
पीठत्रयं सदसि यस्य सदा विभाति,
तस्मै नमस्-त्रिभुवन-प्रभवे जिनाय॥३॥

ध्वज चिन्ह

माला-मृगेन्द्र-कमलाऽम्बर वैनतेय-,
मातंग गोपतिरथाङ्ग मयूरहंसाः।
यस्य-ध्वजा विजयिनो भुवने विभान्ति,
तस्मै नमस्-त्रिभुवन-प्रभवे जिनाय॥४॥

बारह सभाएँ

निर्ग्रंन्थ-कल्प-वनिता-व्रतिका भ-भौम,
नागस्त्रियो भवन-भौम-भ-कल्पदेवाः।
कोष्ठस्थिता नृ-पशवोऽपि नमन्ति यस्य
तस्मै नमस्-त्रिभुवन-प्रभवे जिनाय॥५॥

अष्ट प्रातिहार्य

भाषा-प्रभा-वलय-विष्टर-पुष्पवृष्टिः,
पिण्डिद्रुमस्-त्रिदशदुन्दुभि-चामराणि।
छत्रत्रयेण सहितानि लसन्ति यस्य,
तस्मै नमस्-त्रिभुवन-प्रभवे जिनाय॥६॥

अष्ट मंगल द्रव्य

भृंगार-ताल-कलश-ध्वजसुप्रतीक-
श्वेतातपत्र-वरदर्पण-चामराणि।
प्रत्येक-मष्टशतकानि विभान्ति यस्य
तस्मै नमस्-त्रिभुवन-प्रभवे जिनाय॥७॥

स्तंभ-प्रतोलि-निधि-मार्ग-तडाग-वापी-
क्रीडाद्रि-धूप-घट-तोरण-नाट्य-शालाः।
स्तूपाश्च चैत्य-तरवो विलसन्ति यस्य
तस्मै नमस्-त्रिभुवन-प्रभवे जिनाय॥८॥

चौदह रत्न

सेनापति स्थपति-हर्म्यपति-द्विपाश्व,
स्त्री-चक्र-चर्म-मणि-काकिणिका-पुरोघाः।
छत्रासि-दंडपतयः प्रणमन्ति यस्य
तस्मै नमस्त्रिभुवन-प्रभवे जिनाय॥९॥

नव निधि

पद्मःकालो महाकालः सर्वरत्नश्च पांडुकः,
नैसर्पो माणवः शंखः पिंगलो निधयो नव।
एतेषां पतयः प्रणमन्ति यस्य,
तस्मै नमस्त्रिभुवन-प्रभवे जिनाय॥१०॥

छियालिस गुण

खविय-घण-घाइ-कम्मा, चउतीसातिसय विसेस पंच कल्लाणा।
अट्ठवर पाडिहेरा, अरिहंता मंगला मज्झं॥११॥

अञ्चलिका

इच्छामि भन्ते ! णंदीसर भत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं! णंदीसर दीवम्मि, चउदिस विदिसासु अंजण-दधिमुह-रदिकर-पुरुणगवरेसु जाणि जिणचेइयाणि ताणि सव्वाणि तिसु वि लोएसु भवणवासिय वाणविंतर-जोइसिय-कप्पवासिय-त्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेहिं ण्हाणेहिं, दिव्वेहिं गंधेहिं, दिव्वेहिं अक्खेहिं, दिव्वेहिं पुप्फेहिं, दिव्वेहिं चुण्णेहिं, दिव्वेहिं दीवेहिं, दिव्वेहिं धूवेहिं, दिव्वेहिं वासेहिं, आसाढ़-कात्तिय फागुण-मासाणं अट्ठमिमाइं काऊणजाव पुण्णिमंति णिच्चकालं अच्चंति, पुज्जंति, वंदंति, णमंसंति। णंदीसर महाकल्लाण पुज्जं करंति अहमवि इह संतो तत्थ संताइयं णिच्चकालं अच्चेमि पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो सुगइ-गमणं, समाहिमरणं जिणगुण संपत्ति होउ मज्झं।

॥ इति नंदीश्वर भक्तिः ॥

इस स्थिति में अवश्य बोलें

धर्म नाशे क्रिया ध्वंसे स्वसिद्धान्तार्थ विप्लवे।
अपृष्टै-रपि वक्तव्यं तत्स्वरूप प्रकाशने॥

श्री निर्वाण भक्ति

आर्या छन्दः

विबुधपति-खगपतिनरपति-धनदोरग-भूतयक्षपति-महितम्।
अतुल-सुखविमल निरुपम-शिव-मचल-मनामयं हि संप्राप्तम्॥१॥

कल्याणैः - संस्तोष्ये पञ्चभि-रनघं त्रिलोक परमगुरुम्।
भव्यजनतुष्टि जननैर्-दुरवापैः सन्मतिं भक्त्या॥२॥

आषाढ सुसित-षष्ठ्यां हस्तोत्तर मध्यमाश्रिते शशिनि।
आयातः स्वर्गसुखं भुक्त्वापुष्पोत्त-राधीशः॥३॥

सिद्धार्थनृपति तनयो भारतवास्ये विदेहकुण्डपुरे।
देव्यां प्रियकारिण्यां सुस्वप्नान् संप्रदर्श्य विभुः॥४॥

चैत्र सित पक्ष-फाल्गुनि शशांकयोगे दिने त्रयोदश्याम्।
जज्ञे स्वोच्चस्थेषु ग्रहेषु सौम्येषु शुभ लग्ने॥५॥

हस्ताश्रिते शशांके चैत्र ज्योत्स्ने चतुर्दशी दिवसे।
पूर्वाह्णे रत्नघटै-र्विबुधेन्द्राश्-चक्रुरभिषेकम्॥६॥

भुक्त्वा कुमार काले त्रिंशद्-वर्षाण्यनंत गुणराशिः।
अमरोपनीत भोगान्सहसाऽभिनिबोधितोऽन्येद्युः॥७॥

नानाविधरुपचितां विचित्र कूटोच्छ्रितां मणिविभूषाम्।
चन्द्रप्रभाख्य शिविका-मारुह्य पुराद्-विनिः क्रान्तः ॥८॥

मार्गशिर कृष्णदशमी हस्तोत्तर मध्यमाश्रिते सोमे।
षष्ठेन त्वपराह्णे भक्तेन जिनः प्रवव्राजः॥९॥

ग्रामपुर खेट कर्वट मटंब घोषाकरान्-प्रविजहार।
उग्रैस्तपोविधानैर्द्वादशवर्षाण्यमर पूज्यः॥१०॥

ॠजुकूलायास्तीरे शाल्मलिद्रुम संश्रिते शिलापट्टे।
अपराह्णे षष्ठेन्स्थितस्य खलु जृंभिका ग्रामे॥११॥

वैशाखसित-दशम्यां हस्तोत्तरमध्यमाश्रिते चन्द्रे।
क्षपक श्रेण्या-रूढस्योत्पन्नं केवलज्ञानम्॥१२॥

अथ भगवान संप्रापद्-दिव्यं वैभार पर्वतं रम्यम्।
चातुर्वर्ण्य सुसंघस्-तत्राऽभूद् गौतम प्रभृति॥१३॥

छत्राऽशोकौ घोषं सिंहासन दुंदुभि कुसुमवृष्टिम्।
वरचामर भामण्डल दिव्यान्यन्यानि चावापत्॥१४॥

दसविध-मनगाराणा-मेकादशधोत्तर तथा धर्मम्।
देशयमानो व्यवहरंस्-त्रिशद्-वर्षाण्यथ जिनेन्द्रः॥१५॥

पद्मवनदीर्घिकाकुल विविध द्रुमखण्डमण्डिते रम्ये।
पावानगरोद्याने व्युत्सर्गेण स्थितः स मुनिः ॥१६॥

कार्तिककृष्ण स-यान्ते स्वाता वृक्षे निहत्यकर्मरजः।
अवशेषं संप्रापद्व्यजरामर-मक्षयं सौख्यम् ॥१७॥

परिनिर्वृत्तं जिनेन्द्रं ज्ञात्त्वा विबुधाह्यथासु चागम्य।
देवतरुरक्त चन्दन कालागरु सुरभिगो-शीर्षैः ॥१८॥

अग्नीन्द्राज्जिनदेहं मुकुटानलसुरभि धूपवरमाल्यैः।
अभ्यर्च्य गणधरानपि गतादिवं खं च वनभवने ॥१९॥

(प्रहर्षिणी छंदः)

इत्येवं भगवति वर्धमान चन्द्रे,
यः स्तोत्रं पठति सुसंध्ययोर्द्वयोर्हि।
सोऽनन्तं परम सुखं नृदेवलोके,
भुक्त्वान्ते शिवपदमक्षयं प्रयाति ॥२०॥

बसंततिलका छंदः

यत्रार्हतां गणभृतां श्रुतपारगाणां,
निर्वाणभूमि-रिह भारतवर्षजानाम्।
तामद्य शुद्धमनसा क्रियया वचोभिः,
संस्तोतु-मुद्यतमतिः परिणौमि भक्त्या ॥२१॥

कैलाश शैलशिखरे परिनिर्वृत्तोऽसौ,
शैलेशिभावमुपपद्य वृषो महात्मा।
चम्पापुरे च वसुपूज्यसुतः सुधीमान्,
सिद्धिं परामुपगतो गतरागबन्धः॥२२॥

यत्प्रार्थ्यते शिवमयं विबुधेश्वराद्यैः,
पाखण्डिभिश्च परमार्थगवेष शीलैः।
नष्टाष्ट कर्म समये त-दरिष्टनेमिः,
संप्राप्तवान् क्षितिधरे वृहदूर्जयन्ते॥२३॥

पावापुरस्य बहिरुन्नत भूमिदेशे,
पद्मोत्पलाकुलवतां सरसां हि मध्ये।
श्री वर्द्धमान जिनदेव इति प्रतीतो,
निर्वाणमाप भगवान्-प्रविधूतपाप्मा॥२४॥

शेषास्तु ते जिनवरा जितमोहमल्ला,
ज्ञानार्क भूरि किरणै-रवभास्य लोकान्।
स्थानं परं निरवधारित सौख्य निष्ठं,
सम्मेद पर्वततले समवापुरीशाः॥२५॥

आद्यश्चतुर्दश दिनैर्विनिवृत्त योगः,
षष्ठेन निष्ठित कृतिर्जिन वर्द्धमानः।
शेषाविधूत घनकर्म निबद्धपाशाः,
मासेन ते यति वरांस्त्व भवन्वियोगाः॥२६॥

माल्यानि वाक्स्तुतिमयैः कुसुमैः सुदृब्धा-,
न्यादाय मानसकरै-रभितः किरन्तः।
पर्येम आदृति युता भगवन्-निषद्याः,
संप्रार्थिता वयमिमे परमां गतिं ताः ॥२७॥

शत्रुञ्जये नगवरे दमितारिपक्षाः,
पण्डोः सुताः परमनिर्वृति-मभ्युपेताः।
तुंग्यां तु संग-रहितो बलभद्र नामा,
नद्यास्तटे जिनरिपुश्च सुवर्णभद्रः॥२८॥

द्रोणीमति प्रबलकुण्डल मेढ्रके च,
वैभार पर्वततले वरसिद्धकूटे।
ऋष्यद्रिके च विपुलाद्रि बलाहके च,
विन्ध्ये च पोदनपुरे वृषदीपके च॥२९॥

सह्याचले च हिमवत्यपि सुप्रतिष्ठे,
दण्डात्मके गजपथे पृथुसारयष्टौ।
ये साधवो हतमलाः सुगतिं प्रयाताः,
स्थानानितानिजगतिप्रथितान्-यभूवन्॥३०॥

इक्षोर्विकार रसपृक्त गुणेन लोके,
पिष्टोऽधिकं मधुरता मुपयाति यद्वत्।

तद्-वच्च पुण्यपुरुषै रुषितानि नित्यं,
स्थानानि तानि जगतामिह पावनानि ॥३१ ॥
इत्यर्हतां शमवतां च महामुनीनां,
प्रोक्ता मयात्र परिनिर्वृति भूमि देशाः।
ते-मे जिना जितभया मुनयश्च शांताः,
दिश्यासुराशु सुगतिं निरवद्य सौख्याम् ॥३२ ॥

क्षेपक श्लोकानि:

कैलाशाद्रौ मुनीन्द्रः पुरु-रपदुरितो मुक्तिमाप प्रणूतः।
चंपायां वासुपूज्यस्-त्रिदशपतिनुतो नेमिरप्-यूर्जयंते ॥१ ॥
पावायां वर्धमानस्-त्रिभुवनगुरवो विंशतिस्तीर्थनाथाः।
सम्मेदाग्रे प्रजग्मुर्ददतु वि-नमतां निर्वृत्तिं नो जिनेन्द्राः ॥२ ॥
गोर्गजोश्वः कपिः कोकः सरोजः स्वस्तिकः शशी।
मकरः श्रीयुतो वृक्षो गंडो महिष सूकरौ ॥३ ॥
सेधा वज्रमृगच्छागाः पाठीनः कलशस्तथा।
कच्छपश्चोत्पलं शंखो नागराजश्च केसरी ॥४ ॥
शान्ति कुन्थवर कौरव्या यादवौ नेमिसुव्रतौ।
उग्रनाथौ पार्श्ववीरौ शेषा इक्ष्वाकुवंशजाः ॥५ ॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! परिणिव्वाण भत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, इमम्मि, अवसप्पिणीए चउत्थ समयस्स पच्छिमे भाए, आउट्ठमासहीणे वास चउक्कम्मि सेसकालम्मि, पावाए णयरीए कत्तिय मासस्य किण्ह चउदसिए रत्तीए, सादीए, णक्खत्ते, पच्चूसे, भयवदो महदि महावीरो वड्ढमाणो सिद्धिं गदो। तिसुवि लोएसु, भवणवासिय-वाणविंतर जोयिसिय कप्पवासियत्ति चउव्विहा देवा सपरिवारा दिव्वेण ण्हाणेण, दिव्वेण गंधेण दिव्वेण अक्खेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण चुण्णेण, दिव्वेण दीवेण, दिव्वेण धूवेण, दिव्वेण वासेण, णिच्चकालं, अच्चंति पुज्जंति, वंदति, णमंसंति, परिणिव्वाण, महाकल्लाण पुज्जं करंति। अहमवि इह संतो तत्थ संताइयं णिच्चकालं, अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसम्पत्ति होउ मज्झं।

॥ इति निर्वाण भक्तिः॥

नमन का फल

नमन्ति फलिनो वृक्षा, नमन्ति गुणिनो जनः।
शुष्क वृक्षश्च मूर्खश्च, न नमन्ति कदाचन॥

तत्त्वार्थ सूत्रम्

(आचार्य श्री उमास्वामी विरचितम्)

मोक्ष-मार्गस्य नेतारं, भेत्तारं कर्म भू-भृताम्।
ज्ञातारं विश्व तत्त्वानां, वन्दे तद्‌गुण-लब्धये॥
त्रैकाल्यं द्रव्यषट्‌कं, नवपद सहितं जीव षट्‌काय लेश्याः,
पञ्चान्ये चाऽस्तिकाया, व्रत समिति-गति ज्ञान चारित्र भेदाः।
इत्येतन्‌-मोक्षमूलं, त्रिभुवन-महितैः प्रोक्त-मर्हद्‌भि-रीशैः,
प्रत्येतिश्रद्‌दधाति, स्पृशति च मतिमान यः स वै शुद्धदृष्टिः॥१॥

सिद्धे जयप्‌-पसिद्धे, चउव्विहऽाराहणाफलं पत्ते।
वंदित्ता अरहंते, वोच्छं आराहणा कमसो॥२॥
उज्जोवण-मुज्जवणं, णिव्वहणं साहणं च णिच्छरणं।
दंसण-णाण-चरित्तं, तवाण-माराहणा भणिया॥३॥

卐 प्रथम अध्याय 卐

सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्राणि मोक्षमार्गः॥१॥ तत्त्वार्थ-श्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्॥२॥ तन-निसर्गा-दधिगमाद्‌-वा॥३॥ जीवाऽजीवाऽस्रव-बन्ध संवर निर्जरा मोक्षास्तत्त्वम्॥४॥ नाम

स्थापना द्रव्य भावतस् तन्-न्यासः ॥५॥ प्रमाणनयै-रधिगमः ॥६॥ निर्देश स्वामित्व साधनाऽधिकरण स्थिति विधानतः ॥७॥ सत्संख्या-क्षेत्र स्पर्शन-कालाऽन्तर भावाऽल्पबहुत्वैश्च ॥८॥ मतिश्रुताऽवधि मनःपर्यय केवलानि ज्ञानम् ॥९॥ तत्प्रमाणे ॥१०॥ आद्ये परोक्षम् ॥११॥ प्रत्यक्ष-मन्यत् ॥१२॥ मतिः स्मृतिः संज्ञा चिन्ताऽभिनिबोध इत्यनऽर्थान्तरम् ॥१३॥ तदिन्द्रियाऽनिन्द्रिय निमित्तम् ॥१४॥ अवग्रहेहावायधारणाः ॥१५॥ बहु-बहुविध क्षिप्राऽनिःसृताऽनुक्त-ध्रुवाणां सेतराणाम् ॥१६॥ अर्थस्य ॥१७॥ व्यञ्जनस्या-ऽवग्रहः ॥१८॥ न चक्षु-रनिन्द्रियाभ्याम् ॥१९॥ श्रुतं मतिपूर्वं द्व्यनेक द्वादश भेदम् ॥२०॥ भव प्रत्ययोऽवधिर्-देव नारकाणाम् ॥२१॥ क्षयोपशमनिमित्तः षड् विकल्पः शेषाणाम् ॥२२॥ ऋजुविपुलमती मनःपर्ययः ॥२३॥ विशुद्ध्यप्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः ॥२४॥ विशुद्धिक्षेत्र-स्वामि-विषयेभ्योऽवधि मनःपर्यययोः ॥२५॥ मति-श्रुतयोर्निबन्धो द्रव्येष्-वसर्वपर्यायेषु ॥२६॥ रूपिष्-ववधेः ॥२७॥ तदनन्तभागे मनः पर्ययस्य ॥२८॥ सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य ॥२९॥ एकादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्ना चतुर्भ्यः ॥३०॥ मतिश्रुताऽवधयो विपर्ययश्च ॥३१॥

स-दसतो-रविशेषा-द्-यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥३२॥
नैगम-संग्रह-व्यवहारर्जुसूत्र- शब्द-समभिरूढैवंभूता नयाः ॥३३॥

॥ इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः नमो नमः ॥

卐 द्वितीय अध्याय 卐

औपशमिक क्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्त्व-मौदयिक पारिणामिकौ च॥१॥ द्विनवाऽष्टादशैक विंशति त्रिभेदा यथाक्रमम्॥२॥ सम्यक्त्व-चारित्रे॥३॥ ज्ञान दर्शन-दान-लाभ-भोगोपभोग-वीर्याणि च॥४॥ ज्ञानाऽज्ञान-दर्शनलब्धयश्-चतुस्-त्रि-त्रि पञ्च भेदाः सम्यक्त्व चारित्र संयमाऽसंयमाश्च॥५॥ गति कषाय लिङ्ग मिथ्यादर्शनाऽज्ञानाऽसंयता-ऽसिद्ध लेश्याश्-चतुश्-चतुश-त्र्ये-कैकैकैक-षड् भेदाः॥६॥ जीव- भव्याऽभव्यत्वानि च॥७॥ उपयोगो लक्षणम्॥८॥ स-द्विविधोऽष्ट-चतुर्भेदः॥९॥ संसारिणो मुक्ताश्च॥१०॥ समनस्काऽमनस्काः ॥११॥ संसारिणस्-त्रस स्थावराः॥१२॥ पृथिव्यप्-तेजो-वायु वनस्पतयः स्थावराः॥१३॥ द्वीन्द्रियाऽदयस्-त्रसाः॥१४॥ पञ्चेन्द्रियाणि॥१५॥ द्वि-विधानि॥१६॥ निर्वृत्त्-युपकरणे द्रव्येन्द्रियम्॥१७॥ लब्ध्-युपयोगौ भावेन्द्रियम्

॥१८॥ स्पर्शन-रसन-घ्राण-चक्षुः श्रोत्राणि॥१९॥ स्पर्श-रस-गन्ध-वर्ण शब्दास् तदर्थाः॥२०॥ श्रुत-मनिन्द्रियस्य॥२१॥ वनस्पत्यन्ताना- मेकम्॥२२॥ कृमि पिपीलिका-भ्रमर-मनुष्यादीना-मेकैक वृद्धानि॥२३॥ सञ्ज्ञिनः समनस्काः॥२४॥ विग्रहगतौ कर्मयोगः॥२५॥ अनुश्रेणि गतिः॥२६॥ अविग्रहा जीवस्य॥२७॥ विग्रहवती च संसारिणः प्राक् चतुर्भ्यः॥२८॥ एकसमयाऽविग्रहा ॥२९॥ एकं द्वौ त्रीन्-वाऽनाहारकः॥३०॥ सम्मूर्च्छन-गर्भोपपादा जन्म॥३१॥ सचित्त शीत-संवृताः सेतरा मिश्राश्चैकशस्-तद्योनयः॥३२॥ जरायु-जाण्डज-पोतानां गर्भः॥३३॥ देवनारकाणामुपपादः॥३४॥ शेषाणां सम्मूर्च्छनम्॥३५॥ औदारिक-वैक्रियिका-ऽहारक-तैजस-कार्मणानि शरीराणि॥३६॥ परं-परं सूक्ष्मम्॥३७॥ प्रदेशतोऽसंख्येयगुणं प्राक् तैजसात्॥३८॥ अनन्त-गुणे परे॥३९॥ अप्रतीघाते॥४०॥ अनादि संबंधे च॥४१॥ सर्वस्य॥४२॥ तदाऽदीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्ना चतुर्भ्यः ॥४३॥ निरुपभोग-मन्त्यम्॥४४॥ गर्भ सम्मूर्च्छनज-माद्यम् ॥४५॥ औपपादिकं वैक्रियिकम्॥४६॥ लब्धिप्रत्ययं च॥४७॥ तैजस-मपि॥४८॥ शुभं विशुद्ध-मव्याघाति चाऽहारकं प्रमत्त

संयतस्यैव ॥४९॥ नारक-सम्मूर्च्छिनो नपुंसकानि ॥५०॥ न देवाः ॥५१॥ शेषास्-त्रिवेदाः ॥५२॥ औपपादिक-चरमोत्तमदेहाऽसंख्येय वर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः ॥५३॥

॥ इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः नमो नमः॥

卐 तृतीय अध्याय 卐

रत्न-शर्करा बालुका-पङ्क-धूम-तमो- महातमः-प्रभा भूमयो घनाऽम्बुवाताऽकाश प्रतिष्ठाः सप्ताऽधोऽधः ॥१॥ तासु त्रिंशत्-पंचविंशति पंचदश दश त्रिपंचोनैक नरक शतसहस्राणि पञ्च चैव यथाक्रमम् ॥२॥ नारका नित्याऽशुभतर लेश्या परिणाम देह वेदना विक्रियाः ॥३॥ परस्परोदीरित दुःखः ॥४॥ संक्लिष्टाऽसुरोदीरित-दुःखाश्च प्राक् चतुर्थ्याः ॥५॥ तेष्वेक त्रि-सप्त-दश सप्तदश-द्वाविंशति त्रयस्-त्रिंशत् सागरोपमा सत्त्वानां परा स्थितिः ॥६॥ जम्बूद्वीप लवणोदाऽदयः शुभनामानो द्वीपसमुद्राः ॥७॥ द्विर्-द्विर्-विष्कम्भाः पूर्व पूर्व परिक्षेपिणो वलयाऽकृतयः ॥८॥ तन्मध्ये मेरुनाभिर्-वृत्तो योजन शतसहस्र विष्कम्भो जम्बूद्वीपः ॥९॥ भरत-हैमवत-हरि-विदेह-रम्यक् हैरण्यवतैरावत वर्षाः क्षेत्राणि ॥१०॥ तद्विभाजिनः

पूर्वाऽपरायता हिमवन्-महाहिमवन्-निषध-नील रुक्मि शिखरिणो वर्षधर पर्वताः ॥११॥ हेमार्जुन-तपनीय-वैडूर्य-रजत हेममयाः ॥१२॥ मणिविचित्र-पार्श्वा उपरिमूले च तुल्यविस्ताराः ॥१३॥ पद्म-महापद्म-तिगिञ्छ-केशरि महापुण्डरीक-पुण्डरीका ह्रदास्-तेषा-मुपरि ॥१४॥ प्रथमो योजन-स-हस्त्रायामस् तदर्द्ध विष्कम्भो ह्रदः ॥१५॥ दशयोजनाऽवगाहः ॥१६॥ तन्मध्ये योजनं पुष्करम् ॥१७॥ तद्द्विगुण-द्विगुणा ह्रदाः पुष्कराणि च ॥१८॥ तन्-निवासिन्यो देव्यः श्री-ह्री-धृति- कीर्ति-बुद्धि-लक्ष्म्यः पल्योपमस्थित्यः ससामानिक-परिषत्काः ॥१९॥ गङ्गा-सिन्धुरोहिद्-रोहितास्या, हरिद्धरिकान्ता, सीतासीतोदा-नारीनरकान्ता-सुवर्णरूप्यकूला-रक्तारक्तोदाः-सरितस्-तन्-मध्यगाः ॥२०॥ द्वयोर्द्वयोः पूर्वाः पूर्वगाः ॥२१॥ शेषास्-त्वपरगाः ॥२२॥ चतुर्दशनदी सहस्त्र परिवृता गङ्गासिन्ध्वाऽदयो नद्यः ॥२३॥ भरतः षड्-विंशति पञ्चयोजन शतविस्तारः षट् चैकोनविंशतिभागा योजनस्य ॥२४॥ तद्द्विगुण द्विगुणविस्तारा वर्षधरवर्षा विदेहान्ताः ॥२५॥ उत्तरा-दक्षिण-तुल्याः ॥२६॥ भरतैरावतयोर्-वृद्धिह्रासौ षट्-समयाभ्या-मुत्सर्पिण्-यव-सर्पिणीभ्याम् ॥२७॥ ताभ्या-मपरा भूमयोऽव-स्थिताः ॥२८॥

एक-द्वि-त्रि-पल्योप-मस्थितयो हैमवतक-हारिवर्षक दैव-कुरवकाः ॥२९॥ तथोत्तराः ॥३०॥ विदेहेषु संख्येयकालाः ॥३१॥ भरतस्य विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य नवतिशत-भागः ॥३२॥ द्विर्-धातकीखण्डे ॥३३॥ पुष्करार्द्धे च ॥३४॥ प्राङ् मानुषोत्तरान्-मनुष्याः ॥३५॥ आर्या म्लेच्छाश्च ॥३६॥ भरतैरावत-विदेहाः कर्मभूमयोऽन्यत्र देवकुरुत्तर कुरुभ्यः ॥३७॥ नृस्थिती पराऽवरे त्रिपल्योपमाऽन्तर्मुहूर्ते ॥३८॥ तिर्यग्-योनिजानां च ॥३९॥

॥ इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः नमो नमः ॥

卐 चतुर्थ अध्याय 卐

देवाश्-चतुर्णिकायाः ॥१॥ आदितस् त्रिषु पीतान्त लेश्याः ॥२॥ दशाष्ट-पञ्च-द्वादश-विकल्पाः कल्पोपपन्न पर्यन्ताः ॥३॥ इन्द्र-सामानिक त्रायस्-त्रिंश पारिषदाऽत्मरक्ष लोकपालाऽनीक-प्रकीर्णकाऽभियोग्य-किल्विषिकाश्-चैकशः ॥४॥ त्रायस्-त्रिंश लोकपाल वर्ज्या व्यन्तर ज्योतिष्काः ॥५॥ पूर्वयोर्-द्वीन्द्राः ॥६॥ कायप्रवीचारा आ ऐशानात् ॥७॥ शेषाः-स्पर्श-रूप-शब्द-मनः प्रवीचाराः ॥८॥ परेऽप्रवीचाराः ॥९॥

भवनवासिनोऽसुरनाग-विद्युत्सुपर्णाग्नि-वात-स्तनितोदधि-द्वीप-दिक्कुमाराः ॥१०॥ व्यन्तराः किन्नर-किंपुरुष-महोरग-गन्धर्व-यक्ष-राक्षस-भूत-पिशाचाः ॥११॥ ज्योतिष्काः सूर्या-चन्द्रमसौ ग्रह-नक्षत्र-प्रकीर्णक-तारकाश्च ॥१२॥ मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ॥१३॥ तत्कृतः कालविभागः ॥१४॥ बहि-रवस्थिताः ॥१५॥ वैमानिकाः ॥१६॥ कल्पोपपन्नाः कल्पातीताश्च ॥१७॥ उपर्-युपरि ॥१८॥ सौधर्मैशान-सानत्कुमार-माहेन्द्र ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर लान्तव-कापिष्ठ शुक्र-महाशुक्र शतार-सहस्रा-रेष्वाऽनतप्राणतयो- रारणाच्युतयोर्-नवसु-ग्रैवेयकेषु विजय वैजयन्त जयन्ताऽपराजितेषु-सर्वार्थसिद्धौ च ॥१९॥ स्थिति-प्रभाव-सुख-द्युति-लेश्या-विशुद्धीन्द्रियावधि विषयतोऽधिकाः ॥२०॥ गति शरीर परिग्रहाऽभिमानतो हीनाः ॥२१॥ पीत पद्म शुक्ल लेश्या द्वि-त्रि-शेषेषु ॥२२॥ प्राग्-ग्रैवेयकेभ्यः कल्पाः ॥२३॥ ब्रह्म लोकाऽलया लौकान्तिकाः ॥२४॥ सारस्वताऽदित्य-बह्न्-यरुण गर्दतोय-तुषिताऽव्याबाधाऽरिष्टाश्च ॥२५॥ विजयाऽदिषु द्विचरमाः ॥२६॥ औपपादिक मनुष्येभ्यः शेषास्-तिर्यग्-योनयः ॥२७॥ स्थिति-रसुर नाग सुपर्ण-द्वीपशेषाणां सागरोपम त्रिपल्योप-माऽर्द्धहीन-मिताः ॥२८॥ सौधर्मैशानयोः सागरोपमे-ऽधिके ॥२९॥

सानत्कुमार-माहेन्द्रयोः सप्त ॥३० ॥ त्रिसप्त-नवैकादश त्रयोदश पञ्चदशभि-रधिकानि तु ॥३१ ॥ आरणाऽच्युतादूर्ध्व-मेकैकेन नवसु ग्रैवेयकेषु विजयाऽदिषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥३२ ॥ अपरा पल्योपम-मधिकम् ॥३३ ॥ परतः-परतः पूर्वा-पूर्वाऽनन्तरा ॥३४ ॥ नारकाणां च द्वितीयाऽदिषु ॥३५ ॥ दशवर्ष सहस्राणि प्रथमायाम् ॥३६ ॥ भवनेषु च ॥३७ ॥ व्यन्तराणां च ॥३८ ॥ परा पल्योपम-मधिकम् ॥३९ ॥ ज्योतिष्काणां च ॥४० ॥ तदऽष्ट-भागोऽपरा ॥४१ ॥ लौकान्तिकाना-मष्टौ सागरोपमाणि सर्वेषाम् ॥४२ ॥

॥ इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः नमो नमः ॥

卐 पंचम अध्याय 卐

अजीवकाया-धर्माऽधर्माऽकाश पुद्गलाः ॥१ ॥ द्रव्याणि ॥२ ॥ जीवाश्च ॥३ ॥ नित्याऽवस्थितान्-यरूपाणि ॥४ ॥ रूपिणः पुद्गलाः ॥५ ॥ आ आकाशा-देकद्रव्याणि ॥६ ॥ निष्क्रियाणि च ॥७ ॥ असंख्येयाः प्रदेशा धर्मा-ऽधर्मैकजीवानाम् ॥८ ॥ आकाशस्याऽनन्ताः ॥९ ॥ संख्येयाऽसंख्येयाश्च पुद्गलानाम् ॥१० ॥ नाणोः ॥११ ॥ लोकाकाशेऽवगाहः ॥१२ ॥

धर्माऽधर्मयोः कृत्स्ने ॥१३॥ एकप्रदेशाऽदिषु भाज्यः पुद्गलानाम् ॥१४॥ असंख्येय-भागाऽदिषु जीवानाम् ॥१५॥ प्रदेश-संहार-विसर्पाभ्यां प्रदीपवत् ॥१६॥ गति-स्थित्युपग्रहौ धर्माऽधर्मयो- रुपकारः ॥१७॥ आकाशस्याऽवगाहः ॥१८॥ शरीर-वाङ्-मनः प्राणापानाः पुद्गलानाम् ॥१९॥ सुख-दुख जीवित-मरणोपग्रहाश्च ॥२०॥ परस्परोपग्रहो जीवानाम् ॥२१॥ वर्तना-परिणाम-क्रियाः परत्वाऽपरत्वे च कालस्य ॥२२॥ स्पर्श-रस-गन्ध-वर्णवन्तः पुद्गलाः ॥२३॥ शब्द-बन्ध-सौक्ष्म्य-स्थौल्य संस्थान-भेद तमश्-छायाऽऽतपोद्योत-वन्तश्च ॥२४॥ अणवः स्कन्धाश्च ॥२५॥ भेद-सङ्घातेभ्य उत्पद्यन्ते ॥२६॥ भेदा-दणुः ॥२७॥ भेद-सङ्घाताभ्यां चाक्षुषः ॥२८॥ सद्द्रव्य लक्षणम् ॥२९॥ उत्पाद-व्यय ध्रौव्ययुक्तं सत् ॥३०॥ तद्भावाऽव्ययं नित्यम् ॥३१॥ अर्पिताऽनर्पित-सिद्धेः ॥३२॥ स्निग्ध-रुक्षत्वाद्-बन्धः ॥३३॥ न जघन्य-गुणानाम् ॥३४॥ गुणसाम्ये सदृशानाम् ॥३५॥ द्व्यऽधिकादिगुणानां तु ॥३६॥ बन्धेऽधिकौ पारिणामिकौ च ॥३७॥ गुणपर्यय-वद्द्रव्यम् ॥३८॥ कालश्च ॥३९॥ सोऽनन्तसमयः ॥४०॥ द्रव्याऽश्रया निर्गुणा गुणाः ॥४१॥ तद्भावः परिणामः ॥४२॥

॥ इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे पंचमोऽध्यायः नमो नमः ॥

काय-वाङ्मनः-कर्मयोगः ॥१॥ स आस्त्रवः ॥२॥ शुभः पुण्यस्-याशुभः पापस्य ॥३॥ सकषायाऽकषाययोः साम्परायि-केर्यापथयोः ॥४॥ इन्द्रिय-कषायाऽव्रत-क्रियाः पञ्च-चतुः पञ्च-पञ्चविंशति-संख्याः पूर्वस्य भेदाः ॥५॥ तीव्रमन्द-ज्ञाताऽज्ञात-भावाऽधिकरण-वीर्य विशेषेभ्यस्-तद्-विशेषः ॥६॥ अधिकरणं जीवाऽजीवाः ॥७॥ आद्यं संरम्भ समाऽरम्भाऽरम्भ-योग-कृत-कारिताऽनुमत कषायविशेषैस्-त्रिस्-त्रिस्-त्रिस्-चतुश्चैकशः ॥८॥ निर्वर्तना-निक्षेप संयोग निसर्गा द्वि-चतुर्-द्वित्रिभेदाः परम् ॥९॥ तत्प्रदोष निह्नव मात्सर्याऽन्तराया-ऽसादनोपघाता ज्ञानदर्शनाऽवरणयोः ॥१०॥ दुःख-शोक तापाऽक्रन्दन वध परिदेवना-न्याऽत्मपरोभय-स्थानान्-यसद् वेद्यस्य ॥११॥ भूतव्रत्-य-नुकम्पादान-सराग संयमाऽदियोगः क्षान्तिः शौचमिति सद्वेद्यस्य ॥१२॥ केवलि-श्रुत-संघ-धर्म-देवाऽवर्णवादो दर्शनमोहस्य ॥१३॥ कषायोदयात्तीव्र-परिणामश्चारित्र-मोहस्य ॥१४॥ बह्वाऽऽरम्भपरिग्रहत्वं

नारकस्याऽऽयुषाः ॥१५॥ माया तैर्यग्-योनस्य॥१६॥ अल्पाऽरम्भ-परिग्रहत्वं मानुषस्य॥१७॥ स्वभाव मार्दवं च॥१८॥ निःशीलव्रतत्वं च सर्वेषाम्॥१९॥ सरागसंयम संयमा-संयमाऽकामनिर्जरा बालतपांसि दैवस्य॥२०॥ सम्यक्त्वं च॥२१॥ योगवक्रता विसंवादनं-चाऽशुभस्य नाम्नः॥२२॥ तद्-विपरीतं शुभस्य॥२३॥ दर्शनविशुद्धिर्-विनयसंपन्नता शील व्रतेष्-वनतिचारोऽभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग संवेगौ शक्तितस्-त्याग -तपसीसाधु-समाधिर्-वैयावृत्यकरण-मर्हदाचार्य-बहुश्रुत-प्रवचन-भक्तिराऽऽवश्यकाऽपरिहाणि-र्मार्गप्रभावना-प्रवचन-वत्सलत्व-मिति तीर्थंकरत्वस्य ॥२४॥ पराऽत्मनिन्दाप्रशंसे स-दसद् गुणोच्छादनोद्-भावने च नीचैर्-गोत्रस्य॥२५॥ तद्-विपर्ययो नीचैर्-वृत्त्-यनुत्सेकौ चोत्तरस्य॥२६॥ विघ्नकरण-मन्तरायस्य॥२७॥

॥ इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे षष्ठमोऽध्यायः नमो नमः ॥

यस्य नास्ति स्वयं प्रज्ञा, शास्त्रं तस्य करोति किं।
लोचनाभ्यां विहीनस्य, दर्पणं किं करिष्यति॥

हिंसाऽनृतस्तेयाऽब्रह्म परिग्रहेभ्यो विरतिर्-व्रतम् ॥१॥ देशसर्वतोऽणुमहती ॥२॥ तत्-स्थैयार्थं भावनाः पञ्च पञ्च ॥३॥ वाङ्मनोगुप्तीर्याऽऽदान-निक्षेपण समित्याऽलोकितपान-भोजनानि पञ्च ॥४॥ क्रोध- लोभ-भीरुत्व-हास्यप्रत्याख्याऽनान्-यनुवीचि भाषणं च पञ्च ॥५॥ शून्याऽगार विमोचिताऽवास-परोप-रोधाऽकरण भैक्ष्यशुद्धि सधर्माऽविसंवादाः पञ्च ॥६॥ स्त्रीराग कथा-श्रवण-तन्मनोहराङ्ग निरीक्षण-पूर्व रताऽनुस्मरण-वृष्येष्टरस-स्वशरीर-संस्कार त्यागाः पञ्च ॥७॥ मनोज्ञाऽ-मनोज्ञेन्द्रिय-विषय राग-द्वेष वर्जनानि पञ्च ॥८॥ हिंसाऽदिष्वि-हाऽमुत्राऽपायाऽवद्यदर्शनम् ॥९॥ दुःखमेव वा ॥१०॥ मैत्री-प्रमोद-कारुण्य माध्यस्थानि च सत्त्वगुणाऽधिक क्लिश्य मानाऽविनयेषु ॥११॥ जगत्काय-स्वभावौ वा संवेग-वैराग्यार्थम् ॥१२॥ प्रमत्त योगात्प्राण व्यपरोपणं हिंसा ॥१३॥ अस-दभिधान-मनृतम् ॥१४॥ अदत्ताऽदानं स्तेयम् ॥१५॥ मैथुन-मब्रह्म ॥१६॥ मूर्च्छा परिग्रहः ॥१७॥ निःशल्यो व्रती ॥१८॥ अगार्-यनगारश्च ॥१९॥ अणुव्रतोऽगारी ॥२०॥ दिग्देशाऽनर्थदण्ड-विरति सामायिक प्रोषधोपवासोपभोग-परिभोग परिमाणा-

ऽतिथिसंविभाग व्रतसम्पन्नश्च ॥२१ ॥ मारणान्तिकीं सल्लेखनां जोषिता ॥२२ ॥ शङ्का-ऽकांक्षा-विचिकित्सान्य-दृष्टि-प्रशंसा-संस्तवाः सम्यग्दृष्टे-रतिचाराः ॥२३॥ व्रतशीलेषु पञ्च-पञ्च यथाक्रमम् ॥२४॥ बन्ध-वधच्छेदाऽति-भारारोपणाऽन्न-पान निरोधाः ॥२५ ॥ मिथ्योपदेश रहोभ्याख्यान- कूटलेखक्रिया-न्यासाऽपहार-साकार मन्त्रभेदाः ॥२६ ॥ स्तेनप्रयोग-तदाहृताऽदान-विरुद्ध-राज्याऽतिक्रम हीनाऽधिक-मानोन्मान प्रतिरूपक व्यवहाराः ॥२७॥ परविवाह-करणेत्वरिका परिगृहीता-ऽपरिगृहीता गमना ऽनङ्गक्रीडा काम-तीव्राभिनिवेशाः ॥२८ ॥ क्षेत्र-वास्तु-हिरण्य-सुवर्ण-धन-धान्य-दासी-दास कुप्य प्रमाणाऽतिक्रमाः ॥२९ ॥ ऊर्ध्वाधस्-तिर्यग्व्यतिक्रम क्षेत्रवृद्धि-स्मृत्यन्तराधानानि ॥३० ॥ आनयन प्रेष्यप्रयोग शब्द रूपानुपात-पुद्गलक्षेपाः ॥३१ ॥ कन्दर्प कौत्कुच्य मौखर्याऽ-समीक्ष्याधि-करणोपभोगपरिभोगाऽऽनर्थक्यानि ॥३२ ॥ योगदुः-प्रणिधाऽना-नादर-स्मृत्यनुपस्थानानि ॥३३ ॥ अप्रत्यवेक्षिता- ऽप्रमार्जितोत्सर्गाऽदान संस्तरोपक्रमणाऽनादर-स्मृत्-यनुपस्थानानि ॥३४॥ सचित्त-सम्बन्ध सम्मिश्राऽभिषव दुःपक्वाऽहाराः ॥३५॥ सचित्त-निक्षेपाऽपिधान परव्यपदेश मात्सर्य्य कालाऽतिक्रमाः ॥३६ ॥

जीवित-मरणाऽशंसा मित्राऽनुराग-सुखाऽनुबन्ध निदानानि ॥३७॥ अनुग्रहार्थं स्वस्याति सर्गो दानम् ॥३८॥ विधि-द्रव्य-दातृ-पात्र-विशेषात्-तद्-विशेषः ॥३९॥

॥ इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः नमो नमः ॥

卐 अष्टम् अध्याय 卐

मिथ्यादर्शनाऽविरति-प्रमाद-कषाय योगा बन्ध-हेतवः ॥१॥ सकषायत्वाज्-जीवः कर्मणो योग्यान् पुद्गलाना-ऽऽदत्ते स बन्धः ॥२॥ प्रकृतिस्थित्-यनुभाग प्रदेशास्-तद्-विधयः ॥३॥ आद्यो ज्ञानदर्शनाऽवरण-वेदनीय मोहनीयाऽयुर्-नाम गोत्राऽन्तरायाः ॥४॥ पञ्च नव द्वयष्टा-विंशति चतुर्-द्विचत्वारिंशद् द्विपञ्चभेदा यथाक्रमम् ॥५॥ मतिश्रुताऽवधि मनःपर्यय केवलानाम् ॥६॥ चक्षु-रचक्षु-रवधि-केवलानां निद्रा-निद्रानिद्रा-प्रचला-प्रचलाप्रचला स्त्यानगृद्धयश्च ॥७॥ स-दसद्-वेद्ये ॥८॥ दर्शनचारित्र-मोहनीयाऽकषाय-कषाय वेदनीयाख्यास् त्रि-द्वि-नव -षोडश-भेदाः-सम्यक्त्व-मिथ्यात्व तदुभयान्-यकषाय-कषायौ हास्य रत्-यरति शोक भय जुगुप्सा स्त्रीपुन्नपुंसकवेदाः अनन्ताऽनुबन्ध्यप्रत्याख्यानप्रत्याऽख्यान-संज्वलन विकल्पाश्-चैकशः क्रोधमानमायालोभाः ॥९॥

नारक-तैर्यग्योन-मानुष-दैवानि ॥१०॥ गति-जाति-शरीराऽङ्गो-पाङ्ग- निर्माण-बन्धन-सङ्घात-संस्थान-संहनन-स्पर्श-रस-गन्ध-वर्णाऽनुपूर्व्याऽगुरु लघुपघात परघाताऽतपोद्योतोच्छ्वास विहायोगतयः प्रत्येकशरीर- त्रस-सुभग सुस्वर शुभ सूक्ष्म पर्याप्तिस्थिराऽदेय यशःकीर्ति सेतराणि तीर्थंकरत्वं च ॥११॥ उच्चैर्-नीचैश्च ॥१२॥ दान- लाभ-भोगोपभोग वीर्याणाम् ॥१३॥ आदितस्-तिसृणा-मन्त रायस्य-च-त्रिंशत्सागरोपम-कोटीकोट्यः परा स्थितिः ॥१४॥ सप्ततिर्-मोहनीयस्य ॥१५॥ विंशतिर्-नाम-गोत्रयोः ॥१६॥ त्रयस्त्रिंशत्-सागरोपमाण्याऽयुषः ॥१७॥ अपरा द्वादशमुहूर्ता वेदनीयस्य ॥१८॥ नामगोत्रयो-रष्टौ ॥१९॥ शेषाणा- मन्तर्मुहूर्ता ॥२०॥ विपाकोऽनुभवः ॥२१॥ स यथानाम ॥२२॥ ततश्च निर्जरा ॥२३॥ नाम-प्रत्ययाः सर्वतो योग-विशेषात् सूक्ष्मैकक्षेत्राऽवगाहस्थिताः सर्वाऽत्मप्रेदेशेष्-वनन्ताऽनन्त प्रदेशाः ॥२४॥ सद्-वेद्य शुभाऽयुर्-नाम गोत्राणि पुण्यम् ॥२५॥ अतोऽन्यत्पापम् ॥२६॥

॥ इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे अष्टमोऽध्यायः नमो नमः ॥

उद्यमः साहसं धैर्यं बुद्धि शक्ति पराक्रमः।
षडेते यत्र वर्तन्ते तत्र देवः सहायकृत ॥

卐 नवम् अध्याय 卐

आस्त्रव-निरोधः संवरः ॥१॥ स गुप्ति समिति-धर्मानुप्रेक्षा परीषहजय-चारित्रैः ॥२॥ तपसा निर्जरा च ॥३॥ सम्यग्योग- निग्रहो गुप्तिः ॥४॥ ईर्या-भाषैषणाऽदान निक्षेपोत्सर्गाः समितयः ॥५॥ उत्तमक्षमा-मार्दवाऽर्जव-शौच सत्य संयम-तपस्-त्यागाऽ-किञ्चन्य ब्रह्मचर्याणि धर्मः ॥६॥ अनित्याऽशरण- संसारैकत्वाऽ-न्यत्वाऽशुच्याऽऽस्त्रव संवर निर्जरा लोक-बोधिदुर्लभ-धर्मस्वाऽ-ख्यातत्त्वानु-चिन्तन-मनुप्रेक्षाः ॥७॥ मार्गाऽच्यवन निर्जरार्थं परिषोढव्याः परीषहाः ॥८॥ क्षुत्पिपासा शीतोष्ण-दंशमशक नाग्न्याऽरति स्त्री चर्या निषद्या शय्याऽक्रोश-वध-याचनाऽलाभ रोग तृण-स्पर्श-मल सत्कार-पुरस्कार प्रज्ञाऽज्ञाना-ऽदर्शनानि ॥९॥ सूक्ष्मसाम्पराय छद्मस्थ वीतरागयोश्-चतुर्दश ॥१०॥ एकादश जिने ॥११॥ बादरसाम्पराये सर्वे ॥१२॥ ज्ञानावरणे प्रज्ञाऽज्ञाने ॥१३॥ दर्शनमोहान्तराययो-रदर्शनाऽलाभौ ॥१४॥ चारित्रमोहे नाग्न्याऽरति स्त्री-निषद्याऽऽ-क्रोश-याचना-सत्कार पुरस्काराः ॥१५॥ वेदनीये शेषाः ॥१६॥ एकाऽदयो भाज्या

युगपदेकस्मिन्-नैकोन-विंशतेः ॥१७॥ सामायिक-च्छेदोपस्थापना परिहारविशुद्धि सूक्ष्मसाम्पराय यथाऽख्यातमिति चारित्रम् ॥१८॥ अनशनाऽवमौदर्य वृत्ति-परिसंख्यान रसपरित्याग-विविक्त-शय्याऽसन-कायक्लेशा बाह्यं तपः ॥१९॥ प्रायश्चित्त- विनय-वैयावृत्त्य स्वाध्याय-व्युत्सर्ग-ध्यानान्-युत्तरम् ॥२०॥ नव चतुर्दश-पञ्च-द्विभेदा यथाक्रमं प्राग्-ध्यानात् ॥२१॥ आलोचना प्रतिक्रमण-तदुभय विवेक व्युत्सर्ग तपश्छेद परिहारोपस्थापनाः ॥२२॥ ज्ञान दर्शन चारित्रोपचाराः ॥२३॥ आचार्योपाध्याय तपस्वि शैक्ष्यग्लान-गण-कुल-सङ्घ-साधु-मनोज्ञानाम् ॥२४॥ वाचना-पृच्छना ऽनुप्रेक्षाऽम्नाय धर्मोपदेशाः ॥२५॥ बाह्याभ्यन्त-रोपध्योः ॥२६॥ उत्तम-संहननस्-यैकाग्र चिन्तानिरोधो ध्यानमाऽन्तर्मुहूर्तात् ॥२७॥ आर्त्त-रौद्र-धर्म्य-शुक्लानि ॥२८॥ परे मोक्षहेतू ॥२९॥ आर्त-म मनोज्ञस्य संप्रयोगे तद्-विप्रयोगाय स्मृति समन्वाहारः ॥३०॥ विपरीतं मनोज्ञस्य ॥३१॥ वेदनायाश्च ॥३२॥ निदानं च ॥३३॥ त-दविरत देशविरत-प्रमत्तसंयतानाम् ॥३४॥ हिंसाऽनृत स्तेय विषय-संरक्षणेभ्यो-रौद्र मविरत-देश-विरतयोः ॥३५॥ आज्ञाऽपाय-विपाक-संस्थानविचयाय धर्म्यम् ॥३६॥

शुक्ले चाद्ये पूर्वविदः ॥३७॥ परे केवलिनः ॥३८॥ पृथक्त्वैकत्व-वितर्क सूक्ष्मक्रियाप्रति-पाति-व्युपरत क्रियानिवर्तीनि ॥३९॥ त्र्येकयोग-काययोगाऽयोगानाम् ॥४०॥ एकाश्रये सवितर्कवीचारे पूर्वे ॥४१॥ अवीचारं द्वितीयम् ॥४२॥ वितर्कः श्रुतम् ॥४३॥ वीचारोऽर्थ व्यञ्जन योगसंक्रान्तिः ॥४४॥ सम्यग्दृष्टि-श्रावक विरताऽनन्त-वियोजक-दर्शनमोह क्षपकोपशमकोपशान्त-मोहक्षपक क्षीणमोहजिनाः क्रमशोऽसंख्येय-गुणनिर्जरा ॥४५॥ पुलाक-बकुश-कुशील-निर्ग्रन्थ-स्नातका निर्ग्रन्थाः ॥४६॥ संयमश्रुत प्रतिसेवना-तीर्थ-लिङ्ग-लेश्योपपादस्थान विकल्पतः साध्याः ॥४७॥

॥ इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे नवमोऽध्यायः नमो नमः ॥

卐 दशम् अध्याय 卐

मोहक्षयाज्ज्ञान-दर्शनावरणाऽन्तराय क्षयाच्च केवलम् ॥१॥ बन्धहेत्-वभाव निर्जराभ्यां कृत्स्न कर्म-विप्रमोक्षो मोक्षः ॥२॥ औपशमिकादि भव्यत्वानां च ॥३॥ अन्यत्र केवल-सम्यक्त्वज्ञान-दर्शन सिद्धत्वेभ्यः ॥४॥ त-दनन्तरमूर्ध्वं गच्छत्याऽऽलोकान्तात् ॥५॥

पूर्वप्रयोगा-दसङ्गत्वाद्-बन्धच्छेदात् तथागति- परिणामाच्च॥६॥ आविद्ध-कुलालचक्रवद्-व्यपगतलेपालाम्बु- वदेरण्डबीज-वदग्नि शिखावच्च॥७॥ धर्मास्तिकायाऽभावात्॥८॥ क्षेत्र काल गति लिङ्ग तीर्थ चारित्र प्रत्येकबुद्ध बोधित- ज्ञानाऽवगाहनाऽन्तर संख्याऽल्प-बहुत्वतः साध्याः॥९॥

॥ इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे दशमोऽध्यायः नमो नमः ॥१०॥

अक्षर-मात्र-पदस्वर-हीनं, व्यञ्जन संधि-वि वर्जितरेफम्।
साधुभि-रत्र मम क्षमितव्यं, को न विमुह्यति शास्त्रसमुद्रे॥१॥
दशाध्याये-परिच्छिन्ने, तत्त्वार्थे पठिते सति।
फलं स्यादुपवासस्य, भाषितं मुनिपुङ्गवैः॥२॥
तत्त्वार्थ-सूत्रकर्त्तारं, गृद्ध-पिच्छोपलक्षितम्।
वन्दे गणीन्द्रसंजात- मुमास्वामि मुनीश्वरम्॥३॥
पढम चउक्के पढमं, पंचमए जाण पुग्गलं तच्च।
छह सत्तेमि हि आस्सव, अट्ठमे बंध णायव्वो॥४॥
णवमे संवर णिज्जर, दहमे मोक्खं वियाणे हि।
इह सत्त तच्च भणियं, दह सुत्ते मुणिवरिंदेहिं॥५॥

जं सक्कइ तं कीरइ, जं च ण सक्कइ तहेव सद्दहणं।
सद्दहमाणो जीवो, पावइ अजराऽमरं ठाणं॥६॥

तवयरणं वयधरणं, संजम-सरणं च जीवदया करणम्।
अन्ते समाहिमरणं, चउविह दुक्खं णिवारेई॥७॥

कोटीशतं द्वादशचैव कोट्यो लक्षाण्यशीतिस्त्र्यधिकानि चैव।
पंचाशदष्टौ च सहस्र संख्या, मेतच्छ्रुतं पंच पदं नमामि॥८॥

अरहंत भासियत्थं, गणहरदेवेहिं गंथियं सम्मम्।
पणमामि भत्तिजुत्तो, सुदणाणमहोवहिं सिरसा॥९॥

गुरवः पांतु नो नित्यं, ज्ञानदर्शन नायकाः।
चारित्राऽर्णव गम्भीराः, मोक्षमार्गोपदेशकाः॥१०॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रापरनाम मोक्षशास्त्रं समाप्तम्॥

नीर चंदन पुष्पोघैः, प्रसूनैश्चाक्षतै शुभैः।
चरु दीपैश्च धूपैश्च, विशद यजे श्री फलैः।।

ॐ ह्रीं उमा स्वामी विरचित तत्त्वार्थ सूत्रेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

सदोदितानंत विभूति तेजसे, स्वरूप गुप्तात्म महिम्नि दीप्यते।
विशुद्ध दृग्बोध-मयेक चिद्भृते, नमोस्तु आदि जिन विश्वभासिने।।

इष्टोपदेशः

(श्रीमत् पूज्यपादाचार्य विरचित)

यस्य स्वयं स्वभावाऽप्ति-रभावे कृत्स्न कर्मणः।
तस्मै संज्ञान रूपाय, नमोऽस्तु परमाऽत्मने॥१॥

योग्योपादान योगेन, दृषदः स्वर्णता मता।
द्रव्यादि स्वादि संपत्ता-वात्मनोऽप्यात्मता मता॥२॥

वरं व्रतैः पदं दैवं, नाव्रतैर्-वत् नारकम्।
छायाऽतपस्थयोर्-भेदः, प्रतिपालयतोर्-महान्॥३॥

यत्र भावः शिवं दत्ते, द्यौः कियद् दूरवर्तिनी।
यो नयत्याशु गव्यूतिं, क्रोशार्द्धे किं स सीदति ?॥४॥

हृषीकज-मनातङ्कं, दीर्घ कालो-पलालितम्।
नाके नाकौकसां सौख्यं, नाके नाकौकसा-मिव॥५॥

वासना मात्र-मेवै तत्, सुखं दुःखं च देहिनाम्।
तथा ह्युद्-वेजयन्त्-येते, भोगा-रोगा इवापदि॥६॥

मोहेन संवृतं ज्ञानं, स्वभावं लभते न हि।
मत्तः पुमान् पदार्थानां, यथा मदन कोद्रवैः॥७॥

वपुर्-गृहं धनं दाराः, पुत्रा-मित्राणि शत्रवः।
सर्वथाऽन्य स्वभावानि, मूढः स्वानि प्रपद्यते॥८॥

दिग्देशेभ्यः खगा एत्य, सं-वसन्ति नगे-नगे।
स्व-स्व कार्य वशाद्यान्ति, देशे दिक्षु प्रगे-प्रगे॥९॥

विराधकः कथं हन्त्रे, जनाय परि कुप्यति।
त्र्यङ्गुलं पातयन् पद्भ्यां, स्वयं दण्डेन पात्यते॥१०॥

राग-द्वेष द्वयी दीर्घ - नेत्राऽकर्षण कर्मणा।
अज्ञानात्-सु चिरं जीवः, संसाराऽब्धौ भ्रमत्यसौ॥११॥

विपद्-भवपदाऽवर्ते, पदिकेवाति-वाह्यते।
यावत्तावद्-भवन्त्-यन्याः, प्रचुरा विपदः पुरः॥१२॥

दुरर्ज्येनाऽसुरक्ष्येण, नश्वरेण धनाऽदिना।
स्वस्थं-मन्यो जनः कोऽपि, ज्वर-वानिव सर्पिषा॥१३॥

विपत्ति-मात्मनो मूढः, परेषा-मिव - नेक्षते
दह्यमान मृगाऽकीर्णे, वनाऽन्तर-तरुस्थ वत्॥१४॥

आयुर्-वृद्धि क्षयोत्कर्ष, हेतुं कालस्य निर्गमम्।
वाञ्छतां धनिना-मिष्टं, जीवितात्-सुतरां धनम्॥१५॥

त्यागाय श्रेयसे वित्त-मवित्तः संचिनोति यः

स्वशरीरं स पङ्केन, स्नास्यामीति वि-लिम्पति॥१६॥

आरम्भे तापकान् प्राप्त-वतृप्ति प्रतिपादकान्।
अन्ते सुदुस्-त्यजान्, कामान् कामं कः सेवते सुधीः॥१७॥

भवन्ति प्राप्य यत्सङ्ग-मशुचीनि शुचीन्यपि।
स कायः संततापायस्-तदर्थं प्रार्थना वृथा॥१८॥

यज्जीवस्योपकाराय, तद्-देहस्याऽपकारकम्।
यद्-देहस्योपकाराय, तज्जीवस्याऽपकारकम्॥१९॥

इतश्चिन्तामणिर्-दिव्य, इतः पिण्याक खण्डकम्।
ध्यानेन चेदुभे लभ्ये, क्वाद्रियन्तां विवेकिनः॥२०॥

स्व-संवेदन सुव्यक्तस्-तनु मात्रो-निरत्ययः।
अत्यन्त सौख्यवानाऽत्मा, लोकाऽलोक विलोकनः॥२१॥

संयम्य करणग्राम-मेकाग्रत्वेन चेतसः।
आत्मान-मात्मवान् ध्याये-दात्मनै-वात्मनि स्थितम्॥२२॥

अज्ञानोपास्ति-रज्ञानं, ज्ञानं ज्ञानि-समाश्रयः।
ददाति यत्तु यस्यास्ति, सुप्रसिद्ध-मिदं वचः॥२३॥

परीषहाद्-यविज्ञाना-दाऽस्त्रवस्य निरोधिनी।
जायतेऽध्यात्म योगेन, कर्मणा-माशु निर्जरा॥२४॥

कटस्य कर्त्ताह-मिति, संबंधः स्याद् द्वयोर्-द्वयोः।
ध्यानं ध्येयं यदात्मैव, संबंधः कीदृशस्-तदा॥२५॥

बध्यते-मुच्यते जीवः, सममो निर्ममः क्रमात्।
तस्मात्सर्व प्रयत्नेन, निर्ममत्वं वि चिन्तयेत्॥२६॥

एकोऽहं निर्ममः शुद्धो, ज्ञानी योगीन्द्र गोचरः।
बाह्याः संयोगजा भावा, मत्तः सर्वेऽपि सर्वथा॥२७॥

दुःख संदोह भागित्वं, संयोगा-दिह देहिनाम्।
त्यजाम्येनं ततः सर्वं, मनो वाक्काय कर्मभिः॥२८॥

न मे मृत्युः कुतो भीतिर्, न मे व्याधिः कुतो व्यथा।
नाऽहं बालो न वृद्धोऽहं, न युवैतानि पुद्गले॥२९॥

भुक्तोज्झिता मुहुर्-मोहान्, मया सर्वेऽपि पुद्गलाः।
उच्छिष्टेष्-विव तेष्वद्य, मम विज्ञस्य का स्पृहा॥३०॥

कर्म-कर्म हिताबन्धि, जीवो-जीव हित-स्पृहः।
स्व-स्व प्रभाव भूयस्त्वे, स्वार्थं को वा न वाञ्छति॥३१॥

परोपकृति-मुत्सृज्य, स्वोपकार परो भव।
उपकुर्वन्-परस्याज्ञो, दृश्यमानस्य लोकवत्॥३२॥

गुरुपदेशा-दऽभ्यासात्-संवित्तेः स्व-परान्तरम्।
जानाति यः स जानाति, मोक्ष सौख्यं निरन्तरम्॥३३॥

स्वस्मिन्-स-दभिलाऽषित्-वा-दभीष्टज्ञाप कत्त्वतः।
स्वयं हितप्रयोक्तृत्त्वा-दाऽत्मैव गुरुरात्मनः॥३४॥

नाऽज्ञो विज्ञत्व-मायाति, विज्ञो नाज्ञत्व-मृच्छति।
निमित्तमात्र-मन्यस्तु, गतेर्-धर्माऽस्तिकाय वत्॥३५॥

अभवच्-चित्त विक्षेप, एकान्ते तत्त्व संस्थितः।
अभ्यस्ये-दभियोगेन, योगी तत्त्वं निजात्मनः॥३६॥

यथा-यथा समायाति, संवित्तौ तत्त्व-मुत्तमम्।
तथा-तथा न रोचन्ते, विषयाः सुलभा अपि॥३७॥

यथा-यथा न रोचन्ते, विषयाः सुलभा अपि।
तथा-तथा समायाति, संवित्तौ तत्त्व-मुत्तमम्॥३८॥

निशामयति निश्शेष-मिन्द्रजालोपमं जगत्।
स्पृह-यत्यात्म लाभाय, गत्त्वान्-यत्राऽनु तप्यते॥३९॥

इच्छत्-येकान्त संवासं, निर्जनं जनिताऽदरः।
निजकार्य वशात्-किंचि-दुक्त्वा विस्मरति द्रुतम्॥४०॥

ब्रुवन्-नपि हि न ब्रूते, गच्छन्-नपि न गच्छति।
स्थिरीकृताऽत्म तत्त्वस्तु, पश्यन्-नपि न पश्यति॥४१॥

किमिदं कीदृशं कस्य, कस्मात्-क्वेत्-यविशेषयन्।
स्वदेह-मपि नावैति, योगी योग-परायणः॥४२॥

यो-यत्र निवसन्-नास्ते, स तत्र कुरुते रतिम्।
यो-यत्र रमते तस्मा-दन्यत्र स न गच्छति॥४३॥

अगच्छंस्-तद्-विशेषाणा - मनभिज्ञश् - च जायते।
अज्ञात तद्-विशेषस्तु, बद्ध्यते न वि-मुच्यते॥४४॥

परः परस्ततो दुःख-मात्मैवात्मा ततः सुखम्।
अतएव महात्मानस्-तन्-निमित्तं कृतोद्यमाः॥४५॥

अविद्वान् पुद्गल द्रव्यं, योऽभिनन्दति तस्य तत्।
न जातु जन्तोः सामीप्यं, चतुर्गतिषु मुंचति॥४६॥

आत्मानुष्ठान निष्ठस्य, व्यवहार बहिः स्थितेः।
जायते परमानन्दः, कश्चिद्-योगेन योगिनः॥४७॥

आनन्दो निर्दहत्-युद्धं, कर्मेन्धन-मनारतम्।
न चासौ खिद्यते योगी, बहिर्-दुःखेष्-वचेतनः॥४८॥

अविद्याभि-दुरं ज्योतिः, परं ज्ञानमयं-महत्।
तत्-प्रष्टव्यं तदेष्टव्यं, तद् द्रष्टव्यं मुमुक्षु-भिः ॥४९॥

जीवोऽन्यः पुद्गलश्चाऽन्य, इत्यसौ तत्त्व संग्रहः।
यदन्-यदुच्यते किंचित्, सोऽस्तु तस्यैव विस्तरः ॥५०॥

इष्टोपदेश-मिति सम्य-गधीत्य धीमान्,
मानाऽपमान समतां स्व-मताद्-वितन्य।
मुक्ताग्रहो वि निवसन् सजने वने वा,
मुक्तिश्रियं निरुपमा-मुपयाति भव्यः ॥५१॥

(इति इष्टोपदेश समाप्त)

विद्या प्राप्ति मंत्र

बुद्धि देहि यशोदेहि कवित्वं देहि देहि मे।
मूढत्वं हर मे देवि! त्राहि मां शरणागतं॥
ॐ ह्रीं श्री वद् वद् वाग्वादिनी भगवती सरस्वती ह्रीं नमः

*****

द्रव्य-संग्रहः

(श्रीमत् नेमिचन्द्रसिद्धान्तिदेव विरचित)

जीव-मजीवं दव्वं, जिणवर-वसहेण जेण णिद्दिट्ठं।
देविंद-विंद वंदं, वंदे तं सव्वदा सिरसा॥१॥

जीवो उवओगमओ, अमुत्ति कत्ता सदेहपरिमाणो।
भोत्ता संसारत्थो, सिद्धो सो विस्स-सोड्ढगई॥२॥

तिक्काले-चदुपाणा, इंदिय-बल-माउ-आणपाणो य।
ववहारा सो जीवो, णिच्चय-णयदो दु चेदणा जस्स॥३॥

उवओगो दुवियप्पो, दंसण णाणं च दंसणं चदुधा।
चक्खु अचक्खू ओही, दंसणमध केवलं णेयं॥४॥

णाणं अट्ठ-वियप्पं, मदि-सुद-ओही-अणाण-णाणाणि।
मणपज्जय-केवलमवि, पच्चक्ख-परोक्ख भेयं च॥५॥

अट्ठ-चदु-णाण-दंसण, सामण्णं जीवलक्खणं भणियं।
ववहारा सुद्धणया, सुद्धं पुण दंसणं णाणं॥६॥

वण्ण रस पंच गंधा दो, फासा अट्ठ णिच्छया जीवे।
णो संति अमुत्ति तदो, ववहारा मुत्ति बंधादो॥७॥

पुग्गल कम्मादीणं, कत्ता ववहारदो दु णिच्चयदो।
चेदण-कम्माणादा, सुद्धणया सुद्धभावाणं॥८॥

ववहारा सुहदुक्खं, पुग्गल कम्मप्-फलं पभुंजेदि।
आदा णिच्छयणयदो, चेदणभावं खु आदस्स॥९॥

अणु-गुरु-देह-पमाणो, उवसंहारप्-पसप्पदो चेदा।
असमुहदो ववहारा, णिच्छयणयदो असंखदेसो वा॥१०॥

पुढवि-जल-तेउ-वाऊ, वण्णप्फदी-विविह थाव-रेइंदी।
विग्-तिग्-चदु-पंचक्खा, तस-जीवा होंति संखादी॥११॥

समणा-अमणा णेया पंचिंदिय णिम्मणा परे सव्वे।
बादर-सुहुमे इंदी, सव्वे पज्जत्त इदरा य॥१२॥

मग्गण-गुण-ठाणेहिं य, चउदसहि हवंति तह असुद्धणया।
विण्णेया संसारी, सव्वे सुद्धा हु सुद्धणया॥१३॥

णिक्कम्मा अट्ठगुणा, किंचूणा चरम देहदो सिद्धा।
लोयग्ग ठिदा णिच्चा, उप्पादवयेहिं संजुत्ता॥१४॥

अज्जीवो पुण णेओ, पुग्गल धम्मो अधम्म आयासं।
कालो पुग्गल-मुत्तो, रूवादिगुणो अमुत्ति सेसा दु (हु)॥१५॥

सद्दो बंधो सुहुमो, थूलो संठाण-भेद-तम-छाया।
उज्जो-दादव-सहिया, पुग्गल-दव्वस्स पज्जाया॥१६॥

गइ-परिणयाण धम्मो, पुग्गल-जीवाण गमण-सहयारी।
तोयं जह मच्छाणं, अच्छंता णेव सो णेई॥१७॥

ठाण-जुदाण अधम्मो, पुग्गल जीवाण ठाण सहयारी।
छाया जह पहियाणं, गच्छंता णेव सो धरई॥१८॥

अवगास-दाण-जोग्गं, जीवादीणं वियाण आयासं।
जेण्हं लोगाऽगासं, अल्लोगागास-मिदि दुविहं॥१९॥

धम्माऽधम्मा कालो, पुग्गल जीवा य संति जावदिये।
आयासे सो लोगो, तत्तो परदो अलोगुत्तो॥२०॥

दव्व-परिवट्टरूवो, जो सो कालो हवेइ ववहारो।
परिणामादी लक्खो, वट्टण लक्खो य परमट्ठो॥२१॥

लोयायास-पदेसे, इक्केक्के जे ठिया हु इक्केक्का।
रयणाणं रासीमिव, ते कालाणू असंख-दव्वाणि॥२२॥

एवं छब्भेय-मिदं, जीवा-जीवप्प-भेददो दव्वं।
उत्तं काल विजुत्तं, णायव्वा पंच अत्थिकाया दु॥२३॥

संति जदो तेणेदे, अत्थित्ति भणंति जिणवरा जम्हा।
काया इव बहुदेसा, तम्हा काया य अत्थिकाया य ॥२४॥

होंति असंखा जीवे, धम्माऽधम्मे अणंत-आयासे।
मुत्ते तिविह-पदेसा, कालस्सेगो ण तेण सो काओ ॥२५॥

एयपदेसो वि अणु, णाणा-खंधप्-पदेसदो होदि।
बहुदेसो उवयारा, तेण य काओ भणंति सव्वण्हु ॥२६॥

जावदियं आयासं, अविभागी-पुग्गलाणु-वट्टद्धं।
तं खु पदेसं जाणे, सव्वाऽणुट्ठाण-दाणरिहं ॥२७॥

आसव बंधण-संवर-णिज्जर-मोक्खो सपुण्ण-पावा जे।
जीवाजीव-विसेसा, ते वि समासेण पभणामो ॥२८॥

आसवदि जेण कम्मं, परिणामे-णप्पणो स विण्णेओ।
भावासवो जिणुत्तो, कम्माऽसवणं परो होदि ॥२९॥

मिच्छत्ताऽविरदि-पमाद-जोग-कोहादओऽथ विण्णेया।
पण-पण पणदह-तिय-चदु, कमसो भेदा दु पुव्वस्स ॥३०॥

णाणावरणाऽदीणं, जोग्गं जं पुग्गलं समाऽसवदि।
दव्वाऽसवो स णेओ, अणेय भेओ जिणक्खादो ॥३१॥

बज्झदि कम्मं जेण दु चेदण-भावेण भावबंधो सो।
कम्माद पदेसाणं अण्णोण्ण-पवेसणं इदरो॥३२॥

पयडिट्-ठिदि-अणुभागप्-पदेसभेदा दु चदु विधो बंधो।
जोगा पयडिपदेसा, ठिदि अणुभागा कसायदो होंति॥३३॥

चेदण परिणामो जो, कम्मस्साऽसव-णिरोहणे हेऊ।
सो भावसंवरो खलु, दव्वासव रोहणे अण्णो॥३४॥

वद-समिदि-गुत्तीओ, धम्माऽणुपेहा परीसहजओ य।
चारित्तं बहुभेया, णायव्वा भावसंवर-विसेसा॥३५॥

जहकालेण तवेण य, भुत्तरसं कम्म-पुग्गलं जेण।
भावेण सडदि णेया, तस्-सडणं चेदि णिज्जरा दुविहा॥३६॥

सव्वस्स कम्मणो जो, खयहेदू अप्पणो हु परिणामो।
णेओ स भावमोक्खो, दव्वविमोक्खो य कम्मपुधभावो॥३७॥

सुह-असुह-भावजुत्ता, पुण्णं पावं हवंति खलु जीवा।
सादं सुहाउ णामं, गोदं पुण्णं पराणि पावं च॥३८॥

सम्मद्दंसण-णाणं, चरणं मोक्खस्स कारणं जाणे।
ववहारा णिच्छयदो, तत्तिय मइयो णिओ अप्पा॥३९॥

रयणत्तयं ण वट्टइ, अप्पाणं मुयत्तु अण्ण-दवियम्हि।
तम्हा तत्तिय मइओ, होदि हु मोक्खस्स कारणं आदा॥४०॥

जीवादी सद्दहणं, सम्मत्तं रूव-मप्पणो तं तु।
दुरभिणिवेस विमुक्कं, णाणं सम्मं खु होदि सदि जम्हि॥४१॥

संसय-विमोह-विब्भम-विवज्जियं अप्प-पर सरूवस्स।
गहणं सम्मंणाणं, सायार-मणेयभेयं च॥४२॥

जं सामण्णं गहणं, भावाणं णेव कट्टुमायारं।
अविसेसिदूण अट्ठे, दंसण-मिदि भण्णये समये॥४३॥

दंसणपुव्वं णाणं छदुमत्थाणं ण दोण्णि उवओगा।
जुगवं जम्हा केवलिणाहे जुगवं तु ते दो वि॥४४॥

असुहादो वि-णिवित्ति, सुहे पवित्ती य जाण चारित्तं।
वद-समिदि-गुत्तिरूवं, ववहारणया दु जिणभणियं॥४५॥

बहिर-ब्भंतर-किरिया-रोहो, भव-कारणप्-पणासट्ठं।
णाणिस्स जं जिणुत्तं, तं परमं सम्मचारित्तं॥४६॥

दुविहं पि मोक्ख-हेउ, झाणे पाउणदि जं मुणी णियमा।
तम्हा पयत्तचित्ता, जूयं झाणं समब्भसह॥४७॥

मा मुज्झह मा रज्जह, मा दुस्सह इट्-ठणिट्ठ-अत्थेसु।
थिरमिच्छह जइ चित्तं, विचित्त-झाणप्-पसिद्धीए॥४८॥

पणतीस-सोल-छप्पण, चदु-दुग-मेगं च जवह झाएह।
परमेट्ठिवाचयाणं, अण्णं च गुरूवएसेण॥४९॥

णट्ठ-चदु-घाइ-कम्मो, दंसण-सुह-णाण वीरिय-मइओ।
सुहदेहत्थो अप्पा, सुद्धो अरिहो वि-चिंतिज्जो॥५०॥

णट्-ठट्ठ-कम्म-देहो, लोयाऽलोयस्स जाणओ दट्ठा।
पुरिसायारो अप्पा, सिद्धो झाएह लोएसिहरत्थो॥५१॥

दंसणणाण-पहाणे-वीरिय-चारित्त-वर-तवायारे।
अप्पं परं च जुंजइ, सो आइरिओ मुणी झेओ॥५२॥

जो रयणत्तय जुत्तो, णिच्चं धम्मोवएसणे णिरदो।
सो उवझाओ अप्पा, जदिवर वसहो णमो तस्स॥५३॥

दंसण-णाण-समग्गं-मग्गं मोक्खस्स जो हु चारित्तं।
साधयदि णिच्च सुद्धं, साहू सो मुणी णमो तस्स॥५४॥

जं किंचि वि चिंतंतो, णिरीहवित्ती हवे जदा साहू।
लद्धूण य एयत्तं, तदा हु तं तस्स णिच्चयं झाणं॥५५॥

मा चिट्ठह मा जंपह, मा चिंतह किं वि जेण होई थिरो।
अप्पा अप्पम्मि रओ, इणमेव परं हवे झाणं॥५६॥

तवसुद-वदवं चेदा, झाण-रह-धुरंधरो हवे जम्हा।
तम्हा तत्तियणिरदा, तल्लद्धीए सदा होइ॥५७॥

दव्वसंगहमिणं मुणिणाहा, दोससंचय चुदा सुदपुण्णा।
सोधयंतु तणुसुत्त धरेण, णेमिचंद मुणिणा भणियं जं॥५८॥

इति द्रव्य संग्रह

महामृत्युञ्जय मंत्र

ॐ ह्रां णमो अरिहंताणं ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं ॐ ह्रः णमो लोए सव्व साहूणं मम सर्व ग्रहारिष्टान् निवारय-निवारय अपमृत्युं घातय-घातय सर्व शांतिं कुरु-कुरु स्वाहा।

"श्रीमत्स्वामि समन्तभद्राचार्य-विरचितो"

रत्नकरण्ड-श्रावकाचारः

अथ प्रथमोध्यायः

मङ्गलाचरणम्- (अनुष्टुप छन्दः)

नमः श्री वर्द्धमानाय, निर्द्धूत कलिलात्मने।
सालोकानां त्रिलोकानां, यद्-विद्या दर्पणायते॥१॥
देशयामि समीचीनं, धर्मं कर्मनिबर्-हणम्।
संसार दुःखतः सत्त्वान्, यो धरत्युत्तमे सुखे॥२॥
सद्दृष्टि ज्ञान वृत्तानि, धर्मं धर्मेश्वरा विदुः।
यदीय प्रत्यनीकानि, भवन्ति भव पद्धतिः॥३॥
श्रद्धानं परमार्थाना-माप्तागम तपोभृताम्।
त्रिमूढ़ापोढ-मष्टाङ्गं सम्यग्दर्शन-मस्मयम्॥४॥
आप्तेनोच्छिन्न दोषेण, सर्वज्ञे-नागमेशिना।
भवितव्यं नियोगेन, नान्यथा ह्याप्तता भवेत्॥५॥
क्षुत्पिपासा जरातङ्क-, जन्माऽन्तक-भयस्मयाः।
न रागद्वेष मोहाश्च, यस्याप्तः सः प्रकीर्त्यते॥६॥

परमेष्ठी परंज्योतिर्, विरागो विमलः कृती।
सर्वज्ञोऽनादि मध्यान्तः, सार्वः शास्तोपलाल्यते ॥७॥
अनात्मार्थं बिना रागैः, शास्ता शास्ति सतो हितम्।
ध्वनन् शिल्पिकर स्पर्शान्, मुरजः कि-मपेक्षते ॥८॥
आप्तोपज्ञ-मनुल्लंघ्य-मदृष्टेष्ट विरोधकम्।
तत्त्वोपदेश कृत्सार्वं, शास्त्रं कापथघट्टनम् ॥९॥
विषयाशा-वशातीतो, निरारम्भोऽपरिग्रहः।
ज्ञानध्यान तपो रक्तस्-तपस्वी सः प्रशस्यते ॥१०॥

सम्यक्त्वस्याष्टाङ्गानि

इदमे-वेदृश-मेव, तत्त्वं नाऽन्यन्न चाऽन्यथा।
इत्-यकम्पाय साम्भोवत्, सन्मार्गेऽसंशया रुचिः ॥११॥
कर्मपरवशे सान्ते, दुःखै-रन्तरितोदये।
पाप बीजे सुखेऽनास्था, श्रद्धाऽनाकाङ्क्षणा स्मृता ॥१२॥
स्वभावतोऽशुचौ काये, रत्नत्रय पवित्रिते।
निर्जुगुप्सा गुणप्रीतिर्, मता निर्-विचिकित्सता ॥१३॥
कापथे पथि दुःखानां, कापथस्थेऽप्-यसम्मतिः।
असंपृक्ति-रनुत्कीर्ति-रमूढ़ा दृष्टि-रुच्यते ॥१४॥

स्वयं शुद्धस्य मार्गस्य, बालाशक्त जनाश्रयाम्।
वाच्यतां यत्प्रमार्जन्ति, तद्वदन्त्-युपगूहनम्॥१५॥
दर्शनाच्चरणाद्-वापि, चलतां धर्मवत्सलैः।
प्रत्यवस्थापनं प्राज्ञैः स्थितिकरण-मुच्यते॥१६॥
स्वयूथ्यान्-प्रति सद्भाव, सनाथाऽपेतकैतवा।
प्रतिपत्तिर्-यथायोग्यं, वात्सल्य-मभिलप्यते॥१७॥
अज्ञान्-तिमिर व्याप्ति-मपाकृत्य यथायथम्।
जिनशासन माहात्म्य, प्रकाशः स्यात्प्रभावना॥१८॥
ताव-दञ्जन चौरोऽङ्गे, ततोऽनन्तमती स्मृता।
उद्दायनस्-तृतीयेऽपि, तुरीये रेवती-मता॥१९॥
ततो जिनेन्द्र भक्तोऽन्यो, वारिषेणस्-ततः परः।
विष्णुश्च वज्रनामा च, शेषयोर्-लक्ष्यतां गतौ॥२०॥
नाङ्ग हीनमलं छेत्तुं, दर्शनं जन्म सन्ततिम्।
न हि मन्त्रोऽक्षर न्यूनो, निहन्ति विषवेदनाम्॥२१॥
आपगा-सागर-स्नान-मुच्चयः सिकताश्मनाम्।
गिरि-पातोऽग्नि-पातश्च, लोकमूढं निगद्यते॥२२॥

वरोपलिप्स-याशावान्, राग-द्वेषमलीमसः।
देवता यदुपासीत, देवतामूढ़-मुच्यते॥२३॥
सग्रन्थाऽरम्भ हिंसानां, संसारावर्त वर्तिनाम्।
पाखण्डिनां पुरस्कारो, ज्ञेयं पाखण्डि मोहनम्॥२४॥
ज्ञानं पूजां कुलं जातिं बलमृद्धिं तपो वपुः।
अष्टावाश्रित्य मानित्वं, स्मयमाहुर्-गत स्मयाः॥२५॥
स्मयेन-योऽन्या-नत्येति, धर्मस्थान् गर्विताशयः।
सोऽत्येति धर्ममात्मीयं, न धर्मो धार्मिकैर्-बिना॥२६॥
यदि पापनिरोधोऽन्य, सम्पदा किं प्रयोजनम्।
अथ पापास्रवोऽस्त्यन्य, सम्पदा किं प्रयोजनम्॥२७॥
सम्यग्दर्शन सम्पन्न, मपि मातङ्गदेहजम्।
देवा देवं विदुर्भस्म, गूढ़ाङ्गारान्तरौज-सम्॥२८॥
श्वापि देवोऽपि देवःश्वा, जायते धर्मकिल्विषात्।
काऽपि नाम भवेदन्या, सम्पद्-धर्माच्छरीरिणाम्॥२९॥
भयाशास्नेह लोभाच्च, कुदेवागम लिङ्गिनाम्।
प्रणामं विनयं चैव, न कुर्युः शुद्ध दृष्टयः॥३०॥
दर्शनं ज्ञानचारित्रात्-साधिमान्-मुपाश्नुते।
दर्शनं कर्णधारं तन्-मोक्षमार्गे प्रचक्षते॥३१॥

विद्यावृत्तस्य संभूति, स्थिति वृद्धि फलोदयाः।
न सन्त्-यसति सम्यक्त्वे, बीजाभावे तरो-रिव॥३२॥
गृहस्थो मोक्षमार्गस्थो निर्मोहो नैव मोहवान्।
अनगारो गृही श्रेयान्, निर्मोहो मोहिनो मुनेः॥३३॥
न सम्यक्त्व समं किञ्चित्, त्रैकाल्ये त्रिजगत्यपि।
श्रेयोऽश्रेयश्च मिथ्यात्व-समं नान्यत्-तनूभृताम्॥३४॥

(आर्याछन्दः)

सम्यग्दर्शन शुद्धा, नारकतिर्यङ्नपुंसक स्त्रीत्वानि।
दुष्कुल विकृताल्पायुर्, दरिद्रतां च व्रजन्ति नाप्-यव्रतिकाः॥३५॥
ओजस्तेजो विद्या- वीर्य यशोवृद्धि विजय विभव सनाथाः।
माहाकुला महार्था, मानवतिलका भवन्ति दर्शनपूताः॥३६॥
अष्टगुण पुष्टि तुष्टा, दृष्टिविशिष्टाः प्रकृष्ट शोभाजुष्टाः।
अमराप्सरसां परषदि, चिरं रमन्ते जिनेन्द्रभक्तः स्वर्गे॥३७॥
नवनिधि सप्तद्वय रत्नाऽधीशः, सर्व-भूमि पतयश्चक्रम्।
वर्तयितुं प्रभवन्ति, स्पष्टदृशः क्षत्रमौलि शेखर चरणाः॥३८॥
अमरासुर नरपतिभिर्-यमधर पतिभिश्च नूतपादाम्भोजाः।
दृष्ट्या सुनिश्चितार्था, वृषचक्रधरा भवन्ति लोक शरण्याः॥३९॥

शिव-मजर-मरुजमक्षय मव्याबाधं विशोकभय शङ्कम्।
काष्ठागत सुख विद्या, विभवं विमलं भजन्ति दर्शनशरणाः ॥४०॥

देवेन्द्र चक्र-महिमान-ममेयमानम्
राजेन्द्र चक्रमवनीन्द्र शिरोऽर्चनीयम्।
धर्मेन्द्र चक्र-मधरीकृत सर्व लोकं,
लब्ध्वा शिवंच जिन भक्तिरुपैति भव्यः ॥४१॥

॥ इति प्रथमोऽध्यायः ॥

अथ द्वितीयोऽध्यायः

(आर्या छन्दः)

अन्यून-मनतिरिक्तं, याथातथ्यं बिना च विपरीतात्।
निः सन्देहं वेद, यदाऽहुस्-तज्ज्ञान-मागमिनः ॥४२॥
प्रथमानुयोग-मर्थाख्यानं, चरितं पुराणमपि पुण्यम्।
बोधि समाधि निधानं, बोधति बोधः समीचीनः ॥४३॥
लोकालोक विभक्तेः, युगपरिवृत्तेश्-चतुर्गतीनां च।
आदर्शमिव तथामति-रवैति करणानुयोगं च ॥४४॥
गृहमेध्-यनगाराणं, चारित्रोत्पत्ति वृद्धि रक्षाङ्गम्।
चरणानुयोग समयं, सम्यग्ज्ञानं वि जानाति ॥४५॥

जीवाजीव सुतत्त्वे, पुण्यापुण्ये च बन्धमोक्षौ च।
द्रव्यानुयोग दीपः, श्रुतविद्या लोकमातनुते ॥४६॥

॥ इति द्वितीयोऽध्यायः ॥

अथ तृतीयोऽध्यायः

(आर्या छन्दः)

मोह तिमिरापहरणे, दर्शन लाभा-दवाप्त-संज्ञानः।
रागद्वेष निवृत्त्यै, चरणं प्रतिपद्यते साधुः ॥४७॥
रागद्वेष निवृत्तेर्-हिंसादि निवर्तना कृता भवति।
अनपेक्षितार्थ वृतिः, कः पुरुषः सेवते नृपतीन् ॥४८॥
हिंसा-नृतचौर्येभ्यो, मैथुनसेवा परिग्रहाभ्यां च।
पाप प्रणालिकाभ्यो, विरतिः संज्ञस्य चारित्रम् ॥४९॥
सकलं विकलं चरणं, तत्सकलं सर्वसङ्ग विरतानाम्।
अनगाराणां विकलं, सागाराणां ससङ्गानाम् ॥५०॥
गृहिणां त्रेधा तिष्ठत्-यणु गुण शिक्षाव्रतात्मकं चरणम्।
पञ्च त्रि चतुर्भेदं, त्रयं यथासंख्य-माख्यातम् ॥५१॥
प्राणातिपात वितथ-व्याहार स्तेय काम मूर्च्छेभ्यः।
स्थूलेभ्यः पापेभ्यो, व्युपरमण-मणुव्रतं भवति ॥५२॥

संकल्पात्-कृतकारित-मननाद्योग त्रयस्य चरसत्त्वान्।
न हि नस्ति यत्-तदाहुः, स्थूलवधाद्-विरमणं निपुणाः ॥५३॥
छेदन बन्धन पीडन-मतिभाराऽरोपणं व्यतीचाराः।
आहारवारणापि च, स्थूलवधाद् व्युपरतेः पञ्च ॥५४॥
स्थूलमलीकं न वदति, न परान् वादयति सत्यमपि विपदे।
यत्-तद्-वदन्ति सन्तः, स्थूल-मृषावाद वैरमणम् ॥५५॥
परिवाद-रहोभ्याख्या, पैशून्यं कूटलेखकरणं च।
न्यासाऽपहारितापि च, व्यतिक्रमाः पञ्च सत्यस्य ॥५६॥
निहितं-वा पतितं वा, सुविस्मृतं वा परस्व-मविसृष्टम्।
न हरति यन्-न च दत्ते, त-दकृशचौर्या-दुपारमणम् ॥५७॥
चौरप्रयोग चौरार्थाऽदान-विलोप सदृश सन्मिश्राः।
हीनाधिक विनिमानं, पञ्चाऽस्तेये व्यतीपाताः ॥५८॥
न तु परदारान् गच्छति, न परान् गमयति च पापभीतेर्यत्।
सा परदार निवृत्तिः, स्वदार सन्तोष नामापि ॥५९॥
अन्य विवाहाकरणाऽनङ्ग-क्रीडा विटत्व विपुलतृषाः।
इत्त्वरिकाऽगमनं चाऽस्मरस्य पंच व्यतीचाराः ॥६०॥
धन धान्याऽदिग्रन्थं, परिमाय ततोऽधिकेषु निस्पृहता।
परिमित-परिग्रहः स्या-दिच्छा परिमाण नामापि ॥६१॥

अतिवहनाऽति संग्रह, विस्मय लोभाति भारवहनानि।
परिमित परिग्रहस्य च, विक्षेपाः पञ्च लक्ष्यन्ते॥६२॥
पञ्चाणुव्रत निधयो, निरतिक्रमणाः फलन्ति सुरलोकं।
यत्राऽवधि-रष्टगुणा, दिव्यशरीरं च लभ्यन्ते ॥६३॥
मातङ्गो धनदेवश्च, वारिषेणस्-ततः परः।
नीली जयश्च सम्प्राप्ताः, पूजातिशय-मुत्तमम्॥६४॥
धन श्री सत्यघोषौ च, तापसाऽरक्षकावपि।
उपाख्येयास्तथा श्मश्रु, नवनीतो यथाक्रमम्॥६५॥
मद्य - मांस - मधु - त्यागैः सहाऽणुव्रत पञ्चकम्।
अष्टौ मूलगुणानाहुर् - गृहिणां श्रमणोत्तमाः॥६६॥

॥ इति तृतीयोऽधिकारः ॥

अथ चतुर्थोऽध्यायः

दिग्व्रत-मनर्थ दण्डव्रतं च, भोगोपभोग-परिमाणम्।
अनुबृंहणाद् गुणाना- माख्यान्ति गुणव्रतान्-यार्याः॥६७॥
दिग्वलयं परिगणितं, कृत्त्वाऽतोऽहं बहिर्-न यास्यामि।
इति संकल्पो दिग्व्रत- मामृत्यणु पाप वि निवृत्यै॥६८॥

मकराकर सरि-दटवी- गिरि जनपद योजनानि मर्यादाः।
प्राहुर्-दिशां दशानां, प्रतिसंहारे प्रसिद्धानि॥६९॥
अवधेर्-बहिरणु पाप, प्रतिविरतेर्-दिग्व्रतानि धारयताम्।
पञ्च महाव्रत परिणति, - मणुव्रतानि प्रपद्यन्ते॥७०॥
प्रत्याख्यान तनुत्वान्-मन्दतराश्-चरण मोह परिमाणः।
सत्त्वेन दुरवधारा, महाव्रताय प्रकल्प्यन्ते॥७१॥
पञ्चानां पापानां-हिंसादीनां मनोवचः कायैः।
कृतकारिताऽनुमोदैस्, त्यागस्तु महाव्रतं महताम्॥७२॥
उर्ध्वाऽधस्तात्-तिर्यग्-व्यतिपाताः क्षेत्र वृद्धि-रवधीनाम्।
विस्मरणं दिग्विरते-रत्याशाः पञ्च मन्यन्ते॥७३॥
अभ्यन्तरं दिगवधे-रपार्थिकेभ्यः सपापयोगेभ्यः।
विरमण-मनर्थदण्ड, - व्रतं विदुर्-व्रतधराऽग्रण्यः॥७४॥
पापोपदेश हिंसादानाऽपध्यान दुःश्रुतीः पञ्च।
प्राहुः प्रमादचर्या-मनर्थदण्डा-नदण्डधराः॥७५॥
तिर्यक्क्लेशवणिज्या, हिंसारम्भ प्रलम्भनाऽदीनाम्।
कथा प्रसङ्गः प्रसवः, स्मर्तव्यः पाप - उपदेशः॥७६॥
परशु कृपाण खनित्र ज्वलनाऽयुधश्रृङ्गि श्रृङ्खलाऽदीनाम्।
वधहेतूनां दानं, हिंसादानं ब्रुवन्ति बुधाः॥७७॥

वध बन्धच्छेदादेर्-द्वेषाद्रागाच्च परकलत्राऽदेः।
आध्यान-मपध्यानं, शासति जिनशासने 'विशदाः'॥७८॥
आरम्भ संग साहस-मिथ्यात्व द्वेष राग मद मदनैः।
चेतः कलुषयतां श्रुति-रवधीनां दुःश्रुतिर्-भवति॥७९॥
क्षिति सलिल दहनऽपवनारम्भं, वि फलं वनस्पतिच्छेदं।
सरणं सारणमपि च, प्रमादचर्य्यां प्रभाषन्ते॥८०॥
कन्दर्पं कौत्कुच्यं, मौखर्य-मतिप्रसाधनं पञ्च।
असमीक्ष्य चाऽधिकरणं, व्यतीतयोऽनर्थदण्ड-कृद्-विरतेः॥८१॥
अक्षाऽर्थानां परिसंख्यानं, भोगोपभोगपरिमाणम्।
अर्थवतामप्-यवधौ, रागरतीनां तनूकृतये॥८२॥
भुक्त्वा परिहातव्यो, भोगो भुक्त्वा पुनश्च भोक्तव्यः।
उपभोगोऽशन वसन, प्रभृति पाञ्चेन्द्रियो विषयः॥८३॥
त्रसहति-परिहरणार्थं, क्षौद्रं पिशितं प्रमादपरिहृतये।
मद्यं च वर्जनीयं जिनचरणौ शरण-मुपयातैः॥८४॥
अल्पफल बहुविघातान्, मूलक-मार्द्राणि श्रृङ्गवेराणि।
नवनीत निम्बकुसुमं, कैतक-मित्येवमवहेयम्॥८५॥
य दनिष्टं तद्व्रतयेद्, यच्चानुपसेव्य-मेतदपि जह्यात्।
अभिसन्धिकृता विरतिर्-विषयाद्योग्याद्व्रतं भवति॥८६॥

नियमो-यमश्च विहितौ, द्वेधा भोगोपभोगसंहारात्।
नियमः परिमितकालो, यावज्जीवं यमो ध्रियते॥८७॥
भोजन वाहन शयन-स्नान पवित्राङ्ग रागकुसुमेषु।
ताम्बूल-वसन-भूषण, मन्मथ सङ्गीत-गीतेषु॥८८॥
अद्य दिवा रजनी वा, पक्षो मासस्तथर्तु-रयनं वा।
इतिकाल परिच्छित्त्या, प्रत्याख्यानं भवेन्-नियमः॥८९॥
विषयविषतोऽनुपेक्षा-नुस्मृतिरतिलौल्यमतितृषाऽनुभवो।
भोगोपभोगपरिमा-व्यतिक्रमाः पञ्च कथ्यन्ते॥९०॥

॥ इति चतुर्थोऽध्यायः ॥

अथ पञ्चमोऽध्यायः

देशाऽवकाशिकं वा, सामायिकं प्रोषधोपवासो वा।
वैयावृत्यं शिक्षा-व्रतानि चत्त्वारि शिष्टानि॥९१॥
देशाऽवकाशिकं स्यात्, कालपरिच्छेदनेन देशस्य।
प्रत्यह-मणुव्रतानां, प्रतिसंहारो विशालस्य॥९२॥
गृह हारि ग्रामाणां, क्षेत्र नदी दाव योजनानां च।
देशाऽवकाशिकस्य, स्मरन्ति सीम्नां तपोवृद्धाः॥९३॥
संवत्सर-मृतु रयनं, मास-चतुर्मास-पक्ष-मृक्षं च।
देशाऽवकाशिकस्य, प्राहुः कालावधिं प्राज्ञाः॥९४॥

सीमान्तानां परतः, स्थूलेतर पंच पाप संत्यागात्।
देशाऽवकाशिकेन च, महाव्रतानि प्रसाध्यन्ते ॥९५॥
प्रेषण शब्दाऽनयनं, रूपाभिव्यक्ति पुद्गलक्षेपौ।
देशाऽवकाशिकस्य, व्यपदिश्यन्तेऽत्ययाः पञ्च॥९६॥
आसमयमुक्ति मुक्तं, पञ्चाघाना-मशेषभावेन।
सर्वत्र च सामयिकाः, सामयिकं नाम शंसन्ति॥९७॥
मूर्धरुह मुष्टिवासो-बन्धं पर्य्यंक बन्धनं चापि।
स्थान-मुपवेशनं वा, समयं जानन्ति समयज्ञाः॥९८॥
एकान्ते सामयिकं, निर्व्याक्षेपे वनेषु वास्तुषु च।
चैत्यालयेषु वापि च, परिचेतव्यं प्रसन्न धिया॥९९॥
व्यापार वैमनस्याद्, वि निवृत्त्या-मन्तरात्म वि निवृत्त्या।
सामयिकं बध्नीया, दुपवासे चेकभुक्ते वा॥१००॥
सामयिकं प्रतिदिवसं, यथावदप्-यनलसेन चेतव्यं।
व्रतपञ्चक परिपूरण, कारण-मवधान युक्तेन॥१०१॥
सामयिके सारम्भाः, परिग्रहा नैव सन्ति सर्वेऽपि।
चेलोपसृष्ट मुनिरिव, गृही तदा याति यतिभावम्॥१०२॥
शीतोष्ण दंशमशक, परिषह-मुपसर्ग-मपि च मौनधराः।
सामयिकं प्रतिपन्ना, अधिकुर्वीरन्-नचलयोगाः॥१०३॥

अशरण-मशुभ-मनित्यं, दुःख-मनात्मान-मावसामि भवम्।
मोक्षस्-तद-विपरीतात्-मेति ध्यायन्तु सामयिके॥१०४॥
वाक्काय मानसानां, दुःप्रणिधानान्-यनादर स्मरणे।
सामयिकस्-यातिगमाः, व्यज्यन्ते पञ्च भावेन॥१०५॥
पर्वण्-यष्टम्यां च, ज्ञातव्यः प्रोषधोपवासस्तु।
चतुरभ्य वहार्य्याणां, प्रत्याख्यानं सदेच्छाभिः॥१०६॥
पञ्चानां पापाना-मलंक्रियारम्भ गन्ध पुष्पाणाम्।
स्नानाञ्जन नस्याना-मुपवासे परिहृतिं कुर्य्यात्॥१०७॥
धर्मामृतं सतृष्णः, श्रवणाभ्यां पिवतु पाययेद्-वान्यान्।
ज्ञानध्यानपरो वा, भवतूपवसन्-नतन्द्रालुः॥१०८॥
चतुराऽहार विसर्जन-मुपवासः प्रोषधः सकृद्भुक्तिः।
स प्रोषधोपवासो, यदुपोष्यारम्भ-माचरति॥१०९॥
ग्रहण विसर्गास्तरणान्-यदृष्ट-मृष्टान्-यनादरास्मरणे।
यत्प्रोषधोपवास, व्यतिलङ्घन पञ्चकं तदिदम्॥११०॥
दानं वैयावृत्यं, धर्माय तपोधनाय गुणनिधये।
अनपेक्षितोपचारो-पक्रिय-मगृहाय विभवेन॥१११॥
व्यापत्ति व्यपनोदः, पदयोः संवाहनं च गुणरागात्।
वैयावृत्यं यावा-नुपग्रहोऽन्योऽपि संयमिनाम्॥११२॥

नवपुण्यैः प्रतिपत्तिः, सप्तगुण समाहितेन शुद्धेन।
अप-सूनारम्भाणा - मार्याणा-मिष्यते दानम्॥११३॥
गृहकर्मणापि निचितं, कर्म विमार्ष्टि खलु गृह विमुक्तानाम्।
अतिथिनां प्रतिपूजा, रुधिरमलं धावते वारि॥११४॥
उच्चैर्-गोत्रं प्रणतेर्-भोगो दाना-दुपासनात्पूजा।
भक्तेः सुन्दररूपं, स्तवनात्-कीर्तिस्-तपोनिधिषुः॥११५॥
क्षितिगत-मिव वट बीजं, पात्रगतं दान-मल्पमपि काले।
फलतिच्छाया विभवं, बहुफल-मिष्टं शरीरभृताम्॥११६॥
आहारौषधयोरप्-युपकरणाऽवासयोश्च दानेन।
वैयावृत्यं ब्रुवते, चतुरात्मत्वेन चतुरस्राः॥११७॥
श्रीषेण वृषभसेने, कौण्डेशः सूकरश्च दृष्टान्ताः।
वैयावृत्यस्यैते, चतुर्विकल्पस्य मन्तव्याः॥११८॥
देवाधिदेव चरणे, परिचरणं सर्वदुःख निर्हरणम्।
कामदुहि कामदाहिनि, परिचिनुया-दादृतो नित्यम्॥११९॥
अर्हच्चरण सपर्या - महानुभावं महात्मना-मवदत्।
भेकः प्रमोदमत्ताः, कुसुमे-नैकेन राजगृहे ॥१२०॥

हरि-तपिधान निधाने, ह्यनादरास्मरण मत्सरत्वानि।
वैयावृत्त्यस्यैते, व्यतिक्रमाः पञ्च कथ्यन्ते॥१२१॥

॥ इति पञ्चमोऽध्यायः ॥

अथ षष्ठोऽध्यायः

उपसर्गे दुर्भिक्षे, जरसि रुजायां च निष्प्रतीकारे।
धर्माय तनुविमोचन-माहुः सल्लेखना-मार्याः॥१२२॥
अन्तःक्रियाधिकरणं, तपः फलं सकलदर्शिनः स्तुवते।
तस्माद्यावद्-विभवं, समाधिमरणे प्रयतितव्यम्॥१२३॥
स्नेहं वैरं सङ्गं, परिग्रहं चाऽपहाय शुद्धमनाः।
स्वजनं परिजन-मपि च, क्षान्त्वा क्षमयेत् प्रियैर्-वचनैः॥१२४॥
आलोच्य सर्वमेनः, कृतकारित-मनुमतं च निर्व्याजम्।
आरोपयेन्-महाव्रत-मामरण स्थायि निश्शेषम्॥१२५॥
शोकं भय-मवसादं, क्लेदं कालुष्य-मरतिमपि हित्त्वा।
सत्त्वोत्साह-मुदीर्य च, मनः प्रसाद्यं श्रुतै-रमृतैः॥१२६॥
आहारं परिहाप्य, क्रमशः स्निग्धं विवर्द्धयेत्पानम्।
स्निग्धं च हापयित्त्वा, खरपानं पूरयेत्क्रमशः॥१२७॥

खरपान हापनामपि, कृत्त्वा कृत्त्वोपवास-मपि शक्त्या।
पञ्च नमस्कारमनास्-तनुं त्यजेत्सर्वयत्नेन॥१२८॥
जीवित मरणाशंसे, भयमित्र स्मृति निदान नामानः।
सल्लेखनातिचाराः पञ्च जिनेन्द्रैः समादिष्टाः॥१२९॥
निःश्रेयस-मभ्युदयं, निस्तीरं दुस्तरं सुखाम्बु निधिम्।
निःपिवति पीतधर्मा, सर्वैर् दुःखै-रनालीढः॥१३०॥
जन्म जरामय मरणैः, शोकैर्दुःखैर्-भयैश्च परिमुक्तम्।
निर्वाणं शुद्ध सुखं, निःश्रेयस-मिष्यते नित्यम्॥१३१॥
विद्या-दर्शनशक्ति-स्वास्थ्य प्रह्लाद तृप्ति शुद्धियुजः।
निरतिशया निरवधयो, निःश्रेयस-मावसन्ति सुखम्॥१३२॥
काले कल्पशतेऽपि च, गते शिवानां न विक्रिया लक्ष्या।
उत्पातोऽपि यदि स्यात्, त्रिलोक संभ्रान्ति करण पटुः॥१३३॥
निःश्रेयस-मधिपन्नास्-त्रैलोक्य शिखामणिश्रियं दधते।
निष्किट्टि-कालिकाच्छवि, चामीकर-भासुरात्मानः॥१३४॥
पूजार्थाज्ञैश्वर्यैः, बल परिजन काम भोग भूयिष्ठैः।
अतिशयित भुवन-मद्भुत-मभ्युदयं फलति सद्धर्मः॥१३५॥

॥ इति षष्ठोऽध्यायः ॥

अथ सप्तमोऽध्यायः

श्रावकपदानि देवै-रेकादश देशितानि येषु खलु।
स्वगुणाःपूर्वगुणैः सह, संतिष्ठन्ते क्रम वि वृद्धाः॥१३६॥
सम्यग्दर्शन शुद्धः, संसार शरीर भोग निर्विण्णः।
पञ्च गुरुचरण शरणे, दर्शनिकस्-तत्त्वपथ गृह्यः॥१३७॥
निरतिक्रमण-मणुव्रत-पञ्चकमपि शीलसप्तकं चापि।
धारयते निःशल्यो, योऽसौ व्रतिनां मतो व्रतिकः॥१३८॥
चतुराऽवर्त त्रितयश्, चतुः प्रणामःस्थितो यथाजातः।
सामयिको द्विनिषद्यस्-त्रियोगशुद्धिस्-त्रिसन्ध्य-मभिवन्दी॥१३९॥
पर्वदिनेषु चतुर्ष्वपि, मासे-मासे स्वशक्ति मनिगुह्य।
प्रोषध नियम विधायी, प्रणिधिपरः प्रोषधानशनः॥१४०॥
मूल फल शाक शाखा, करीर कन्द प्रसून बीजानि।
नामानि योऽत्ति सोऽयं, सचित्तविरतो दया मूर्तिः॥१४१॥
अन्नं पानं खाद्यं, लेह्यं नाऽश्नाति यो विभावर्याम्।
स च रात्रिभुक्ति विरतः, सत्त्वेष्-वनुकम्प-मानमनाः॥१४२॥
मल बीजं मलयोनिं, गलन्मलं पूतिगन्धि वीभत्सम्।
पश्यन्नङ्ग-मनङ्गाद्-वि रमति यो ब्रह्मचारी सः॥१४३॥
सेवा कृषि वाणिज्य, प्रमुखा-दारम्भतो व्युपारमति।
प्राणातिपातहेतोर्-योऽसावारम्भ वि-निवृत्तः॥१४४॥

बाह्येषु दशसु वास्तुषु, ममत्व-मुत्सृज्य निर्ममत्त्व-रतः।
स्वस्थः सन्तोषपरः, परिचित् परिग्रहाद्-विरतः॥१४५॥
अनुमति-रारम्भे वा, परिग्रहे ऐहिकेषु कर्मसु वा।
नास्ति खलु यस्य समधी-रनुमति विरतः स मन्तव्यः॥१४६॥
गृहतो मुनिवन-मित्त्वा, गुरूपकण्ठे व्रतानि परिगृह्य।
भैक्ष्याशनस्-तपस्यन्-नुत्कृष्टश्-चेलखण्डधरः॥१४७॥
पापमरातिर्-धर्मो, बन्धुर्-जीवस्य चेति निश्-चिन्वन्।
समयं यदि जानीते, श्रेयो ज्ञाता ध्रुवं भवति॥१४८॥

उपसंहारः

येन स्वयं वीतकलङ्क विद्या, दृष्टि क्रिया रत्नकरण्डभावम्।
नीतस्त-मायाति पतीच्छयेव, सर्वार्थसिद्धिस्-त्रिषु-विष्टपेषु॥१४९॥

सुखयतु सुखभूमिः कामिनं कामिनीव,
सुतमिव जननी मां शुद्धशीला भुनक्तु।
कुलमिव गुणभूषा कन्यका संपुनीताज्-,
जिनपति-पदपद्म प्रेक्षिणी दृष्टि लक्ष्मीः॥१५०॥

॥ इति सप्तमोऽध्यायः ॥

वरं सर्प मुखेवासो, वरं च विष भक्षणम्।
वरं अग्नि जले पातो, मिथ्यात्वेन न जीवितम॥

ऋषिमण्डल स्तोत्र (संस्कृत)

श्री गुणनंदि मुनीन्द्र विरचित

आद्यंताऽक्षर-संलक्ष्य-मक्षरं व्याप्य यत्स्थितम्।
अग्निज्वालासमं नादं, बिन्दुरेखा समन्वितम्।।१।।
अग्निज्वाला समाक्रान्तं, मनोमल विशोधनं।
दैदीप्यमान हृत्पद्मे, तत्पदं नौमि निर्मलं।।२।। युग्मं।
ॐ नमोऽर्हद्भ्यः ईशेभ्यः, ॐ सिद्धेभ्यो नमो नमः।
ॐ नमः सर्वसूरिभ्यः, उपाध्यायेभ्यः ॐ नमः।।३।।
ॐ नमः सर्वसाधुभ्यः, तत्त्वदृष्टिभ्य ॐ नमः।
ॐ नमः शुद्धबोधेभ्यश्-चारित्रेभ्यो नमो नमः।।४।। युग्मं।
श्रेयसेऽस्तु श्रियऽस्त्वेत-दर्हदाद्यष्टकं शुभं।
स्थानेष्-वष्टसुसंन्यस्तं, पृथग्बीज समन्वितम्।।५।।
आद्यं पदं शिरो रक्षेत्, परं रक्षतु मस्तकं।
तृतीय रक्षेन्नेत्रे द्वे, तुर्यं रक्षेच्च नासिकां।।६।।
पंचमं तु मुखं रक्षेत्, षष्ठं रक्षतु घटिकां।
सप्तमं रक्षेन्-नाभ्यन्तं, पादांतं चाष्टमं पुनः।।७।। युग्मं।

मंत्र बनाने का विधान

पूर्वं प्रणवतः सांतः, सरेफो द्वि-त्रि-पंचषान्।
सप्ताऽष्टदशसूर्यांकान्, श्रितो बिन्दुस्वरान् पृथक्।८।
पूज्यनामाऽक्षराद्यस्तु, पंचदर्शन-बोधकं।
चारित्रेभ्यो नमो मध्ये, ह्रीं सांतस-मलंकृतं।९।

ॐ ह्रां ह्रिं ह्रुं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रः असिआउसा सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो ह्रीं नमः।

इति ऋषिमंडल स्तवनस्य यंत्रस्य मूलमंत्रः

आराधकस्यशुभफलदो,नवबीजाक्षरयुतस्तुतःसिद्ध।
अष्टादशशुद्धाक्षर, मंत्रोयं जाप्यएववरभक्त्या ॥१०॥

जंबूवृक्षधरो द्वीपः क्षीरोदधि-समावृतः।
अर्हदाद्यष्टकै-रष्ट-काष्ठाऽधिष्ठै-रलंकृतः।।११।।

तन्मध्ये संगतो मेरुः, कूटलक्षै-रलंकृतः।
उच्चै-रुच्चैस्-तरस्तारः,तारामण्डल-मण्डितः।।१२।।

तस्योपरि सकारांतं, बीजमध्यास्य सर्वगं।
नमामिबिम्बमार्हंत्यं,ललाटस्थंनिरञ्जनं।।१३।।विशेषकं।

अक्षयं निर्मलं शांतं, बहुलं जाड्यतोज्झितं।
निरीहं निरहंकारं, सारं सारतरं घनं।।१४।।

अनुश्रुतं शुभं स्फीतं, सात्त्विकं राजसंमतं।
तामसं विरसं बुद्धं, तैजसं शर्वरीसमं।।१५।।

साकारं च निराकारं, सरसं विरसं परं।
परापरं परातीतं, परं पर-परापरं।।१६।।

सकलं निष्कलं तुष्टं, निर्भृतं भ्रान्तिवर्जितं।
निरञ्जनं निराकांक्षं, निर्लेपं वीतसंशयं।।१७।।

ब्रह्माण-मीश्वरं बुद्धं, शुद्धं सिद्ध-मभंगुरं।
ज्योतीरूपं महादेवं, लोकालोक प्रकाशकं।।१८।। कुलकं।

अर्हदाख्यः सवर्णान्तः, सरेफो बिन्दुमण्डितः।
तूर्यस्वर समायुक्तो, बहुध्यानादिमालितः।।१९।।

एकवर्णं द्विवर्णं च, त्रिवर्णं तुर्यवर्णकं।
पंचवर्णं महावर्णं, सपरं च परापरं।।२०।। युग्मं।

अस्मिन्-बीजे स्थिताःसर्वे, वृष भाद्याजिनोत्तमाः।
वर्णैर्निजैर्निजैर्-युक्ता, ध्यातव्यास्तत्र संगताः।।२१।।

नादश्-चन्द्रसमाकारो, बिंदुर्-नीलसमप्रभः।
कलाऽरुणसमासांतः, स्वर्णाभः सर्वतोमुखः।।२२।।
शिरः संलीन ई कारो, विलीनो वर्णतः स्मृतः।
वर्णाऽनुसारि संलीनं, तीर्थकृन्मंडलं नमः।।२३।। युग्मं।

तीर्थंकरों की स्थापना

चंद्रप्रभपुष्पदन्तौ, नादस्थितिसमाश्रितौ।
बिंदुमध्यगतौ नेमि, सुव्रतौ जिनसत्तमौ।।२४।।
पद्मप्रभवासुपूज्यौ, कलापदमधिश्रितौ।
शिरईस्थितसंलीनौ, सुपार्श्वे पार्श्वजिनोत्तमौ।।२५।।
शेषास्तीर्थंकराः सर्वे, ह्र स्थाने नियोजिताः।
मायाबीजाक्षरं प्राप्ताश्-चतुर्विंशति-रर्हतां।।२६।।
गतरागद्वेषमोहाः सर्वपापविवर्जिताः।
सर्वदा सर्वलोकेषु, ते भवंतु जिनोत्तमाः।।२७।।कलापकं।

आत्मारक्षा की भावना

देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु पन्नगाः।।२८।।
देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु नागिनीः।।२९।।

देवदेवस्य यच्चक्रं , तस्य चक्रस्य या विभाः ।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु गोनसाः ।।३० ।।
देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः ।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु वृश्चिकाः ।।३१ ।।
देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः ।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु काकिनी ।।३२ ।।
देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः ।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु डाकिनी ।।३३ ।।
देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः ।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु साकिनी ।।३४ ।।
देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः ।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु राकिनी ।।३५ ।।
देवदेवस्य यच्चक्रं , तस्य चक्रस्य या विभाः ।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु लाकिनी ।।३६ ।।
देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः ।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु शाकिनी ।।३७ ।।
देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः ।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु हाकिनी ।।३८ ।।

देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु भैरवाः।।३९।।
देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु राक्षसाः।।४०।।
देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु व्यन्तराः।।४१।।
देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु भेकसाः।।४२।।
देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु लीनसाः।।४३।।
देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु ते ग्रहाः।।४४।।
देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु तस्कराः।।४५।।
देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु वह्नयः।।४६।।
देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु शृंगिणः।।४७।।

देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु दंष्ट्रिणः।।४८।।
देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु रेलपाः।।४९।।
देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु पक्षिणः।।५०।।
देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु मुद्गलाः।।५१।।
देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु जृम्भकाः।५२।।
देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु तोयदाः।।५३।।
देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु सिंहकाः।।५४।।
देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु शूकराः।।५५।।

देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु चित्रकाः।।५६।।

देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु हस्तिनः।।५७।।

देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु भूमिपाः।।५८।।

देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु शत्रवः।।५९।।

देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु ग्रामिणः।।६०।।

देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु दुर्जनाः।।६१।।

देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादितसर्वांगं, मां मा हिंसन्तु व्याधयः।।६२।।

देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभाः।
तयाच्छादित सर्वांगं, मां मा हिंसन्तु सर्वतः।।६३।।

श्री गौतमस्य या मुद्रा, तस्या या भुवि लब्धयः।
ताभि-रभ्यधिकं ज्योति-रर्हः सर्वनिधीश्वरः।।६४।।
पाताल वासिनो देवा, देवा भूपीठवासिनः।
स्वःस्वर्गवासिनो देवा, सर्वे रक्षंतु मामितः।।६५।।
येऽवधि लब्धयो ये तु परमावधि लब्धयः।
ते सर्वे मुनयो दिव्या मां संरक्षन्तु सर्वतः।।६६।।
भवन व्यंतर ज्योतिष्क कल्पेंद्रेभ्यो नमो नमः।
ये श्रुताऽवधयो देशाऽवधयो योगिनामकाः।।६७।।
परमाऽवधयस्-सर्वाऽवधयो ये दिगम्बराः।
बुद्धिऋद्धियुतास्-सर्वौषधिऋद्धिश्रिताश्च ये।।६८।।
अनंतबलऋद्ध्याप्ता ये तप्ततपसोन्नताः।
रसर्द्धिर्युजो विक्रियर्द्धिभाजः क्षेत्रार्धिसंगताः।।६९।।
तपः सामर्थ्यसंप्राप्ताऽक्षीणसद्ममहानसाः।
एतेभ्यो यतिनाथेभ्यो नूतेभ्योपास्तवाऽदिभिः।।७०।।
तीर्णजन्मार्णवेभ्यस्तद्-दृगृद्धिचारित्रवाग्भःवैः।
भव्येशेभ्यो भदंतेभ्यो नमोभीष्टपदाप्तये।।७१।।

ॐ श्री ह्रीकीर्तिधृतिर्लक्ष्मी गौरी चण्डी सरस्वती।
जयाम्बा विजया क्लिन्नाऽजिता नित्या मदद्रवा।।७२।।
कामांगा कामवाणा च सानंदा नंदमालिनी।
माया मायाविनी रौद्री कला काली कलिप्रिया।।७३।।
एताः सर्वा महादेव्यो वर्तन्ते या जगत्त्रये।
मम सर्वाः प्रयच्छंतु कान्तिं लक्ष्मीं धृतिं मतिं।।७४।।
दुर्जनाः भूतवेतालाः पिशाचाः मुद्गलास्तथा।
ते सर्वे उपशाम्यंतु देवदेवप्रभावतः।।७५।। दिव्यो
गोप्यः सुदुष्प्राप्यः श्रीऋषिमण्डलस्तवः।
भाषितस्तीर्थनाथेन जगत्त्राणकृतोऽनघः।।७६।।
रणे राजकुले वह्नौ जले दुर्गे गजे हरौ।
श्मशाने विपिने घोरे स्मृतो रक्षति मानवं।।७७।।
राज्यभ्रष्टाः निजां राज्यं पदभ्रष्टा निजं पदं।
लक्ष्मीभ्रष्टाः निजं लक्ष्मीं प्राप्नुवन्ति न संशयः।।७८।।
भार्यार्थी लभते भार्यां पुत्रार्थी लभते सुतं।
धनार्थी लभते वित्तं नरः स्मरण मात्रतः।।७९।।

स्वर्णे रूप्येऽथवा कांस्ये लिखित्वा यस्तु पूजयेत्।
तस्यैवेष्टमहासिद्धिर्गृहे वसति शाश्वती।।८०।।

भूर्जपत्रे लिखित्वेदं गलके मूर्ध्नि वा भुजे।
धारितः सर्वदा दिव्यं सर्वभीतिविनाशिनं।।८१।।

भूतैः प्रैतेर्ग्रहैर्यक्षैः पिशाचै-र्मुद्गलैस्तथा।
वातपित्तकफोद्रेकैर्मुच्यते नात्र संशयः।।८२।।

भूर्भूवः स्वस्त्रयीपीठवर्त्तिनः शाश्वता जिनाः।
तैः स्तुतैर्वन्दितैर्दृष्टैर्यत्फलं तत्फलं स्मृतेः।।८३।।

एतद्गोप्यं महास्तोत्रं न देये यस्य कस्यचित्।
मिथ्यात्ववासिनो देयं बाल-हत्या पदे-पदे।।८४।।

आचाम्लादितपः कृत्त्वा पूजयित्वा जिनाबलिं।
अष्टसाहस्त्रिको जाप्यः कार्यस्तत्सिद्धिहेतवे।।८५।।

शतमष्टोत्तरं प्रातः ये पठंति दिने-दिने।
तेषां व्याधयो देहे प्रभवंति च संशयः।।८६।।

अष्टामासावधिं यावत् प्रातः प्रातस्तु यः पठेत्।
स्तोत्रमेतन्महातेज अर्हद्देवं स पश्यति।।८७।।

दृष्टे सत्यार्हते बिंबे भवे सप्तमके ध्रुवं।
पदं प्राप्नोति विश्रस्तं परमानंदसंपदा।।८८।। युग्मं।

विश्ववंद्यो भवेद् ध्याता कल्याणानि च सोश्नुते।
गत्त्वा स्थानं परं सोऽपि भूयस्तु न निवर्तते।।८९।।

इदं स्तोत्रं महास्तोत्रं स्तवनामुत्तमं परं।
पठनात्स्मरणाज्जाप्यात् सर्वदोषैर्विमुच्यते।।९०।।

जाप्य - ॐ ह्लांह्लिंह्लुंह्लूंह्लेंह्लैंह्लोंह्लौंह्लः असिआउसा सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रेभ्यो ह्लीं नमः

॥ इति ऋषि मण्डल स्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

इंदसद वंदियाणं, तिहुअण हिद मधुर विसद वक्काणं।
अंतातीद गुणाणं, णमो जिणाणं जिद भवाणं॥१॥

सम्मदद्दंसण णाणं, चरियं तवो अणंत विरियं च।
पञ्चाचार धराणां, णमो विशद गुरु आइरियाणं॥२॥

नमः जिनेशं श्री शांति नाथं, अनन्तसिद्धं सर्वज्ञ देव।
उपसर्ग जेता श्री पार्श्ववीरं, नमो नमः त्व चरणारविन्दं॥३॥

नमो नमः श्री आचार्य देव, प्रज्ञा श्रमण गुरुवर बालयोगी।
आचार धारी आचार दाता, नमो नमः त्व चरणारविन्दं॥४॥

अथ श्री वज्रपंजर स्तोत्र

परमेष्ठी नमस्कारं, सारं नव-पदात्मकं।
आत्मरक्षा करं मंत्रं, पंजरं सस्मराम्यहं॥१॥
ॐ णमो अरिहंताणं, शिर स्कंध शिर संस्थितम्।
ॐ णमो सिद्धाणं, मुखे मुख पटंवरम्॥२॥
ॐ णमो आयरियाणं, अंग रक्षाति सायिणीम्।
ॐ णमो उवज्झायाणं, आयुधं हस्तयोर्दृढ़म्॥३॥
ॐ णमो लोए सव्वसाहूणं, मोचके पादयोः शुभे।
एसो पंच णमोयारो, शिववज्रमयी तले॥४॥
सव्व पावप्पणासणो, शिवज्रो वज्रमयो मही।
मंगलाणं च सव्वेसिं, वीतरागादि खातका॥५॥
स्वाहा पंच पदं ज्ञेयं, पढमं हवइ मंगलम्।
वज्रो परिवज्रमयं ज्ञेयं, विधानं देह रक्षणे॥६॥
महाप्रभाव रक्षेयं, क्षुद्रोपद्रव नाशिनी।
परमेष्ठि पदोद्धुत्ता, कथितापूर्व सूरिभिः॥७॥
यश्चैवं कुरुते रक्षा, परमेष्ठि पदैः सदा।
तस्य तस्माद् भयं व्याधि-राधिश्चापि कदापि न॥८॥

॥ इति वज्रपंजर स्तोत्रम् ॥

उवसग्गहरं स्तोत्र

पाठ करने के पहले सात बार बोलें
"श्री भद्रबाहुप्रसादात् एष योगः फलतु"।

उवसग्गहरं पासं-पासं वंदामि कम्मघण मुक्कं।
विसहर-विस-निन्नासं, मंगल कल्लाण आवासं।।१।।
विसहर फुलिंगमंतं, कण्ठे धारेदि जो सया मणुओ।
तस्स गह रोय मारी, दुट्ठ जरा जंति उवसामं।।२।।
चिट्ठदु दूरे मंतो, तुज्झ पणामो वि बहुफलो होदी।
नर तिरिएसु वि जीवा, पावंति न दुक्ख दोगच्चं।।३।।
तुह सम्मत्ते लद्धे, चिंतामणि कप्पपावय सरिसे।
पावंति अविग्घेणं, जीवा अयरामरं ठाणं।।४।।
इह संथुअदो महायश!, भत्तिब्भर णिब्भरेण हिदयेण।
ता देव! दिज्ज बोहिं, भवे भवे पास! जिणचंदं!।।५।।
ॐ अमरतरु-कामधेणु-चिंतामणि-कामकुंभमादिया।
सिरि-पासणाह-सेवाग्-गहणे सव्वे वि दासत्तं।।६।।
उवसग्गहर त्थोत्तं, कादूणं जेण संघ कल्लाणं।
करुणायरेण विहिदं, स भद्रबाहु गुरु जयदु।।७।।
ॐ ह्रीं श्रीं ऐं तुह दंसणेण, सामिय पणासेइ रोग सोग दोहग्गं।
कप्पतरुमिव जायइ, ॐ तुह दंसणेण समफल हेउ स्वाहा।।८।।

जाप

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्रः श्रीं ह्रीं कलिकुण्ड दण्ड स्वामिन्।
सर्व रक्षाधिपतये मम रक्षां कुरु कुरु स्वाहा।।

जैन रक्षा स्तोत्रम्

(अनुष्टुप छन्दः)

श्री जिनं भक्तितोनत्त्वा, त्रैलोक्याऽह्लादकारकम्।
जैनरक्षा-महं वक्ष्ये, देहिनां देह रक्षकम्॥१॥

ॐ ह्रीं आदीश्वरः पातु, शिरसि सर्वदा मम।
ॐ ह्रीं श्री अजितो देवो, भालं रक्षतु सर्वदा॥२॥

नेत्रयोः रक्षको भूयात्, ॐ आं क्रौं संभवो जिनाः।
रक्षेद् घ्राणेन्द्रिये, ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ब्लूं अभिनन्दनः॥३॥

सुजिह्वे सुमुखे पातु, सुमतिः प्रणवान्वितः।
कर्णयोः पातु ॐ ह्रीं श्रीं रक्तः पद्मप्रभः प्रभुः॥४॥

सुपार्श्वः सप्तमः पातु, ग्रीवामां ह्रीं श्रियाऽश्रितः।
पातु चन्द्रप्रभः श्रीं ह्रीं क्रों पूर्व स्कन्धयोर्मम॥५॥

सुविधि शीतलो नाथो! रक्षको करपंकजे।
ॐ क्षां क्षीं क्षूं युतौ कामं चिदानन्दमयौ शुभौ॥६॥

श्रेयांसो वासुपूज्यश्च हृदये सदयं सदा।
भूयाद् रक्षाकरो वारं-वारं श्री प्रणवाऽन्वितः॥७॥

विमलोऽनन्तनाथश्च मायाबीज समन्वितौ ।
उदरे सुन्दरे शश्वद् रक्षायाः कारकौ मतौ ॥८॥
श्री धर्मशान्तिनाथौ च नाभि पंके रुहे सताम् ।
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं हं संयुक्तौ पुनः पातां पुनः-पुनः ॥९॥
श्री कुन्थु-अरनाथौ तु सुगुरु सुकटीतटे ।
भवेतामवकौ भूमि ॐ ह्रीं क्लीं सहितौ जिनौ ॥१०॥
मे पातां चारू जंघाया श्री मल्लिमुनिसुव्रतौ ।
ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ततो ह्रः ब्लूं क्लीं श्री युक्तौ कृपाकरौ ॥११॥
यत्नतो रक्षकौ जानू श्री नमिनेमिनाथकौ ।
राजराजमती मुक्तौ प्रणवाक्षरपूर्वकौ ॥१२॥
श्री पार्श्वेश महावीरौ पातां मां ह्रौं सुमानदौ ।
ॐ ह्रीं श्रीं च तथा भूं क्लीं ह्रां ह्रः श्रां श्रः युतौ जिनौ ॥१३॥
रक्षाकरा यथास्थाने भवन्तु जिननायकाः ।
कर्मक्षयकरा ध्याता भीतानां भयवारकाः ॥१४॥
जैन रक्षां लिखित्वेमां मस्तके यस्तु धारयेत् ।
रविवद् दीप्यते लोके श्रीमान् विश्वप्रियो भवेत् ॥१५॥
तस्योग्ररोगवेतालाः शाकिनी भूतराक्षसाः ।
एते दोषा न दृष्यन्ते रक्षकाश्च भवन्त्यमी ॥१६॥

अग्नि सर्प भयोत्पाता भूपालाश्चोर विग्रहाः।
एते दोषा प्रणश्यन्ति रक्षकाश्च भवन्तयमी॥१७॥

जैन रक्षामिमां भक्त्या प्रातरुत्थाय यः पठेत्।
इच्छितान् लभते कामान् सम्पदश्च पदे-पदे॥१८॥

श्रावणे शुक्लेऽष्टम्यां प्रारम्भ स्तोत्रमुत्तमम्।
अभिषेकं जिनेन्द्राणां कुर्याच्च दिवसाष्टकम्।॥१९॥

ब्रह्मचर्य विधातव्य-मेक भुक्तं तथैव च।
शुचिता शुभ्रवस्त्रेण वालंकारेण शोभनम्।॥२०॥

नरो वापि तथा नारी शुद्ध भावयुतोऽपि सन्।
दिनं-दिनं तथा कुर्यात् जाप्य सर्वार्थसिद्धये।॥२१॥

एकायां तु विधातव्यम् उद्यापन महोत्सवम्।
पूजाविधि समायुक्तं कर्तव्यसज्जनैर्जनै।॥२२॥

*****

इदं जैन रक्षा स्तोत्रम्, विशद भावने् यः पठेत्।
ऋद्धि सिद्धि सुख प्राप्तं, मोक्ष सौख्य प्राप्तस् तथा।।

ॐ ह्रीं क्लीं अर्हं श्री चतुर्विंशति जिनाय नमः मम सर्व रक्ष रक्ष कुरु-कुरु स्वाहा।।

॥ इति जैन रक्षा स्तोत्रम्॥

*****

लघु सहस्त्रनाम स्तोत्रम्

(अनुष्टुप छन्दः)

नमस्त्रैलोक्य-नाथाय, सर्वज्ञाय महात्मने।
वक्ष्ये तस्यैव नामानि, मोक्ष-सौख्याभिलाषये॥1॥
निर्मलःशाश्वतो शुद्धो, निर्विकारो निरामयः।
निःशरीरो निरातङ्को, शुद्धः सूक्ष्मो निरञ्जनः॥2॥
निष्कलङ्को निरालम्बो, निर्ममो निर्मलोत्तमः।
निर्भयो निरहंकारो, निर्विकारो निरुत्क्रयः॥3॥
निर्दोषो निरुजःशान्तो, निर्भयो निर्ममः शिवः।
निस्तरङ्गो निराकारौ, निष्कर्मों निस्कलः प्रभु॥4॥
निर्वादो निरुपज्ञानी निरागो निर्धनो जिनः।
निःशब्दो प्रतिभाश्रेष्ठो, उत्कृष्टोज्ञान-गोचरः॥5॥
निःसंगो प्राप्त कैवल्यो, नैष्ठिकःशब्द वर्जितः।
अनघो महापूतात्मा, जगत-शिखर-शेखरः॥6॥
निःशब्दो गुणसम्पन्नः, पापताप-प्रणाशनः।
सोपयोगो शुभं प्राप्तः, कर्मद्योत-वलावहः॥7॥
अनिंद्यो विश्वनाथश्च, अजो अनुपमो भवः।
अप्रमेयो जगन्नाथः बोधरूपो जितात्मकः॥9॥
अव्ययो सकलाराध्यो, निष्पन्नो ज्ञानलोचनः।
अछेद्योनिर्मलोऽनित्यः, सर्व-संकल्प वर्जितः॥10॥

अजयो सर्वतोभद्रः, निःकषायो भवान्तकः।
विश्वनाथः स्वयंबुद्ध, वीतरागो जिनेश्वरः॥11॥
अन्तको सहजानन्द, आवागमन गोचरः।
असाध्य शुद्ध चैतन्यः, कर्मनोकर्म-वर्जितः॥12॥
अन्तको विमलज्ञानी, निष्पृहो निःप्रकाशकः।
कर्मजित महात्मानम्, लोकत्रय-शिरोमणिः॥13॥
अव्याबाधो वरः शामी, विश्ववेदी पितामहः।
सर्वभूत-हितोदेवः सर्वलोक-शरण्यकः॥14॥
आनन्दरूपो चैतन्यो, भगवन् त्रिजगद् गुरुः।
अनन्तानन्तधौशक्तिस्-तूताव्यक्तांव्यायात्मकः॥15॥
अष्टकर्म-विनिर्मुक्तो, सप्तधातु-विवर्जितः।
गारवादयस्त्रयो दूर, सर्वज्ञानादि-संयुतः॥16॥
अभवः प्राप्त-कैवल्यो, निर्वाणो निरुपेक्षिकः।
निष्कलो केवलज्ञानी, मुक्तिसौख्य-प्रदायिकः॥17॥
अनामयो महाराध्यो, वरदो ज्ञान पावनः।
सर्वोशाश्वत सुखावाप्तः, जिनेन्द्रो मुनि संस्तुतः॥18॥
अणुनः परमज्ञानी, विश्वतत्त्व-प्रकाशकः।
प्रबुद्धो भगवान्नाथ!, प्रशस्त-पुण्यकारकः॥19॥
शंकरः सुगतो रुद्रः, सर्वज्ञो मदनान्तकः।
ईश्वरो भुवनाधीशो, सचितो पुरुषोत्तमः॥20॥
सद्योजात महात्मानं, विमुक्तो मुक्तिवल्लभः।
योगीन्द्रोऽनादि संसिद्धो, निरीहो ज्ञानगोचरः॥21॥

सदाशिवः चतुर्वक्त्र, सत्य सौख्य त्रिपुराऽन्तकः।
त्रिनेत्रस्-त्रिजगत्पूज्यः, अष्टमूर्तिः कल्याणकः ॥22॥
सर्वसाधु जनैर्-वंद्यः, सर्वपाप विवर्जितः।
सर्वदेवाधिको देवः, सर्वभूत-हितङ्करः ॥23॥
सर्वसाधु स्वयंवेद्यो, प्रसिद्धो पापनाशनः।
चिन्मात्रः चिदानंन्दः, चैतन्यो चैतवैभवः ॥24॥
सकलाऽतिशयो देवः, मुक्तिस्थो महतामहः।
मुक्ति कार्याय सन्तुष्टो, निरागो परमेश्वरः ॥25॥
महादेवो महावीरो, महा-मोह-विनाशकः।
महाभावो महादासीः, महामुक्ति प्रदायकः ॥26॥
महाज्ञानी महायोगी, महातपो महात्मयः।
महाधिको महावीर्यो, महापतिः पदस्थितः ॥27॥
महापूज्यो महावन्द्यौ, महाविघ्न-विनाशकः।
महासौख्यो महापुंसो, महामोहमदच्युतः ॥28॥
मुक्तामुक्तिर्निरोधी च, एकानैक विनिश्चलः।
सर्वदः-विनिर्मुक्तो, सर्वलोक आराधकः ॥29॥
महासूरो महाधीरो, महादुःख विनाशकः।
महामुक्तो महावीरो, महाहृदो महागुरुः ॥30॥
निर्मोही मारविध्वंसी, निष्कामो विषयच्युतः।
भगवन्तो गतभ्रान्तो, शान्ति कल्याणकारकः ॥31॥

परमाऽत्मा परमज्योतिः, परमेष्ठी परमेश्वरः।
परमाऽत्मा परमानन्द, परः परम आत्मकः ॥32॥
भूताऽनंद विज्ञानः, साक्षात् निर्वाण संस्तुतः।
नाकृतिर्नाक्षरोऽवर्णोः, व्योमरूवौ जिताऽत्मकः ॥33॥
व्यक्ताऽव्यक्त-रसद्बोधः, संसारच्छेदकारकः।
नरवन्द्यो महाराध्य, कर्मजित धर्मनायकः ॥34॥
बोधयन्-सुजगद्-वन्द्यो, विश्वाऽत्मानरकांतकः।
स्वयम्भू भव्यपूज्यात्मा, पुनीतोविभवस्तुतः ॥35॥
वर्णातीतो महातीतो, रूपातीतो निरंजनः।
अनन्तज्ञान सम्पन्नः, देवदेवो! सनायकः ॥36॥
वरेण्य भवविध्वंशी, योगिनां ज्ञानगोचरः।
जन्ममृत्युजरातंको, सर्वविघ्नहरो हराः ॥37॥
विश्वदृक् भव्यसम्बन्ध, पवित्रो गुणसागरः।
प्रसन्नः परमाराध्यो, लोकालोक प्रकाशकः ॥38॥
रत्नगर्भो जगत्स्वामी, इन्द्रवन्द्य सुराऽर्चितः।
निःप्रपंचो निरातंको, निःशेष क्लेशनाशकः ॥39॥
लोकेशो लोक संसेव्यो, लोकालोक प्रकाशकः।
लोकोत्तमो नृलोकेशो, लोकाग्रशिखर स्थितः ॥40॥
नामाष्टक सहस्राणि, ये पठन्ति पुनः-पुनः।
ते निर्वाणपदयांति, मुच्यन्ते नात्र संशयः ॥41॥

~~~
~~~

श्री पार्श्वनाथ स्तोत्रम्

अजर-ममर-सारं मार-दुर्वार-वारं,
गलित-बहुलखेदं सर्वतत्त्वानुवेदम्।
कमठ-मदविदारं भूरिसिद्धान्तसारं,
विगतवृजिनयूथं नौम्यहं पार्श्वनाथम्॥१॥
प्रहतमदनचापं केवलज्ञानरूपं,
मरकतमणिदेहं सौम्यभावानुगेहम्।
सुचरितगुणपूरं पञ्चसंसारदूरं,
विगतवृजिनयूथं नौम्यहं पार्श्वनाथम्॥२॥
सकल-सुजनभूपं धौतनिःशेषतापं,
भवगहनकुठारं सर्वदुःखापहारम्।
अतुलित-तनुकाशं घात्यघातिप्रणाशं,
विगतवृजिनयूथं नौम्यहं पार्श्वनाथम्॥३॥
असदृशमहिमानं पूज्यमानं नमानं,
त्रिभुवनजनतेशं क्लेशवल्लीहुताशम्।
धृतसुमनसमीशं शुद्धबोधप्रकाशं,
विगतवृजिनयूथं नौम्यहं पार्श्वनाथम्॥४॥
गतमदकरमोहं दिव्यनिर्घोषवाहं,
विगततिमिरजालं मोहमल्लप्रमल्लम्।

विलसद-मल-कायं मुक्तिसामस्त्यगेहं,
विगतवृजिनयूथं नौम्यहं पार्श्वनाथम्॥५॥
सुभगवृषभराजं योगिनां ध्यानपुञ्जं,
त्रुटितजननबन्धं साधुलोकप्रबोधम्।
सपदि गलितमोहं भ्रान्तमेधाविपक्षं,
विगतवृजिनयूथं नौम्यहं पार्श्वनाथम्॥६॥
अनुपम-मुखमूर्तिं प्रातिहार्याष्टपूर्तिं,
खचरनरसुतोषं पञ्चकल्याणकोषम्।
धृतफणिमणिदीपं सर्वजीवानुकम्पं,
विगतवृजिनयूथं नौम्यहं पार्श्वनाथम्॥७॥
अमरगुणनृपालं किन्नरीनादशालं,
फणिपतिकृतसेवं देवराजाधिदेवम्।
असम-बल-निवासं मुक्तिकान्ता-विलासं,
विगतवृजिनयूथं नौम्यहं पार्श्वनाथम्॥८॥
मदन-मदहरश्री-वीरसेनस्य शिष्यैः,
सुभग-वचन-पूरैः राजसेनैः प्रणीतम्।
जपति पठति नित्यं पार्श्वनाथाष्टकं यः,
स भवति शिवभूपो मुक्तिसीमन्तिनीशः॥९॥
पार्श्वमणिवत् यः स्तोत्र 'विशद' शांति सौख्यदाः।
प्रातरेव पठेत सः, ऋद्धि सिद्धि सुख प्रदः॥१०॥

समस्तघातिमर्द्दनं, सुरेन्द्रवृन्दमुज्जवलं।
नवीनमालतीदलैर्, यजामि मुक्तिसिद्धये।। १।।
गुणाष्टकाद्यलंकृतं, समस्तसिद्धनायकम्।
नमेरुपारिजातकैर्-यजामि मुक्तिसिद्धये।। २।।
अलंघ्यमुत्तमाधिपं, दयालुसूरिवृन्दकम्।।
प्रफुल्लमल्लिपुष्पकैर्-यजामि मुक्तिसिद्धये।। ३।।
समस्त शास्त्रदेशकं, चरित्रपात्रदेशकम्।
विकासि केतकीदलैर्-यजामि मुक्तिसिद्धये।। ४।।
चिदर्थभावनापरं, सुसाधुसाधुवन्दकं।
सुवर्णवर्णचम्पकैर्-यजामि मुक्तिसिद्धये।। ५।।
सुधर्म सौख्यदायकं, अभीष्टफल प्रदायकं।
कनेर पुष्पसद्यकैर्-यजामि मुक्तिसिद्धये।। ६।।
अरिष्ट कर्म नाशकम्-ज्ञान विशद भाषकम्।
कदम्बकुन्द पुष्पकैर्-यजामि मुक्तिसिद्धये।। ७।।
जिनेन्द्र-बिम्ब लायकं, विशिष्ट सिद्धिदायकम्।
गुलाब पद्म पुष्पकैर्-यजामि मुक्तिसिद्धये।। ८।।
'विशद' जैन मंदिरं, मुक्ति निलय सुन्दरं।
मुनीन्द्र वृन्द सेवतैर्-यजामि मुक्तिसिद्धये।। ९।।

मंगलाष्टकम्

ॐ नमो मंगलं कुर्यात्, ह्रीं नमश्चापि मंगलम्।
मोक्षबीजं महामंत्रं, अर्हं नमः सुमंगलम्।।1।।

भावनाऽमरगेहेषु, जिनगेहाश्च शाश्वताः।
जिनार्चास्तेषु नित्या स्युः, ते ताः कुर्वन्तु मंगलम्।।2।।

चतुःशताष्टपंचाशत्, मध्यलोके जिनालयाः।
जिनार्चाः सौख्यदास्तेषु, कुर्वन्तु मम मंगलम्।।3।।

व्यंतराऽमरगेहेषु, संख्यातीता जिनालयाः।
असंख्याः प्रतिमाश्चापि, ते ताः कुर्वन्तु मंगलम्।।4।।

ज्योतिर्वासिविमानेषु, संख्यातीता जिनालयाः।
असंख्या मूर्तयस्तत्र, ते ताः कुर्वन्तु मंगलम्।।5।।

वैमानिक विमानेषु, नित्याः संति जिनालयाः।
जिनार्चाः शास्वतास्तेषु, ते ताः कुर्वन्तु मंगलम्।।6।।

कृत्रिमाऽकृत्रिमाः सर्वे, त्रैलोक्ये ये जिनालयाः।
कृताऽकृता जिनार्चाश्च, ते ताः कुर्वन्तु मंगलम्।।7।।

त्रैलोक्यशिखराग्रे या, भाति सिद्धशिला शुभाः।
अनंतानंत सिद्धेभ्यो, भृता कुर्यात् सुमंगलम्।।8।।

अर्हत् सर्वसिद्धाश्च, साधवस्त्रिविधा अपि।
सज्ज्ञान-मतिदातारः, कुर्वन्तु मम मंगलम्।।9।।

लघु सुप्रभात स्तोत्रम्

(बसन्त तिलकः छन्द)

श्री नाभिनन्दन! जिनाजित! संभवेश!
देवाभिनंदनमुने! सुमते जिनेन्द्र।।
पद्मप्रभ! प्रणुतदेव सुपार्श्वनाथ!
चन्द्रप्रभास्तु सततं मम सुप्रभातम्।।1।।

श्री पुष्पदंत! परमेश्वर शीतलेश!
श्रेयान् जिनो विगतमान! सुवासुपूज्य।।
निर्दोषवाग्विमल! विश्वजनीनवृत्तिः,
श्रीमन्ननन्त! भवतान्मम सुप्रभातम्।।2।।

श्रीधर्मनाथ! गणभृन्नतशांतिनाथ!
कुन्थो महेश परमार विभार मल्लिः।।
सत्यव्रतेश! मुनिसुव्रत! सन्नमीश!
नेमिः पवित्र! सततं मम सुप्रभातम्।।3।।

श्री पार्श्वनाथ! परमार्थ विदांवरेण्य!
श्रीवर्धमान! हतमान! विमानबोध।।
युष्मत्पदद्वयमिदं स्मरतो ममास्तु,
कैवल्य-मस्तु 'विशद' मम सुप्रभातम्।।4।।

।। इति लघु सुप्रभातम्।।

नवदेव स्तोत्रम्

(बसंत तिलका-छन्द)

देवेन्द्र वृन्द मुनि वंदित पाद पद्मान्।
त्रैकाल्य वस्तु निचयं स चराचरस्य।।
जानाति पश्यति सदा युगपज्जिनो यः।
दिव्या विचित्र शुभ भक्ति धरं जिनन्तं।।1।।
सिद्धा नमात्मनि निरंजन मात्मनैव।
पश्यन् ददर्श निखिलान्यऽपि योजगन्ति।।
पुंसा मतिन्द्रिय दिशामति दूर दृश्यं।
तं विश्व दर्शिन-मनश्वर मानतोस्मि।।2।।
भान्ति प्रदेषु बहुवर्त्मसुजन्म कक्षे।
पन्थान-मेक-ममृतस्य परं नयन्ति।।
ये लोक-मुन्नतधिया प्रणमामि तेभ्यः।
तेनाप्यहं जिगमिषुर्गरु नायकेभ्यः।।3।।
अंगांग बाह्य श्रुत सम्यक् पारगाना -
मष्टांग ज्ञान परिशीलन भावितानाम्।।
तिष्ठन्ति वक्त्र पदमे च सरस्वतीनां।
गुरु पाठकार् विधुनन्तु च सर्व दुःखं।।4।।
धर्मो दया कथमसौ स परिग्रहस्य।
वृष्टिर्धरातल हिता किं भवग्रहेस्ति।।

तस्मात् त्वया द्वय परिग्रह-मुक्त-रुक्ता।
ते साधवा सुमहितो प्रणमामि नित्यं।।5।।
धर्मं हि निर्मल कुलं सहगामि बन्धु।
धर्मं बलं निरुपमं धनमेव धर्मम्।।
पाथेय-मक्षय-मलं निष्पाप रक्षा।
तस्मा-दहं मुदित भाव युतेन वन्दे।।6।।
निर्मूल मोह तिमिर क्षपणैक दक्षं।
नेत्रेण सर्व जग दुज्ज्वल-नैकतानम्।।
सोषेस्व चिन्मय-महो जिनवाणि नूनम्।
प्राचीमति जयसि देवि! तदल्प सूतिम्।।7।।
अर्हज्यिनः परम संतत सौख्यकारी।
रूप प्रभृत्यक कराष्ट मदापहारी।।
संपूज्यते जिनवर प्रतिबिम्ब सारैः।
द्रव्यमनो वचन काय विशुद्धि भाजः।।8।।
सौख्याकरं सकल भव्य हितं बुधार्च्यं।
संपूजितं सुर गणैर्-भुवनैक ज्येष्ठम्।।
संसार भीत मनसां शरणं परं यत्।
नित्यं नमो 'विशद' सर्व जिनालयेभ्यः।।9।।
अर्हन सुसिद्ध आचार्य सुपाठकानां।
साधुश्च धर्म जिन आगम जैन बिम्बं।।
चैत्यालयं त्रिजग पूज्य सुदेवतानां।
नित्यं नमन्ति 'विशदं' नवदेव पूज्यं।।10।।

पञ्च परमेट्ठी थुदि

णमो अरहंताणं, तिलोय-पुज्जो य संथुओ भयवं।
अमर णरराय महिओ, अणाइ - णिहणो सिवं दिसउ।।1।।
णिद्दड्ड अट्ठ कम्मिंधणाण, घर णाण दंसण धराणं।
मुत्ताण णमो सिद्धाणं, परम परमिट्ठि भूयाणं।।2।।
आयर-धराणं णमो, पंचविहायार-सुट्ठियाणं च।
ताणी-णायरियाणं, आयारुव एसयाण सया।।3।।
वारसविहं अपुव्वं, दिड्डाण सुअं णमो सुअहराणं।
सययमुवज्झायाणं, सज्झाय-ज्झाण-जुत्ताणं।।4।।
सव्वेसिं साहूणं णमो, तिगुत्ताण सव्वलोए वि।
तव-नियम-णाण-दंसण-जुत्ताणं बंभयारीणं।।5।।
चत्तारि मंगलं मे, हुंतुऽरहंता तहेव सिद्ध य।
साहू अ सव्वकालं, धम्मो य तिलोय-मंगल्लो।।6।।
चत्तारि-चेव ससुरासुरस्स, लोगस्स उत्तमा हुंति।
अरहंत-सिद्ध-साहू, धम्मो जिण-देसिय उयारो।।7।।
चत्तारि वि अरहंते, सिद्धे साहू तहेव धम्मं च।
संसार घोर-रक्खस-भएण, सरणं पव्वज्जामि।।8।।
एसो परमेट्ठीणं पंचण्हं, वि भावओ णमुक्कारो।
सव्वस्स कीरमाणो, पावस्स पणासणो होई।।9।।
एसो परमो मंतो, परम रहस्स मयं परं तत्तं।
णाणं 'विशदं' णेयं, सुद्धं झाणं परं झेयं।।10।।

***

श्री बाहुबली स्तवन

(बसन्ततिलका छन्दः)

हे कामदेव! शुभवर्णहरित्सुगात्र!
केनोपमां तव करोमि समोऽपि कश्चेत्।।
नूनं भवान् खलु भवादृश एव लोके।
तृप्यंति नो जनदृशो मुहु-रीक्षमाणाः।।१।।

उत्तुङ्गदेह! भरताधिपजित्! तव प्राक्।
शिष्यो बभूव भरतेश्वरचक्ररत्नं।।
रत्नत्रयं पुन-रवाप्य सुसिद्धिचक्रं।
मोहैकजित्! त्रिभुवनैकगुरुर्बभूव।।२।।

हे नाथ! कर्मवशतो हतशक्तिबुद्धिः।
स्तोतुं तथापि तव भक्तिवशाद् यतेऽहं।।
भेकोऽपि शक्तिमसमीक्ष्य जवेन भक्त्या।
गच्छत् मृतः सुरपदं ननु किं न वाप्नोत्।।३।।

आस्तां जिनेन्द्र! तव संस्तवनं हि तावत्।
नामापि नून-मिह सिद्धरसायनं स्यात्।।
कामार्थदाय्यभयदायि च देहभाजां।
पीयूष बिंदु-रपि तृप्तिकरो न किं वा।।४।।

ध्यानस्थिते त्वयि विभो! शुकवर्णकांतं।
त्वां वीक्ष्य मुक्तिललना छलतो लतानां।।
मन्येऽहमेत्य समवर्णमवेत्य तुष्टा।
आश्लिष्यति स्म रहसि स्थितमत्र मोदात्।।५।।

आजन्मजात बहुवैर विकार भावाः।
सिंह प्रभृत्यखिल जंतु गणा अपीत्थं।।
ध्यान प्रभाव वशत स्तव हिंस्त्रभावं।
त्यक्त्वा मिथः परमशांत-मुपासत त्वां।।६।।

ध्यानस्थिते सति सुरासन कंपमानाः।
जातामुहुः सुरगणाश्च नतिं व्यतन्वन्।।
ध्यानैकधुर्य जिन! ते हृदि धारकाणां।
कंपीभवति भविनां किल कर्म चौराः।।७।।

संवत्सरैकतनुनिश्चल! शल्यदूर।
त्वद्ध्यानकृष्टहृदया महतादरेण।।
त्वां बुद्धिविक्रियरसौषधिचारणाद्याः।
सर्वर्द्धयोऽपि वृणुतेस्म किमद्भुतं तत्।।८।।

शाल्यंकुराभ तनुबाहुबलीश! योगे।
लीनं लताभिरहिभिः परितः सुजुष्टं।।
त्वां वीक्ष्य खेचर-रमा बहु विस्मयेन।
भक्त्या निवारण परा मुहु-रेव तत्र।।९।।

ज्ञान लक्ष्मी घनाश्लेश, प्रभवानन्द नन्दितम्।
निष्ठितार्थ-मजं नौमिं, परत्मान-मव्ययम्।।
प्रशान्तमति गंभीरं, विश्वविद्या कुलगृहम्।
'विशद' शरणं जीयाज्, छ्रीमत् बाहुबली जिनम्।।

श्री बाहुबली स्तोत्रम्

(उपजाति छन्दः)

सम्यक् प्रकारेण भवस्य बीजं, कर्म प्रबन्धं जटिलं महान्तं।
दुःखप्रदं यस्तपसा निहत्य, प्राप्तं शिवं बाहुवली मुनीशं॥ १ ॥

ये बृह्मचर्येण युता मुनीशं, भवन्ति ते नाग नरेन्द्रं मान्याः।
योगीन्द्र वद्यं सरणिं शिवस्य, नमामि तद्देव बाहूवलिं तम्॥ २ ॥

श्रेयः श्रियः मंगल केलिसद्म, देवेन्द्र नागेन्द्र नताङ्घ्रि पद्म।
सर्वज्ञ सर्वातिशय प्रधान, चिरं जय ज्ञान कलानिधानं॥ ३ ॥

अनन्त दृग्ज्ञान सुवीर्य सौख्यं, अनन्ततां याति तव प्रसादात्।
बोधिसमाधि च सर्वार्थ सिद्धि, भूयात् सदा मे हि नमोस्तु तुभ्यं॥ ४ ॥

पुनातु मे बाहुवलीश चितं, पुनः-पुनः संसृति दुःखतप्तं।
संस्तौमि नित्यं शरणं प्रपद्ये, भवाम्बुधेः पारगतं महेशं॥ ५ ॥

परीषहै जीव कृतैस्तदासौ, महामना धीर गभीर देवाः।
अकम्पचित्तः कनकाचलो वै, बाहूवली तं त्रिविधं प्रवन्दे॥ ६ ॥

दैगम्वरो कानन वास युक्तः, रागैविमुक्तश्च हितोपदेशी।
ब्रह्मव्रती मोक्ष वधूपभोक्ता, अचिन्तनीया महिमां प्रभोस्ते॥ ७ ॥

दुःखार्ति नाशाय नमोस्तु तुभ्यं, अभीप्सितार्थाय नमोस्तु तुभ्यं।
त्रैलोक्यनाथाय नमोस्तु तुभ्यं, बाहुबली देव! नमोस्तु तुभ्यं॥ ८ ॥

(अनुष्टुप छन्दः)

श्री मन्तं मुक्ति भर्तारं, 'विशदं' वृषनायकं।
धर्म तीर्थंकर पूर्वं, मुक्ति प्राप्त जिनेश्वरं॥ ९ ॥

श्री वृषभदेव स्तुति

(स्रग्धरा छन्दः)

श्रीमद्देवेन्द्र-वन्द्यौ, जिनवरचरणौ, ज्ञानदीपप्रकाशौ,
लोकालोकावकाशौ, भवजलधिहरौ, संततं भव्यपूज्यौ।
नत्त्वा वक्ष्ये सुपूजां, वृषभजिनपतेः प्राणिनां मुक्ति हेतु।
यस्मात्संसार पारं, श्रयति स मनुजो, भक्ति युक्तः सदाप्तः।।1।।

(बसन्त तिलका छन्दः)

श्री नाभिराज-तनुजं शुभमिष्ट-नाथं, पापापहं मनुजनाग-सुरेश-सेव्यम्।
संसार-सागर-सुपोत-समं पवित्रं, वन्दामि भव्य-सुखदं वृषभं जिनेशम्।। 2।।

यस्यात्र नाम जपतः पुरुषस्य लोके, पापं प्रयाति विलयं क्षणमात्रतो हि।
सूर्योदये सति यथा तिमिरस्तथास्तं, वन्दामि भव्य-सुखदं वृषभं जिनेशम्।। 3।।

सर्वार्थ सिद्धि-निलयाद्भुवि यस्य पुण्यात्, गर्भावतार- करणेऽमर - कोटिवर्गैः।
वृष्टिः कृता मणिमयी पुरुदेशतस्तं, वन्दामि भव्यसुखदं वृषभं जिनेशम्।। 4।।

जन्मावतार-समये सुरवृन्द-वन्द्यैः, भक्त्यागतैः परमदृष्टि तया नतस्तैः।
नीत्वा सुमेरुमभिवन्द्य सुपूजितस्तं, वन्दामि भव्यसुखदं वृषभं जिनेशम्।। 5।।

षट्कर्म-युक्तिमवदर्श्य दयां विधाय, सर्वाः प्रजाः जिनधुरेण वरेण येन।
सञ्जीविताः सविधिना विधिनायकं तं, वन्दामि भव्यसुखदं वृषभं जिनेशम्।। 6।।

दृष्ट्वा सकारणमरं शुभदीक्षिताङ्गं, कृत्त्वा तपः परम मोक्षपदाप्तिहेतुम्।
कर्मक्षयः परिकृतः भुवि येन तं हि, वन्दामि भव्यसुखदं वृषभं जिनेशम्।। 7।।

ज्ञानेन येन कथितं सकलं सुतत्त्वं, दृष्ट्वा स्वरूप-मखिलं परमार्थ-सत्यं।
तदर्शितं तदपि येन समं जनेभ्यो, वन्दामि भव्यसुखदं वृषभं जिनेशम्।। 8।।
इन्द्रादिभिः रचितमिष्टिविधिं यथोक्तं, सत्प्रातिहार्य-ममलं सुखिनं मनोज्ञं।
यस्योपदेश-वशतः सुखता नरस्थ, वन्दामि भव्यसुखदं वृषभं जिनेशम्।। 9।।
पञ्चास्तिकाय षड्द्रव्यसुसप्ततत्त्व, त्रैलोक्यकादि विविधानि विकासितानि।
स्याद्वादरूप-कुसुमानि हि येन तं च, वन्दामि भव्यसुखदं वृषभं जिनेशम्।। 10।।

(मालनी छन्दः)

विविध विभवकर्ता, पाप-सन्तापहर्ता, शिवपदसुख-भोक्ता, स्वर्ग-लक्ष्म्यादि-दाता।
गणधर-मुनि-सेव्यः 'सोमसेनेन' पूज्यः, वृषभजिनपतिः श्रीवाञ्छितां मे प्रदद्यात्।।11।।

* * *

माला शुद्धि मंत्र

ॐ ह्रीं रत्नै स्वर्ण सूत्रै बीजैर्यारचित जाप मालिका
सर्व जपेसु सर्वाणि वाञ्छितानि प्रयछतु।।

सिद्धेः कारणमुत्तमा जिनवरा आर्हन्त्यलक्ष्मीवराः।
मुख्या ये रसदिग्युता गुणभृतस्-त्रैलोक्यपूजामिताः।।
चित्ताब्जं प्रविकासयंतु मम भो! ज्योतिः प्रभा भास्कराः।
तीर्थेशा वृषभादि वीरचरमाः कुर्वंतु मे (नो) मंगलम्।।

श्री वृषभनाथ रक्षा स्तोत्रम्

वृषभं वृषभाकारं, वृष तीर्थ प्रवर्तकम्।
वृषाय वृषभं वन्दे, वृषभं वृषभात्मनाम्।।1।।

श्री मंतं मुक्ति भर्त्तारं, वृषभं वृष नायकं।
वृषभं वृष-चक्रांकं, वन्देऽनन्त गुणार्णवम्।।

ॐ नमः आदिनाथाय, शांति तुष्टि युतायुते।
ह्रीं गोमुख-चक्रेश्वर्या, यक्ष यक्षणी संयुते।।3।।

ऋद्धि सिद्धि महावृद्धि, शांति तुष्टि विधापते।
ॐ ह्रीं दिक्व्यालवेताल, सर्वाधि व्याधि नाशने।।4।।

ॐ ह्रीं क्लीं श्री ऐम् अर्हं, सिरी वृषभायनमः।
इष्ट सिद्धि महा ऋद्धी, तुष्टि पुष्टि कुरू मम्।।5।।

आदिनाथ इदं स्तोत्रं, त्रियोगेन यः पठेत।
इच्छितान् लभते कामान्, सम्पदाश्च पदे-पदे।।6।।

शुद्धभावं युतो पाठं, क्रियते यो महामनः।
प्रतिदिनं कुर्यात् जाप्यं, प्राप्यं सर्वार्थ सिद्धये।।7।।

राज्य भवं नास्ति तस्य, नाऽकाले मरणं तथा।
दुर्घटना नास्ति एवं, 'विशद' व्याधिनाशकं।।8।।

जाप - 1. ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा श्री ऋषभ देवाय नमः।
2. ॐ नमो भगवते जय विजयापराजते सर्व सौक्ष्य सौभाग्यं कुरु कुरु स्वाहा।

श्री पद्मप्रभ रक्षा स्तोत्रम्

त्रिभुवन पति पूज्यं देव देवेन्द्र वद्यं,
जनन मरण हारं पाप संताप वारं।
सकल सुखनिधानं सर्व दोषावसानं।
सकल हित प्रकर्ताः श्री पद्मप्रभदेवाः।।१।।
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हज्-जिनः, अ सि आ उ सा नमो नमः।
लक्षेक जपतो मंत्रं, वाञ्छितार्थ फल प्रदः।।२।।
कल्याणं विजयोभद्रं, चिन्तितार्थ मनोरथा।
श्री पद्मप्रभ प्रसादेन, सर्वेऽर्था हि भवन्तु ते।।३।।
पद्मप्रभमहं नौमि, द्विधा पद्माद्यलंकृतम्।
तत्पद्माप्त्यै सुजन्तूनां, पद्मादं पद्म कान्तिदम्।।४।।
ऋद्धि सिद्धि महाबुद्धि, धृति कीर्ति सुकांतिदम।
मृत्युञ्जयं शिवात्मानं, जगदानन्दनं शिवम्।।५।।
हर्षदः कामदश्चेति, रिपुघ्न सर्व सौख्यदः।
पातु नः परमानंदः तत्क्षणं संस्तुतो जिनः।।६।।
प्रातरेव समुत्थाय, श्री पद्मप्रभ स्मरेत।
तस्य नास्ति भयंकिंचित्, प्राप्यते श्रेयं 'विशद'।।७।।
रणे बने समुद्रे च, रक्ष-संरक्षकं तथा।
अग्नि चोरादितो रक्ष, जिन नाम मंत्रं जपेत्।।८।।

जाप - ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय नमः।

श्री चन्द्रप्रभ रक्षा स्तोत्रम्

श्री चन्द्रनाथाय नमोस्तु तुभ्यं, सुचन्द्रकांताय नमोस्तु तुभ्यं।
चन्द्रोज्ज्वल ज्ञान धनाय तुभ्यं, नमो नमश्चन्द्र जिनेश्वराय॥ १ ॥

(अनुष्टुप छन्दः)

श्रियं कवलयानन्द, प्रसादित महोदयः।
देवः चन्द्रप्रभः पुष्याज्-जगन्मानस वासिनीम्॥ २ ॥

भवज्वलन संभ्रान्त, सत्त्व शांति सुधार्णवः।।
नमस्चन्द्रप्रभ पुस्यात्, ज्ञान रत्नकर श्रियम्॥ ३ ॥

गुण समृद्धि युक्ताय, जिन चन्द्राय ते नमः।
अजेय शक्ति लाभार्थं, सर्व संताप हानये॥ ४ ॥

सर्वसंग विरक्ता सन्, मुक्ति श्री रक्तमानसः।

चन्द्रप्रभ नमस्तुभ्यं , मह्यं मुक्ति श्री तथा॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं क्लीं श्री चन्द्र प्रभः, ॐ आं क्रों ह्रीं क्ष्म्ल्व्र्यूं नमः।
ॐ ह्रीं दिङ् व्याल वेताल, सर्वाधि व्याधि नाशिने॥ ६ ॥

कर्ममल विनिर्मुक्तो, कर्म शत्रु जयाय ते।
भव पाशच्छिदे तुभ्यं, श्रेय में 'विशदं' कुरू॥ ७ ॥

इदं चन्द्रप्रभ स्तोत्रं, पठेन्नित्यं विशेषतः।
दुर्जनाश्च क्षयं यान्ति, श्रेयो भवति संकटे॥ ८ ॥

ॐ अ सि आ उ सा नमः, तत्र त्रैलोक्य नाथताम्।
सुरेन्द्रास्ते चतुःषष्ठि, भाषन्ते क्षत्र चामरै।।

जाप - ॐ ह्रीं सर्वव्याधि विनाशन समर्थाय श्री चन्द्रप्रभाय नमः।

श्री पुष्पदंत रक्षा स्तोत्र

(उपजाति छंदः)

श्रियं त्रिलोकी पति पुष्पदंतः, पुष्यादनंतः प्रिय मुक्तिकांतः।
दुरन्त मिथ्यात्व तमस्तमोरेर्, जिनो मनोजद्विरद द्विपारि।।१।।

(अनुष्टुप छंदः)

सुविधिं विधि हंतारं, भव्यानां विधि देशनम्।
स्वर्ग मुक्ति सुखाद्याप्त्यैः, मुदेडे विधिहानये।।२।।
श्री पुष्पदंत देवाय, सुधियां सिद्धि दायिने।
काम शत्रु विनाशाय, गुणायातीत कर्मणे।।३।।
परमानन्द सम्पन्नान्, संसारार्णव पारगान्।
बोधि प्राप्ति हेतु मध्य, गुणा रूपादिनास्तुवे।।४।।
पुष्पदन्त जिनेन्द्राय, पुष्पबाणच्छिदे नमः।
तुष्टि पुष्टि प्रदातस्ते, स्वात्मपुष्ट्यै नमो नमः।।५।।
ॐ अ सि आ उ सा नमः, विश्व चिंतामणियुते।
तुष्टि पुष्टि परासिद्धि, वाञ्छितं मे फलप्रदः।।६।।
विघ्ना निघ्नन्तु मे, सर्वे-ऽभीप्सितार्थप्रदाश्चते।
तुष्टि पुष्टि परा सिद्धि, कुर्वन्तु मम मंगलं।।७।।
ॐ ह्रीं अर्हं आं क्रों क्ष्मल्व्र्यूं नमः।
प्रातरुत्थाय यो भव्यः, पुष्पदन्त स्तोत्रं पठेत।
'विशद' ज्ञान प्राप्ते सः, प्राप्नुयात सर्व मंगलं।।८।।

जाप - ॐ ह्रीं शुक्रग्रहारिष्ट निवारक श्री पुष्पदंत जिनेन्द्राय नमः।

श्री वासुपूज्य रक्षा स्तोत्रम्

(उपजाति छन्दः)

हे नाथ! मिथ्यात्व वशेन पापं, संसार कूपे समुपार्जितं यत्।
तस्योद येनाति निपीडितं मां, श्री वासुपूज्याज्जिन रक्ष-रक्ष ॥1॥

(अनुष्टुप छन्दः)

वासुपूज्यो जगत पूज्यः, पूज्य पूजाति दूरगः।
पूज्यो जनः प्रसादास्ते, भवेत् तुभ्यं नमो नमः ॥2॥
गुण समृद्धि युक्ताय, जिन चन्द्राय ते नमः।
पूज्य अर्हन्त देवाय, नमः स्व गुण वृद्धये ॥3॥
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं नमः, विश्व चितांमणि युते।
शांति तुष्टि महापुष्टि, धृति कीर्ति विद्यापिते ॥4॥
जगत् पूज्यं भवेन् नित्यं, त्रिशन्ध्यं च विशेषतः।
पापं च हरते नित्यं, वासुपूज्यस्य दर्शनं ॥5॥
पूजितस्-त्रिजगन्नाथैर्-योमुदं नैति जातुचित।
निन्दितो न मनाग्द्वेषं, वासुपूज्य तमाश्रये ॥6॥
वासवै पूज्य पादाब्जं, समवसृति संस्कृतम्।
द्वादशम् तीर्थ कर्त्तारं, वासुपूज्य जिन स्तुवे ॥7॥
भौमग्रहारिष्ट स्तोत्रं, पठेत यः त्रियोगतः।
गृहे भवति कल्याणं, 'विशद' सौख्य पदे-पदे ॥8॥

(बसन्ततिलका छन्दः)

नमो नमः शांतिकराय देव!, नमो नमः दुःख हराय नाथ!
नमो नमः पाप हराय स्वामिन्ः, श्री वासुपूज्यं 'विशदं' नमामि ॥

जाप - ॐ ह्रीं सर्वव्याधि विनाशन समर्थाय श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय नमः।

श्री शांतिनाथ स्तोत्रम्

नाना विचित्रं भव दुःख राशि,
नाना प्रकारं मोहं च पाशि।।
पापानि दोषानि हरंति देवाः,
इह जन्म शरणं तव शांतिनाथ!॥१॥

संसार मध्ये मिथ्यात्व चिंता,
मिथ्यात्व मध्ये कर्माणि बंधं॥
ते बंध छेदंति देवाधिदेवाः,
इह जन्म शरणं तव शांतिनाथ!॥२॥

कामस्य क्रोधं माया विलोभं,
चतुः कषाया इव जीव बंधं॥
ते बंध छेदंति देवाधिदेवाः।
इह जन्म शरणं तव शांतिनाथ!॥३॥

जातस्य मरणं द्यूतस्य वचनं।
द्वौ शांति जीव बहु जन्म दुःख॥
ते दुःख छेदंति देवाधिदेवाः।
इह जन्म शरणं तव शांतिनाथ!॥४॥

चारित्र हीनं नर जन्म मध्ये।
सम्यक्त्व रत्नं परिपालयन्ति।

ते जीव सिद्धंति देवाधिदेवाः।
इह जन्म शरणं तव शांतिनाथ!॥५॥
मृदु वाक्य हीनं कठिनस्य चिंता।
पर जीव निंदा मनसा च बंधं॥
ते बंध छेदंति देवाधिदेवाः।
इह जन्म शरणं तव शांतिनाथ!॥६॥

पर द्रव्य चोरी पर दार सेवा।
हिंसादि कांक्षा अनृत च बंधं॥
ते बंध छेदंति देवाधिदेवाः।
इह जन्म शरणं तव शांतिनाथ!॥७॥

पुत्राणि मित्राणि कलत्राणि बंधुर्।
बहु जन्म मध्ये इहजीव बंधं॥
ते बंध छेदंति देवाधिदेवाः।
इह जन्म शरणं तव शांतिनाथ!॥८॥

जपति पठति नित्यं शांति नाथाद् विशुद्धं।
स्तवन मधु गिरायां पाप संतापहारं॥
शिव सुख निधि पोतं सर्व सत्त्वानुकंपं।
सुकृत सुगुण भद्रं भद्र कार्येषु नित्यं॥९॥

***

श्री शांतिनाथ रक्षा स्तोत्रम्

(मालनी छन्दः)

सकल कुसुम वल्ली पुष्कलावर्त मेघो।
दुरित तिमिर भानुः कल्पवृक्षोपमानः।।
भव जल निधि पोतः सर्व सम्पत्ति हेतुः।
सभवतु सततं वः श्रेयसे शांतिनाथः।।1।।

ॐ ह्रीं नमोऽर्हते सर्व, रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा।
ऋद्धि वृद्धि महासिद्धि, कुर्यात् मम् हे शांति जिन!।।2।।

सर्वो विश्वंभर स्वामी, सर्व सिद्धि प्रदायकः।
सर्व सत्त्वा हितोयोगी, श्री करः परमार्थदः।।3।।

श्री शांतिनाथ-मित्येयं, यः समाराधयेज्-जिनम्।
सर्वं पाप विनिर्मुक्तं, लभ्यते श्री सुखप्रदम्।।4।।

शांतिजिननाम (मंत्र) जापेन, जिन नाम (मंत्र) श्रवणे न च।
भूतभीतिर्-महामारी, शीघ्रं, नयश्तु ध्रुवम्।।5।।

शांति प्रद-मिदं स्तोत्रं, सर्व कार्येषु सिद्धिदम्।
शांति पुष्टि करं नित्यं, क्षुद्रोपद्रव नाशनम्।।6।।

शांतिकर मिदं पाठं, सर्व मंगल दायकम्।
त्रिसन्ध्यं यः पठेन् नित्यं, नित्या प्राप्नोति स श्रियम्।।7।।

जाप - ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय नमः।

श्री शांतिनाथ स्तवन

समग्र तत्त्व दर्पणम्, विमुक्ति मार्ग घोषणम्।
कषाय मोह मोहचनम्, नमामि शान्ति जिनवरम्।।नमामि..

त्रिलोक वन्द्य भूषणम्, भवाब्धि नीर शोषणम्।
जितेन्द्रियम् अजंजिनम्, नमामि शान्ति जिनवरम्।।नमामि..

अखण्ड खण्ड गुण धरम्, प्रचण्ड काम खण्डनम्।
सुभव्य पद्म दिनकरम्, नमामि शान्ति जिनवरम्।।नमामि..

एकान्तवाद मत हरं, सुस्याद्वाद कौशलम्।
मुनीद्र वृन्द सेवितं, नमामि शान्ति जिनवरम्।।नमामि..

नृपेन्द्र चक्र मण्डनम्, प्रकर्म चक्र चूरणम्।
सुधर्म चक्र चालकं, नमामि शान्ति जिनवरम्।।नमामि..

अग्रन्थ नग्न केवलं, विमोक्ष धाम केतनम्।
अनिष्ट घन प्रभंजनम् नमामि शान्ति जिनवरम्।।नमामि..

महाश्रमण किंचनम्, अकाम काम पदधरम्।
सुतीर्थ कर्तृ षोडषम्, नमामि शान्ति जिनवरम्।।नमामि..

पंच महाव्रत धरं, दया क्षमा गुणाकरम्।
सुदृष्टि ज्ञानव्रत धरं, नमामि शान्ति जिनवरम्।।नमामि..

इति शांतिनाथ स्तवनम्।

श्री मुनिसुव्रतनाथ रक्षा स्तोत्रम्

छायासुतः सूर्य खचारि पुत्रोः, यः कृष्ण वर्णो रजनीश शत्रुः।
अष्टारिगा सज्जन सौख्यकारी, शनिश्चरं ग्रह निवारयामि।।1।।

नमः श्री तीर्थनाथाय, त्रैलोक्याधिपते-र्गुरुः।
पापं च हरते नित्यं, मुनिसुव्रत दर्शनम्।।2।।
ॐ ऐं क्लीं श्रीं वरुण बहुरूपिणी (यक्षी-यक्षी)।
सहिताय अतुलबल पराक्रमाय ऐं ह्रीं क्लीं क्ष्म्ल्व्र्यूं नमः।।
दर्शनं हरते रोगं, दर्शनं हरते दुखं,
दर्शनं हरते कष्टं, पापं हरति च दर्शनम्।।3।।
ॐ आं क्रों ह्रीं क्ष्म्ल्व्र्यूं नमः।
दर्शनाल्लभते भाग्यं, दर्शनाल्लभते धनं।
दर्शनाल्लभते पुण्यं, सुखी भवति दर्शनात्।।4।।
(ऐं ॐ अः नमः नव वारं जाप्यं दीयते।)
मुनिसुव्रत सिंहस्य, श्याम वर्णस्य संस्तवान्।
लभन्ते श्रेयसां सिद्धि, प्रकुर्वन् वाच्छितैः सह।।5।।
जिनागारे गता कृत्त्वा, ग्रहाणां शांति हेतवे।
नमस्कारं ततो भक्त्या, जपे-दष्टोत्तर शतम्।।6।।
महाव्रतधरोधीरः, सुव्रतो मुनिसुव्रतः।
निवारका ग्रहारिष्ट, शनि छायासुतं वरं।।7।।
पठेन्नित्यं इदं स्तोत्रं, त्रियोगं च विशेषतः।
गृहे भवति कल्याणं, 'विशदं' तीर्थ स्तवेन् च।।8।।

जाप - ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं सर्व व्याधि विनाशन समर्थाय श्री मुनिसुव्रताय नमः।

श्री नेमिनाथ रक्षा स्तोत्रम्

(बसन्ततिलका छन्दः)

द्वारावति पति समुद्र जयेश मान्यं,
श्री यादवेश बल केशव पूजितांघ्रिम।
शंखाङ्क मंबुधर मेचक देह मर्चे,
सद् ब्रह्मचारि मणि नेमिजिनं नमामि॥1॥

(अनुष्टुप छन्दः)

नमः श्री नेमिनाथाय, विश्वशांति विज्ञापिते।
कृत्स्न कर्मोघ्र शान्ताय, शान्त्ये सर्व कर्मणाम्॥2॥
श्री नेमिजिन नाथस्य, नील वर्णस्य संस्तवान।
लभन्ते श्रेय संसिद्धि, प्रकुर्वन् वाञ्छितै सह॥3॥
सत्संयम पयः पूर, पवित्रित जगत् त्रयम्।
नेमिनाथं नमस्यामि, विश्व विघ्नोघ शान्त्ये॥4॥
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं, असि आ उ सा नमः।
(ॐ अ सि आ उ सा नमः, तत्र त्रैलोक्य नाथताम्)
चतुःषष्ठि सुरेन्द्रास्ते, भासन्ते क्षत्र चामरैः॥5॥
प्रात्रूत्थाय पठेन्नित्यं, त्रियोगेन विशेषतः।
ऋद्धि सिद्धि सुखं प्राप्तं, नेमिनाथ स्तेवन च॥6॥
नेमिनाथ जिनं वन्दे, धर्म नेमि प्रदायकम्।
'विशद' भुवनाधीशं, धर्म तीर्थ प्रवर्तकम्॥7॥

***

जाप – ॐ ह्रीं सर्वव्याधि विनाशन समर्थाय श्री नेमिनाथाय नमः।

संकट निवारक पार्श्वनाथ स्तोत्रम्

ॐ नमो भगवते श्री, पार्श्वनाथाय ह्रीं प्रगे।
धरणेन्द्र पद्मावति, सहिताय सदा श्रिये॥१॥
अट्ठे मट्ठे तथा छुद्रे, विघट्टे क्षुद्रमेवहि।
क्षुद्रात्मभय स्तम्भय, स्वाहान्तैरेभिरक्षरम्॥२॥
पद्माष्टक दलोपेतं, मायांक-जिन लांछितम्।
पत्र- मध्यान्तरालेषु, पत्रोपरि यथाक्रमम्॥३॥
अष्टौ अष्टौ तथा चाष्टौ, विन्यस्ताक्षर-मंडले।
तथाष्टशत जापेन, ज्वर-मेकान्तरादिकम्॥४॥
रिपु चोर महीपाल, शाकिनी भूत सम्भवाः।
मरण्यं देहजां भीतिं, हन्ति बद्धं भुजादिषु॥५॥
पुष्पमालां जपित्वा च, मंत्रेणाष्ट-शताधिकम्।
प्रक्षिप्ता पोत कंठेषु, भूत स्वम्भपदं भयम्॥६॥
गुग्गुलस्य गुटीनां च, शतमष्टोत्तराहुतम्।
दुष्टमुच्चाटयेत्सद्यः, शान्तिं च कुरुते गृहे॥७॥
श्री पार्श्व जिन सिंहस्य, नील वर्णस्य संस्तवान्।
लभन्ते श्रेयसं सिद्धिं, प्रकुर्वन् वांछितैः सह॥८॥
श्री-अष्वसेन-कुल-पंकज-भास्करस्य, पद्मावति-धरणि-राजनि सेवितस्य।
वामांगजस्य पदमेस्तव-वाल्लभन्ते, भव्याश्रियं शुभगतामपि वांञ्छितानि॥९॥

***

जाप - ॐ ह्रीं सर्वव्याधि विनाशन समर्थाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।

श्री महावीर रक्षा स्तोत्रम्

(उपजाति छन्दः)

यस्येह धर्मोस्ति परं पवित्रं, अर्थस्य कामस्य सुखस्य दाता।
स्वर्गापवर्गस्य य साधकोत्र, तं वीरनाथं प्रणमामि देवम्॥1॥

(अनुष्टुप छन्दः)

नमः श्री वीर नाथाय, विश्व शांति विधायिने।
कृत्स्न कर्म विनाशाय, शान्तये सर्व कर्मणाम्॥2॥
वीरं कर्म जये वीरं, त्रिजगन्नाथ वंदितं।
भेत्तारं सर्व शत्रूनां, महावीरं नमामि तान्॥3॥
सन्मतिं वीरातिवीरो, वर्धमान वृद्धिकराः।
महावीरो नमस्तुभ्यं, सन्मतिं वितनोतु मे॥4॥
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महावीरः, असि आ उ सा नमो नमः।
मंत्र जपतो लक्षेकं, इच्छतार्थ फलप्रदः॥5॥
अनेन मंत्र जापेन, तथा मंत्र श्रवणेन च।
भूत भीति महामारी, शीघ्रं नश्यति संकटान्॥6॥
मंत्रस्य मंत्र रूपेण, जिनत्व तिष्ठति ध्रुवम्।
तत्र तुष्टिं पुष्टिं च, शांति कुरुस्य मंगलम्॥7॥
इदं महावीर स्तोत्रं, यः पठेत त्रियोगतः।
'विशद' ऋद्धि सिद्धिं च, श्री यं स लभते नरः॥8॥

***

जाप - ॐ ह्रीं सर्वविघ्न व्याधि विनाशन समर्थाय श्री महावीर जिनेन्द्राय नमः।

गणधर स्तवन

ऋषभ जिनेशः भुवनेक सूर्यः, गणिप्रधानः श्री वृषभसेनः।
अजेय शक्तिर्-ह्यजितो जिनेशः, योः सिंहसेनादि गण नायकम् च॥१॥

पुनातु ते सम्भवनाथ चित्तं, श्री चारुषेणादि गणी ऋषीशं।
गुणै-रनन्तै-रभिनन्दनोऽसा, श्री वज्रनाभ्यादिगणे महन्तं॥२॥

अर्हन् सुमत्यै सुमति जिनंतं, अमर गणेशं अजरामरत्वं।
पद्म प्रभः पद्म समं शरीरं, प्रथम गणेशं श्री वज्र चामर॥३॥

गणाधिपै श्री बलराज मुख्या, वन्दे सुपार्श्वं प्रणमामि नित्यं।
चन्द्रप्रभः वागमृतांशुभि यो, दत्तं गणेशं गण नायकं च॥४॥

त्रैलोक्य पूज्या जिन पुष्पदन्तः, विदर्भ गणनायक प्रधानः।
श्री शीतलेशो भुवनत्रयेशः, शीतं कुरु मे गण्यानगारः॥५॥

जिनः श्रेयान् श्रेयसि मार्ग लग्नान्, श्रियं विदध्यात् कुन्थु गणेशं।
सदा प्रपूज्यो जिन वासुपूज्यः, धर्मेश्वरै मुख्य गणाधिपैश्च॥६॥

श्री मंदरादिक गणी प्रधानं, नमामि नित्यं विमलं जिनेन्द्रं।
अनन्ततायाति जिनः प्रसादात्, गणी जयादि परिपूजयामि॥७॥

गणाधिपारिष्टसेनादि पूज्यं, श्रीधर्मनाथ सिरसा नमामि।
शांतिं भवेत् सर्व जगज्जनानां, चक्रायुधादि महागणेन्द्रं॥८॥

प्रभु कुन्थुनाथं कृपापरत्वं, स्वयंभ्वादि गणि पंच त्रिशत्।
पूज्यं अरस्त्वं किल वीतराग, कुम्भादि गणनायकस्तवेव॥९॥

श्री मल्लिनाथो भुवनेक नाथ!, गणी विशाखादि परं पवित्रं।
महाव्रतेशं मुनि सुव्रतस्त्वं, श्री मल्लि गण नायकं विशेष्यं॥१०॥

नागेन्द्र वद्यं नमि नामधेयं, सुप्रभ गणेशं त्रिलोक्य पूज्यं।
वरदत्त मुख्या गणेन्द्र देवः, श्री नेमिनाथो पद पद्म सेवा॥११॥

महामनः पार्श्व जिनः स्तुवेत्वां, स्वयंभ्वादि गणनायकस्तथा।
श्री गौतमादि 'विशद' गणेन्द्रं, त्वांनौमि भो वीर! निजात्मशुद्धयैः॥१२॥

(अनुष्टुप छन्दः)

देवेन्द्रैस्तु परिपूज्यो, योगेन्द्रै अनुचिन्त्ययहः।
चक्रेशै - रभिवन्द्यो स्यात्, अर्हं वन्दे गणेशिनः॥१३॥

पार्श्वनाथ स्तोत्रम्

ॐ नमः पार्श्वनाथाय विश्व चिन्तामणि युते।
ह्रीं धरणेन्द्र वैरोट्या पद्मावती युतायुते॥ १॥

शान्ति तुष्टि महापुष्टि धृति-कीर्ति विधापिते।
ॐ ह्रीं दिङ् व्याल वेताल, सर्वाधि-व्याधिनाशिने॥२॥

जया जिताख्या विजयाख्या-ऽपराजितयान्वित।
दिशांपाले ग्रहैर्यक्षेर्विद्यादेवीभि-रन्वित॥ ३॥

ॐ असिआउसाय नमस्, तत्र त्रैलोक्यनाथताम्।
चतुःषष्ठि सुरेन्द्रास्ते, भासन्ते छत्रचामरै॥ ४॥

श्री शंखेश्वरमण्डन् पार्श्वजिन! प्रणत कल्पतरू।
कल्प चूरय दुष्ट व्रातं, पूरय मे वांछित नाथ!॥५॥

परमेश्वर स्तोत्रम्

(तोटक छन्दः)

जगदीश! सुधीश! भवेश! विभो!, परमेश! परात्पर पूत पितः।
प्रणतं पतितं हत बुद्धि बलं, जन तारण तारय तापतिकम्।।1।।
गुणहीन सुदीन मलीन मतिं, त्वयि पातरि दातरि चापरतिम्।
तमसा रजसाऽवृत वृत्तिमिमं, जन तारण तारय तापतिकम्।।2।।
मम जीवन मीन-मिमं पतितं, मरु घोर भुवीह सुवीह-महो।
करुणाब्धि चलोर्मिजला नयनं, जन तारण तारय तापतिकम्।।3।।
भव वारण कारण कर्म ततौ, भव सिन्धु जले मम मग्न मतः।।
कारुण्य समर्प्य तरि त्वरितं, जन तारण तारय तापतिकम्।।4।।
अतिनाश्य जनुर्मम पुण्यरुचे, दुरितौघभरैः परिपूर्ण भुवः।
सुजघन्य-मगण्यम पुण्यरुचिं, जनतारण तारय तापतिकम्।।5।।
भवकारक नारक हारक हे!, भवतारक! पातक दारक हे।
सर्वज्ञ हर किंकर कर्मचयं, जन तारणं तारय तापतिकम्।।6।।
तृषितश्चिरमस्मि सुधां हितम्-ऽच्युत चिन्मयदेहि वदान्य वरं।
अति मोह वशेन विनष्ट कृतं, जन तारण तारय तापतिकम्।।7।।
प्रणमामि नमामि नमामि भवं, भव जन्म कृति प्रणिदूषनकम्।
योगीन्द्र-मनन्त-मितं शरणं, जन तारण तारय तापतिकम्।।8।।

(अनुष्टुप छन्दः)

यः परमेश्वर स्तोत्रं, पठति सृणोतिस्तथा।
'विशद' ऋद्धि समृद्धिं, प्राप्ते च शिव सौख्यदं।।

जिनेन्द्र शरण स्तोत्रम्

न ताते न माता न बंधुर्न दाता, न पुत्रो न पुत्री न भृत्यो न भर्ता।
न जाया न विद्या न वृत्तिर्ममैव, गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका जिनेन्द्रः।।1।।

भवाब्धाव-पारे महादुःख भीरुः, प्रपात प्रकामी प्रलोभी प्रमातः।
कु संसार पाश प्रबद्ध सदाऽहं, गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका जिनेन्द्रः।।2।।

न जानामि दानं न च ध्यान योगं, न जानामि तंत्रं न च स्तोत्र मंत्रम्।
न जानामि पूजां न च न्यास योगम्, गतिस्त्वं त्वमेका जिनेन्द्रः।।3।।

न पुण्यं जानामि न जानामि तीर्थं, न जानामि मुक्तिं लयं वा कदाचित्।
न जानामि भक्तिं व्रतं वापि देवः, गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका जिनेन्द्रः।।4।।

कुकर्मी कुसङ्गी कुबुद्धिः कुदासः, कुलाचार हीनः कदाचार लीनः।
कुदृष्टिः कुवाक्य प्रबन्ध सदाऽहम् , गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका जिनेन्द्रः।।5।।

प्रजेशं 'रमेशं, महेशं, सुरेश' दिनेशं निशीथेश्वरं वा कदाचित्।
न जानामि चान्यत् सदाऽहं शरण्ये, गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका जिनेन्द्रः।।6।।

अनाथो दरिद्रो जरा रोग युक्तो, महा क्षीण दीनः सदा जाड्य वक्त्र।
योगीन्द्रसागर प्रभो! दीन हीनं, गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका जिनेन्द्रः।।8।।

(अनुष्टुप छन्दः)

जिनेन्द्र शरण स्तोत्रं, मोक्ष पद प्रदायकं।
सौख्यानन्त मूलं स्यात्, 'विशद' सिद्धिप्रदं तथा।।

दशक्षलक्षण स्तोत्रम्

(इन्द्रवज्रा छन्दः)

या भव्यजीवान् भुवि भावुकानां,
सङ्गं सवित्रीव सदा ब्रवीति।
दुर्जेय जन्तून् क्षणतो विजेतु,
महीं क्षमां तामह-मर्चयामि।।१।।

सर्वत्र सद्भाव विशोभमानं,
मानच्युतौ जातमिहातिमानम्।
तं मार्दवं मानव धर्ममार्य,
प्रार्थ्यं प्रवन्दे शतधा प्रभक्त्या।।२।।

सर्वत्र निश्छद्म दशासु वल्ली,
प्रतान-मारोहति चित्त-भूमौ।
तपो यमोद्भूत फलै-रवन्ध्या,
शाम्याम्बु सिक्ता तु नमोऽस्त्वार्जवम्।।३।।

कस्यापि तत्रास्ति न काचिदिच्छा,
पावित्र्य संमन्दिरमिन्द्र वन्द्यम्।
तं लोभ लोपे किल जातमात्म्यं,
धर्मं सदा शौचमहं नमामि।।४।।

सत्येन मुक्तिः सत्येन भुक्तिः,
स्वर्गेऽपि सत्येन पद प्रसक्तिः।
सत्यात्परं नास्ति यतः सुतत्त्वं,
सत्यं ततो नौमि सदा सभक्तिः।।५।।

मनो वचः कायभिदानुमोदा,
विभंगतश्चेन्द्रिय जन्तु रक्षा।
वर्वर्ति सत्संयम बुद्धि धीरास्-
तेषां सपर्याविधिमाचरामि।।६।।

तपो विभूषा हृदयं बिभर्ति,
येषां महाघोर तपो गुणाग्रयाः।
इन्द्रादि धैर्य च्यवनं स्वतस्त्यं,
तया युता एव शिवैषिणः स्युः।।७।।

त्यागं विना नैव भवेन्नु मुक्तिः
त्यागदृते नास्ति हितस्य पन्थाः।
त्यागो हि लोकोत्तरमस्ति तत्त्वं -
यस्मात्ततोऽहं किल तं नमामि।।८।।

आत्मस्वभावा-दपरे पदार्थाः,
न मेऽथवाऽहं न परस्य बुद्धिः।
येषामिति प्राणयति प्रमाणं,
तेषां पदार्चां करवाणि नित्यम्।।९।।

रंभोर्वशी - यन्मनसो - विकारं,
कर्त्तुं न शक्ताऽऽत्म गुणानुभावान्।
शीलेशतामद - धुरुत्तमार्थां,
यजामि तानार्यवरान्मुनीन्द्रान्।।१०।।

दश लाक्षणिको धर्मः, उत्तम क्षमादयेन् स।
धारयति यो 'विशद', प्राप्तीदे परमां गतिं।।११।।

वैराग्याष्टकं

(शिखरिणी छन्दः)

गृहे पर्यन्तस्थे द्रविण कण मोषं श्रुतवता,
स्व-वेश्मन्यारक्षा क्रियत इति मार्गोऽयमुचितः।
नरानोद्वाद्गेहात् प्रतिदिनं समाकृष्यनयतः।
कृतान्तात् किं शङ्.का न हि भवति रजाग्रत जनः।।1।।

क्वचिद्-विद्-वद्-गोष्ठी क्वचि-दपि सुरामत्त कलहः,
क्वचिद्-वीणा वादः क्वचिदऽपि च हा हेतिरुदितम्।
क्वचिद्-रम्यारामा क्वचिदऽपि जराजर्जर तनुर्।
न ज्ञातं (जाने) संसारः कि-ममृतमयः किं विषमयः।।2।।

वपुः कुब्जीभूतः गति-रपि तथा यष्टि शरणा,
विशीर्णा दन्तालिः श्रवण विकलं श्रोत्रृ युगलम्।
शिरः शुक्लं चक्षुस्तिमिर पटलै-रावृत - महो,
मनो मे निर्लज्जं तदपि विषयेभ्यः स्पृहयति।।3।।

अजानन्दाहात्म्यं पततिशलभो दीप दहने,
समीनोऽप्यज्ञानाद्-वडिशयुत-मश्नाति पिशितम्।
विजानन्तोऽप्येते वयमिह विपज्जाल जटिलान्,
न मुंचया कामान्-नहो गहनं मोह महिमा।।4।।

(शार्दूलविक्रीडित छन्दः)

आदित्यस्य-गता गतै-रह रहः संक्षीयते जीवतं,
व्यापारैर्बहु कार्यभार गुरुभिःकालो न विज्ञायते।
दृष्ट्वा जन्म जरा विपत्ति मरणं, त्रासं च नोत्पद्यते,
पीत्त्वा मोहमयीं प्रमाद मदिरा-मुन्मत्त भूतं जगत्।।5।।

निःस्वोवष्टि शतं शती दशशतं लक्षं सहस्राधिपो,
लक्षेशः क्षितिपालतां क्षितिपतिश्चक्रेशतां वांछति।
चक्रेशः सुरराजतां सुरपतिर्ब्रह्मास्पदं वांछति,
ब्रह्मा शैव पदं शिवो व हरिपदं ह्याशावधिं को गतः।।6।।

जीर्णो एव मनोरथाः स्वहृदये स्यातं जरा यौवनं,
हन्ताङ्गेषु गुणाश्च वन्ध्य फलतां यातागुणज्ञैर्बिना।
कियुक्तं सहसाम्युपैति बलवान् काल कृतान्तोऽक्ष्मी,
ह्यज्ञात स्मर जिनेन्द्राघ्रि युगलं मुक्त्वास्ति नान्यागति।।7।।

आशा नाम नदी मनोरथ जलं, तृष्णा तरंगाकुला,
राग ग्राहवती वितर्क विहगा धैर्य द्रुमध्वंसिनी।
मोहावर्तसुदुस्तरातिगहना प्रोत्तुङ्ग चिन्ता तरी,
तस्याः पारगता विशुद्ध मनसो नन्दंति योगीश्वराः।।8।।

(अनुष्टुप छन्दः)

यः पठेत् वैराग्याष्टकं, प्राप्ते वैराग्य भावनां।
''विशद'' ज्ञान प्राप्ते सः, ऋद्धि-सिद्धि प्रदायकं।।

विशद द्वादश अनुप्रेक्षा

(उपजाति छन्द)

तत्राप्-यनित्याऽशरणाऽशुचित्वं, संसारिताऽन्यत्व युतैकता वा।
धर्माऽस्रव संवर निर्जरे च, लोक प्रभावः स च बोध्य-लाभः।।

अनित्य भावना-1

यद् यौवनं धान्य गवादि सम्पत्, भोग्यानि दासाः परिवार पूरः।
सौख्यं च लोकस्य समं क्षणस्थं, सोऽयं विवेकोऽय-मनित्य भावः।।

अशरण भावना-2

इन्द्रादि देवाः गणिताश्-शरण्याः, ते चाऽपि कालेन सुखं विशीर्णाः।
मन्त्रौषधैर्-वा कवचैर्-मनुष्यः, मृत्योर् न रक्ष्योह्-यशरण्यभावः।।

संसार भावना-3

संसार चक्र भ्रमिरूढ़ लोकः, कुर्वन परावर्त्तन पंचकं तु।
दुःखात्मकं सर्वमिदं तु विन्ते, संसार भावः कथितः सुविज्ञैः।।

एकत्व भावना-4

एकः फलं संचिनुते प्र-भुङ्क्ते, नान्यस्समं गच्छति स्वार्थ सार्थः।
एकत्वभावो ह्यमितः प्रबोधः, सोऽयं तुरीयो ह्यनुप्रेक्षभावः।।

अन्यत्व भावना-5

दुग्धे जले सम्मिलिते न एक्यं, जीवस् तथा देह गतो विभिन्नः।
भिन्नास्तथा ते धन धाम-पुत्राः, अन्यत्व भावो निकलो वरात्मा।।

अशुचि भावना-6

रक्ताद्यपूतैः-रचितेऽपि देहे, मिथ्याभिमानं कथमेष मोहः।
एवं तु वीभत्सवपुर्-विरक्तिः, भावोऽशुचिः प्रोच्यत आत्मविज्ञैः।।

आस्रव भावना-7

वाक्काय चित्तेष्वति चंचलेषु, कर्मास्रवो ह्यात्मगतिं दुनोतिः।
तस्यावरोधाय कृतः प्रयत्नो, विज्ञैः धृता ह्यास्रव भावनाख्या।।

संवर भावना-8

कर्मास्रवाणा-मवरोध यत्नो, ह्यध्यात्मनां संवर भावनाख्या।
मोक्षस्य मूलं सततं प्रसेच्यं, आनन्द माधुर्य फलाय सद्भिः।।

निर्जरा भावना-9

स्वाभाविकीं देह जरां विनैव, यत्संत्तपोभिश्चित कर्म कार्श्यम्।
तन्निर्जराख्यं श्रितमोक्ष तीरम्, तत्प्राप्ति योगः कथितो हि निर्जरा।।

लोक भावना-10

षड्द्रव्य संघं हि जगत् स्वभावात्, सर्गस्थिती नाशदशा न चान्यैः।।
साम्यं विना दुःखगतिर्-विसह्या, स्याद्भावना चेत् खलु लोकभावः।।

बोधि दुर्लभ भावना-11

यच्चात्मनः सम्यग्ज्ञान प्राप्तिः, सुदुर्लभा बोधिरिति प्रतीतिः।
स्वर्गादि प्राप्तेरपि या विशिष्टा, सा सेवनीया खलु बोधि दुर्लभा।।

धर्म भावना-12

रागादि शून्यश्च चरित्रबोधः, सद्दर्शनं यच्च तपो व्रतादि।
तद्-धर्मरूपं प्रतिबोध सत्यं, धर्माख्य भावो ह्यनुप्रेक्षितो बुधैः।।

अनुप्रेक्षा का फल

यतो विशदानुप्रेक्षा, यः पठन्ति पुनः पुनः।
तथा वैराग्यं प्राप्तं, 'विशदं' मोक्ष कारणम्।।

सोलहकारण भावना

'विशद' तीर्थ कर्तृस्यु-राकर्ण्यन्ते यदा तदा।
मोक्ष सौख्यस्य कर्तृणि, कारणान्यपि षोडश।।

(अनुष्टुप छन्द)

असत्य-सहिता हिंसा, मिथ्यात्वं च न दृश्यते।
अष्टाङ्गं यत्र संयुक्तं, दर्शनं तद्विशुद्धये।।1।।

दर्शन-ज्ञान-चारित्र-तपसां यत्र गौरवम्।
मनो-वाक्-काय-संशुद्ध, या ख्याता विनय-स्थितिः।।2।।

अनेक-शील-संपूर्ण, व्रत-पञ्चक-संयुतम्।
पञ्चविंशति-क्रियात्र, तच्छीजव्रत-मुच्यते।।3।।

काले पाठः स्तवो ध्यानं, शास्त्रे चिन्तागुरौ नतिः।
यत्रोपदेशना लोके, शास्त्र-ज्ञानोपयोगता।।4।।

पुत्र-मित्र-कलत्रेभ्यः, संसार-विषयार्थतः।
विरक्तिर्जायते यत्र, स संवेगो बुधैः स्मृतः।।5।।

जघन्य-मध्यमोत्कृष्ट पात्रेभ्यो दीयते भृशम्।
शक्त्या चतुर्विधं दानं, सा ख्याता दान-संस्थितिः।।6।।

तपो द्वादश-भेदं हि, क्रियते मोक्ष-लिप्सया।
शक्तितो भक्तितो यत्र, भवेत्सा तपसः स्थितिः।।7।।

मरणोपसर्गा-रोगादिष्टवियोगा-दनिष्ट संयोगात्।
न भयं यत्र प्रविशति, साधु-समाधिः स विज्ञेयः।।8।।

कुष्ठोदर-व्यथा-शूलैर्-वात-पित्त शिरोर्तिभिः।
कास-श्वास-जरा-रोगैः, पीडिता ये मुनीश्वराः।।
तेषां भैषज्यमाहारं, शुश्रुषा पथ्यमादरात्।
यत्रैतानि प्रवर्तन्ते, वैयावृत्त्यं तदुच्यते।।9।।

मनसा कर्मणा वाचा, जिन-नामाक्षरद्वयम्।
सदैव स्मर्यते यत्र, सार्हद्भक्तिः प्रकीर्तिता।।10।।

निर्ग्रन्थ-भुक्तितो भुक्तिस्-तस्य द्वारावलोकनम्।
तद्-भोज्यालाऽभतो वस्तु, रस त्यागोपवासता।।
तत्पाद-वन्दना पूजा, प्रणामो विनयो नतिः।
एतानि यत्र जायन्ते, सूरि-भक्तिर्-मता च सा।।11।।

भव-स्मृति-रनेकान्त-लोकालोक-प्रकाशिका।
प्रोक्ता यत्रार्हता वाणी, वर्ण्यते सा बहुश्रुतिः।।12।।

षड्-द्रव्य-पञ्च-कायत्वं, सप्त तत्त्वं नवार्थता।
कर्म-प्रकृति-विच्छेदो, यत्र प्रोक्तः स आगमः।।13।।

प्रतिक्रमस्तनूत्सर्गः, समता वन्दना स्तुतिः।
स्वाध्यायः पठ्यते यत्र, तदाऽवश्यक मुच्यते।।14।।

जिन-स्नानं श्रुताख्यानं, गीत-वाद्यं च नर्तनम्।
यत्र प्रवर्तते पूजा, सा सन्मार्गप्रभावना।।15।।

चारित्र गुण युक्तानां, मुनीनां शील-धारिणाम्।
गौरवं क्रियते यत्र, तद्वात्सल्यं च कथ्यते।।16।।

।। इति सोलह कारणम्।।

नवदेव भक्ति

अरिहंत (वंशस्थछन्दः)

सदोदितानन्त विभूति तेजसे
स्वरूप गुप्तात्म महिम्नि दीप्त्यते।।
विशुद्ध दृग्बोधमयैक चिद्भृते,
नमोऽस्तु तुभ्यं जिन विश्व भासिने।।1।।

(सिद्ध)

सिद्धः विकारापगता अदेहाः,
सन्निर्मलाः रूप-रसादि हीनाः।
सिद्धां दशां तामविनाशनीं ते,
प्राप्ताश्चिदानन्दमयीं रमन्ते।।2।।

(आचार्य)

वचोंऽशुभिर्-भव्य मनः सरोजं
निद्रां न वैबोधित-मेति भूयः।
कुर्वन्तु दोषादयनोदिनस्तेः,
चर्यामगह्यो मम सूरि सूर्याः।।3।।

(उपाध्याय)

विनेय सस्योत्पल पुण्यवारिः
प्रस्यन्दनानन्दन मेघचन्द्रः।
श्री पाठकांश्च प्रतिवंद्य पादौ,
वर प्रदस्तान्मम् योगिवर्गः।।4।।

(साधु)

परिग्रहारम्भ विहीन कालः
पंचेन्द्रियाप्तैर्-विषयैर्विरक्तः।
ध्यानी तपः स्वाध्ययन प्रसक्तः
पूज्यो मुनि सः भुवने प्रशस्तः।।5।।

(जिनधर्म)

जीवः दयालुः परिमोक्ष हेतुः
आचार मार्गो हिंसा प्रहीणः।
सम्यक् स धर्मो जिनदेव सूक्तः
सेव्यस्तु नित्यं परिमोक्ष कामैः।।6।।

(शास्त्र)

पूर्वापर व्याघाताद् विमुक्ता,
युक्त्या कुतर्कैर्नहि खण्डनीया।
तीर्थंकराप्त प्रतिवादिता वाक्,
शास्त्रं हि सम्यक् परिभाषणीयम्।।7।।

(चैत्य)

प्रातिहार्याष्टौ युत वीतराग,
प्रतिमाऽकृत्रिम च मृत्युञ्जयिना।
जगतत्रये कृत्रिमा-कृत्रिमाश्च
संस्तौमि सर्वं शिवसौख्य सिद्धयै।।8।।

(चैत्यालय)

घण्टा ध्वजा मणिमय तोरणाद्यै,
भृंगार प्रभृति च मंगलाष्टौ।
प्राकार त्रय मानस्तंभ स्तूपैः,
चैत्यालय अर्हत् बिम्बयुक्तः।।9।।

(बसन्ततिलका छन्दः)

अर्हन्त सिद्ध जिनराज नमोस्तु तुभ्यं
आचार्य वर्य उपाध्याय सुसाधु सिन्धु।
जिनधर्म आगम जिनालय पूजनीया,
जिनचैत्य चैत्यालयं 'विशदं' नमामि।।10।।

अञ्चलिका

इच्छामि भन्ते! नवदेव भत्ति कओसग्गोकओ तस्सालोचेउं इमम्मि अरहंत सिद्ध आयरिय उवज्झाय सव्वसाहूजिणधम्मो, जिणागम, जिण चेइय जिणालयं, नवदेव सया णिच्च कालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मखओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिन गुण सम्पत्ति होउ मज्झं।

लघु चारित्र भक्ति

(मालनी छन्दः)

अतुल सुख निधानं सर्व कल्याण बीजं,
जनन-जलधि-पोतं भव्य सत्वैक पात्रम्।
दुरित-तरु कुठारं पुण्य तीर्थं प्रधानं,
पिवतु जित विपक्षं दर्शनाङ्गं सुधाम्बुः।।१।।
दुरित तिमिर हंसं मोक्ष लक्ष्मी सरोजं,
मदन-भुजग-मंत्रं चित्तमातंङ्ग सिंहम्।
व्यसन घन समीरं विश्वतत्त्वैक दीपं,
विषय सफर जालं ज्ञानमाराधयत्वम्।।२।।
मुनिजन नित सेव्यं सौख्य संतोष बीजं,
दिवि शिव शुभ मार्गं पुण्य वृक्षस्य कन्दम्।
सुभग-जनक सारं कीर्ति विस्तीर्ण जातं,
भजतुसच्चरित्रं त्वं सदा मुक्ति हेतो।।३।।
स्मरमपि हृदि येषां ध्यान-वह्नि-प्रदीप्ते,
सकल भुवन मल्लं दह्यमानं विलोक्य।
कृतभिय इव नष्टास्ते कषाया न तस्मिन्,
पुनरपि हि समीयुः तपाचारो जयन्ति।।४।।

निहित सकलघाती निश्चला-ग्रावबोधो,
गदित परमधर्मो वीर्यानन्त गुणोघं।
त्रितय तनु विनाशान्निर्मलः शर्मसारो,
दिशतु सुखमनन्तं शान्त सर्वात्मको नः।।५।।

नरक गृह कपाटं स्वर्ग मौक्षेक मित्रं,
जिन गणधर सेव्यं सर्व कल्याण बीजम्।
स्व-पर हित-मदोषं जीवहिंसादि त्यक्तं,
'विशद' वीर्याचारोऽअसद सङ्गं विमुक्तम्।।६।।

(चारित्र का फल)

विमद-ममरमान्यं तीर्थनाथैर्-निषेव्यं,
विविध गुणगरिष्ठैः सेवितं मुक्तिबीजम्।
विमल गुण निधानं सर्वकल्याणमूलं,
गत सकलविकारं चारित्राराध्य भवन्तं।।७।।

यम-दम-शम जातं सर्वकल्याण बीजं,
सुगति गमन हेतुं तीर्थनाथैः च प्रणीतम्।
भवजलनिधिपोतं सार पाथेयमुच्चैस्,
त्यज सकल विकारं चारित्राराध्य त्वम्।।८।।

दर्शन ज्ञान चरित्रात्, तपश्वीर्याचारस्तथा।
पंचैते जगद् पूज्या, "विशद" मुक्तिदायकाः।।९।।

अञ्चलिका

इच्छामि भन्ते ! चारित्त भत्ति काउस्सग्गो कओ, तस्स आलोचेउं सम्मणाणजोयस्स सम्मत्ताहिट्ठियस्स, सव्वपहाणस्स, णिव्वाणमग्गस्स, कम्मणिज्जर-फलस्स, खमाहारस्स, पञ्चमहव्वय सम्पण्णस्स, तिगुत्तिगुत्तस्स, पञ्चसमिदिजुत्तस्स, णाणज्झाण साहणस्स, समया इव पवेसयस्स, सम्मचारित्तस्स णिच्चकालं, अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं, समाहिमरणं जिणगुण संपत्ति होउ मज्झं।

॥ इति श्री चारित्र भक्तिः ॥

***

ज्येष्ठत्वं जन्मना नैव, गुणैर्ज्येष्ठत्वमुच्यते।
गुणाद् गुरुत्वमायाति, दुग्धं दधि घृत क्रमात्।।

साधूनां दर्शनं पुण्यं, तीर्थभूता हि साधवः।
तीर्थं फलति कालेन, सद्यः साधु समागमः।।

विशद चारित्राष्टकं

(घत्ता छन्दः)

जय शिव-सुखकारण, दुर्गति-वारण,
सकल-सत्त्व-सूचित-करणं।
पर-नय-कृत-दूषण, मुनि-गण-भूषण,
भव्य-निवह-संस्तुत-चरणं।।१।।

(तोटक छन्द)

करुणा-रस-पूरितयात्महितं,
बहु-भक्ति-परामरनाथनुतम्।
परमं शिव सौध निवासकरं,
चरणं प्रणमामि विशुद्धतरम् ।।२।।

शुचि-केवल-केलि-कला-सदनं,
जित-सूचित-विश्व-विपन्मदनम्।
परम-शिव-सौध-निवास-करं,
चरणं प्रणमामि विशुद्धतरम्।।३।।

'विशदा'ऽगमविन्मुनिनाथ धनं,
दुरितौघ धनञ्जय चण्डघनम्।
परमं शिव सौध निवास करं,
चरणं प्रणमामि विशुद्धतरम्।।४।।

रमणीय-विमुक्ति-रमा-कमलं,
सुविवेककरं हत दुःख-मलम्।
परमं-शिव-सौध-निवास-करं,
चरणं प्रणमामि विशुद्धतरम्।।५।।

ममता-रजनी-दिवसाधिपतिं,
प्रकटीकृत-सत्य परात्म-हितम्।
परमं शिव-सौध-निवास-करं,
चरणं प्रणमामि विशुद्धतरम्।।६।।

जनताभिमतार्थ करं सुखदं,
भव-भीति-हरं कृत-सिद्ध-पदम्।
परमं शिव-सौध-निवास-करं,
चरणं प्रणमामि विशुद्धतरम्।।७।।

मद-राग-कषाय-रजः-शमनं,
भव-दुर्जय-दानव-सं-दमनम्।
परमं शिव-सौध-निवास-करं,
चरणं प्रणमामि विशुद्धतरम्।।८।।

इत्थं चारित्र—रत्नं यः, संस्तवीति पवित्रधीः।
अभिप्रेतार्थ-संसिद्धिं, स प्राप्नोत्यचिरान्नरः।।९।।

चारित्र स्तुति

वारणं दुर्गतेः स्वर्गाऽपवर्ग—सुख—कारणम्।
निवृत्ति-लक्षणं पाप-क्रियायाश्चरणं स्तुवे।।१।।
सामायिकादयो भेदा, यस्य पञ्च प्रपञ्चि ताः।
चरणं शरणं यामि, तन्निर्वाणैक-कारणम्।।२।।
व्रतानि पञ्च पंचैव, प्रोक्ताः समितयस्त्रयः।
गुप्तयो व्रतमित्याप्तैस्-त्रयोदशविधं स्मृतम्।।३।।
संसार-पल्वलोद्भूतैर्-विलिप्तः कर्म-दर्दमैः।
विशुद्ध्यति किलात्माय-मंजसा चरणाम्भसा।।४।।
नरोऽपि यत्सुराधीश-शिरोरत्नत्वमर्चति।
जगत्त्रयैक-पूज्यस्य, तच्चारित्रस्य वैभवम्।।५।।
चरणं स्वर्गतेर्मूलं, चरणं मुक्तिसाधनम्।
चरणं धर्म-सर्वस्वं, चरणं मंगलं परम्।।६।।
अनन्त-सुख—सम्पन्नो-येनात्माऽयं क्षणादपि।
नमस्तस्मै पवित्राय, चारित्राय पुनः पुनः।।७।।
व्रत समिति गुप्तिश्च, चारित्रं यः त्रयोदशम्।
पालयन्ति यो मुनयः, यांति ते 'विशदं' शिवः।।८।।
आनन्द-रूपोऽखिलकर्म मुक्तो, निरत्ययः ज्ञानमयः सुभावः।
गिरामगम्यो मनसोऽप्यचिन्त्यो, भूयान् मुदै वः पुरुषाः पुराणाः।।९।।

श्री पंच महागुरु भक्ति

(इन्द्रवज्रा छन्दः)

श्रीमांस्त्रिलोक्या कृतपाद सेवो,
यः सर्व सत्त्वामृत दिव्यरावः।
स्तादिष्टदः सोऽनुपमप्रभावः,
अर्हन्त देवो! भव-कक्ष-दावः।।1।।

अष्टौ तदा कर्मततिं प्रणाश्य,
सम्यक्त्वकाद्यष्ट गुणान् भजन्ति।
संसार क्षारोदधिमुत्तरन्तो,
मुक्तास्तु ते पारमुपाश्रयन्ति।।2।।

ये चारयन्ते चरितं विचित्रं,
स्वयं चरन्तो जनमर्चनीयाः।
आचार्यवर्या विचरन्तु ते मे,
प्रमोद माने हृदयाऽरविन्द।।3।।

येषां तपः श्रीरनघा शरीरे,
विवेचका चेतसि तत्त्व बुद्धिः।
सरस्वती तिष्ठति वक्त्र-पद्मैः,
पुनं तु तेऽध्यापक पुंगवा वः।।4।।

जिनेन्द्र मुद्रा गुणमण्डिताय,
कमण्डलु पिच्छि सुशोभिताय।
पद्म प्रशंसङ्कित पद युगाय,
नमोऽस्तु तस्मै मुनिमण्डलाय।।5।।

(बसन्ततिलका छन्द)

अर्हत्सुसिद्ध-गुरुसूरि-सुपाठकांश्च,
साधून् मुदा प्रणम सर्व-मुमुक्षवर्गात्।
हे सिद्धि कान्त 'विशद' शिव पंथ नेता,
परमेष्ठि पंच तव पाद युगं प्रवन्दे।।6।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते! पंचमहागुरु-भक्ति काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं। अट्ठ-महापाडिहेर-संजुत्ताणं, अरहंताणं, अट्ठगुण-संपण्णाणं, उड्ढलोय-मत्थयम्मि पइट्ठियाणं, सिद्धाणं अट्ठ-पवय-णमउ-संजुत्ताणं आइरियाणं, आयारादि-सुदणाणो वदेसयाणं, उवज्झायाणं, ति रयण गुण-पालण-रयाणं सव्वसाहूणसयां, णिच्चकालं, अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइ-गमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झ।

।। इति श्री पंचगुरु भक्ति।।

लघु नंदीश्वर भक्ति

नन्दीश्वराभिदे द्वीपे, द्वापञ्चाशज्-जिनालये।
तत्र प्रत्येक चैत्यस्य, भक्तिं कुर्वे शुभाप्तये।।

(बसंत तिलका-छन्द)

नंदीश्वराष्टम विशाल मनोज्ञ रूप।
द्वीपेर्-जिनेश्वर गृहांश्च भवन्ति युग्मं।।
पंचाशदिन्द्र महितान् प्रयजामि सिद्ध्यै।
देवेन्द्र नागपति चर्चित चारु बिम्बान्।।1।।
भवनेषु लक्षद्वासप्तति सप्तकोटी।
ज्योतिष्क व्यन्तर गृहेष्वसंख्यज्ञेयं।।
स्वर्गे त्रिविंशति सहस्रं सप्तनवति।
लक्षं चतु-रशीति विमाने जैन गेहं।।2।।
पञ्चाशदप्ट चतुशतशो मध्य लौके।
एकोऽशीतिशतशोचतु सप्त नवति।।
सहसं च लक्ष षट् पंचाशदस्ट कोटी।
लोकत्रये च जिनसद्म सुपूजनीयाः।।3।।
अष्टम सुद्वीप नन्दीश्वर सिन्धु मध्ये।
पूर्वादि दिक्षु अंजन गिरि मध्य द्वीपे।।
तस्या चतुर्दिशि सुदधिमुख वापि मध्ये।
वापि सुबाह्य कोंणे रतिकर गिरीन्द्रः।।4।।
आषाढ़ कार्तिक सुफाल्गुन शुक्ल पक्षे।
चातुर्निकाय सुर वृन्द सुभक्ति पूर्वम्।।

नन्दीश्वराख्य वर पर्वणि संयजेस्मिन्।
त्रिभक्ति संयुत यजे शुभ वस्तु युक्तैः।।5।।
श्रीपाद पद्म युगलं सलिलैर्जिनस्य।
प्रक्षाल्य तीर्थ जल पूत तमोत्तमांगं।।
आह्वान-मंबु कुसुमाक्षत चन्दनाद्यैः।
संस्थापनं च विदधन्ते च सन्निधानं।।6।।
श्री मद्गणधिपतयो यतयोमुनीशः।
सत्साधवो विबुध वृन्द विवन्द्य धीशः।।
नागेन्द्र चन्द्र मनुजेन्द्र सुरेन्द्र लक्षान्।
क्षेमं दिशन्तु यजते विशदं गिरीशं।।7।।
देवा सुरासुर शतेन्द्र समर्चितेभ्यः।
घण्टा ध्वजादि सह तोरण पीठयुक्ता।।
वेद्योपरि च जिनबिम्ब मनोहरेभ्यः।
त्रैलोक्य पूज्य विशदं तु जिनालयेभ्यः।।8।।
अतिशय विशेष चतुश्-त्रिंशत् प्रतिहार्य।
प्राप्ते चतुष्टय अनन्त च दोष हीना।।
तीर्थेश सप्तति शतं त्रयकाल वर्ति।
जिनबिम्ब कृत्रिमाऽकृत्रिम् पूजनीया।।9।।
छत्रत्रयासन सुचामर तर्वशोकैः।
भाश्चक्र दिव्यध्वनि आनक पुष्प वृष्टि।।
सत्प्रतिहार्य विभवैर्-जिन भाषतेत्व।
देवासुरैर्-नर गणैश्च वृतोऽप्यजस्रं।।10।।
यः भद्रशालवन नन्दन सोमनस्यैः।
भातीह पाण्डुक वनेन् च शाश्वतोऽपि।।

चैत्यालयान् प्रतिवनं चतुरो विधत्ते।
गिरि पंच मेरु स्थित जिनपं नमामि।।11।।

किं जल्पितैर्बहुविधै भुवनास्ति किंचित्।
यन्नाम जातु नहि वश्यमुपैति भक्त्या।।
दोषैर्युतोऽत्र जिनपम भवताम् प्रसादात्।
लोकेऽत्र देहभृत दृष्टफलाभवन्ति।।12।।

अञ्चलिका

इच्छामि भन्ते ! णंदीसर भत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं णंदीसर दीवम्मि, चउदिस विदिसासु अंजण-दधिमुह-रदिकर-पुरुणगवरेसु जाणि जिणचेइयाणि ताणि सव्वाणि तिसु वि लोएसु भवणवासिय वाणविंतर-जोइसिय- कप्पवासिय-त्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेहिं ण्हाणेहिं, दिव्वेहिं गंधेहिं, दिव्वेहिं अक्खेहिं, दिव्वेहिं पुप्फेहिं, दिव्वेहिं चुण्णेहिं, दिव्वेहिं दीवेहिं, दिव्वेहिं धूवेहिं, दिव्वेहिं वासेहिं, आसाढ़-कात्तिय फागुण-मासाणं अट्ठमिमाइं काऊणजाव पुण्णिमंति णिच्चकालं अच्चंति, पुज्जंति, वंदंति, णमंसंति णंदीसर महाकल्लाण पुज्जं करंति अहमवि इह संतो तत्थ संताइयं णिच्चकालं अच्चेमि पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो सुगइ-गमणं, समाहिमरणं जिणगुण संपत्ति होउ मज्झं।

॥ इति नंदीश्वर भक्तिः ॥

लघु शांति भक्ति

(मालनी छन्दः)

सकलकुसुमवल्ली पुष्कलावर्तमेघो,
दुरिततिमिरभानुः कल्पवृक्षोपमानः।
भवजलनिधिपोतः सर्वसंपत्तिहेतुः,
स भवतु सततं वः श्रेयसे शांतिनाथः।।1।।

समवशरण लक्ष्म्या वीक्ष्यमाणः कटाक्षैः,
सुकृत-विकृत चिन्है-रष्टभिः प्रतिहार्यैः।
अविहत विहतारिः प्राज्य वैराग्य भावः,
स्व पर-गुरुं नमामि प्रार्थ्य सम्यक् प्रसिद्धः।।2।।

कुनय घनतमोऽन्ध कुश्रुतोलूक विद्विट्,
सुनय-मय मयूखैः विश्वमाशु प्रकाश्य।
प्रकट परम दीप्तिर्बोधयन् भव्यपद्मान्,
प्रदहतु जिनशान्तिनाथ जिद् दुष्कृतं नः।।3।।

यदमल पदपद्मं श्री जिनेशस्य नित्यं,
शतमख शत सेव्यं पद्म गर्भादि वन्द्यम्।
दुरित वन कुठारं ध्वस्त मोहांधकार,
सदखिल सुख हेतुं त्रिप्रकारै-र्नमामि।।4।।

(शार्दूल विक्रीडित छन्दः)

त्रैलोक्योदर संभवासु विशदां लक्ष्मी नयत्यांतिकीं,
राज्यकोशयुतं यशः पृथुतरं सौख्यं प्रतापोल्वणं।
छत्रचामरभूषितं च निजतां ज्ञानं च सौख्यास्पद,
मेतच्छ्री श्री सर्वज्ञ देव विदिते भक्ति प्रसादाद्भवेत्।।5।।

अञ्चलिका

इच्छामि भन्ते ! संतिभत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं, पञ्च-महा-कल्लाण-संपण्णाणं, अट्ठ-महापा-डिहेर-सहियाणं, चउतीसातिसय-विसेस-संजुत्ताणं, बत्तीस-देवेंद-मणिमय-मउड-मत्थय-महियाणं बलदेव वासुदेव-चक्कहर-रिसि-मुणि-जदि-अणगारोव गूढ़ाणं, थुइ-सय-सहस्स-णिलयाणं, उसहाइ-वीर- पच्छिम-मंगल -महापुरिसाणं णिच्चकालं, अच्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइगमणं, समाहि-मरणं जिण-गुण सम्पत्ति होदु मज्झं।

सिद्धचक्र-स्तुति

जय सिद्धचक्र देवाधिदेव, सुरनर विद्याधर विहितसेव।
जय सिद्धचक्र भयचक्र मुक्त, मुक्तिश्री संगम शर्मशक्त॥१॥

जय सिद्धचक्र परमात्मरूप, पावनगुणरञ्जित परमभूप।
जय सिद्धचक्र कर्मारिवीर, दुस्तर भवसागर लब्धतीर॥२॥

जय सिद्धचक्र सम्यक्त्वसार, सञ्ज्ञान समुद्र समाप्तपार।
जय सिद्धचक्र दर्शनविशुद्ध, वीर्याजितगुणगणमणि समिद्ध॥३॥

जय सिद्धचक्र सूक्ष्मस्वभाव, अवगाहन गुण सम्यक्त्वभाव।
जय सिद्धचक्र गुरुलघुविमुक्त, अव्याधिबाध लक्षणनिरक्त॥४॥

जय सिद्धचक्र दुर्गतिविनाश, दुर्व्याधिहरण जनपूरिताश।
जय सिद्धचक्र करुणासमुद्र, भुवनत्रय मण्डन नतमुनीन्द्र॥५॥

जय सिद्धचक्र लोकप्रसिद्ध, कालत्रय सम्भव भावशुद्ध।
जय सिद्धचक्र चारित्रसार, मुनिजन संसेवित मुक्तिहार॥६॥

जय सिद्धचक्र कविराजपूज्य, सम्प्राप्त शिवालय परमराज्य।
जय सिद्धचक्र हतदोषचक्र, तनुवातस्थित नुत नम्रशक्र॥७॥

जय सिद्धचक्र चित्तौघहरण, जिननाममात्र सम्पत्तिकरण।
जय सिद्धचक्र निश्चल चरित्र, भवसागर तारणयानपात्र॥८॥

(घत्ता छन्द)

इति सिद्धसमूहं निर्गतमोहं, यः स्तोति विशुद्धमतिः।
समवति गुणचन्द्रः परमजिनेन्द्रः सिद्धसौख्य सम्पत्तिततिः॥९॥

***

कल्याणालोचना

परमप्पइ वड्ढमदिं, परमेट्ठीणं करोमि णवकारं।
सगपर सिद्धिणिमित्तं, कल्लाणालोयणा वोच्छे॥१॥

रे जीवा-णंत-भवे, संसारे संसरंत बहुवारं।
पत्तो ण बोहिलाहो, मिच्छत्त-विजंभपयडीहिं॥२॥

संसारभमणगमणं कुणंत, आराहिदो ण जिणधम्मो।
तेणविणा वरं दुक्खं, पत्तोसि अणंतवाराइं॥३॥

संसारे णिवसंता, अणंतमरणाइ पाओसि तुमं।
केवलिणा विण तेसिं, संखापज्जत्ति णो हवदि॥४॥

तिण्णिसया छत्तीसा, छावट्ठिसहस्सवार मरणाइं।
अंतोमुहुत्तमज्झे, पत्तोसि णिगोयमज्झम्मि॥५॥

वियलिंदिये असीदी, सट्ठी चालीसमेव जाणेहिं।
पंचेंदिय चउवीसं, खुद्दभवंतोमुहुत्तस्स॥६॥

अण्णोण्णं खज्जंता, जीवा पावंति दारुणं दुक्खं।
णहु तेसिं पज्जत्ती, कहपावइ धम्ममदिसुण्णो॥७॥

मायापिया कुडुंबो, सुजणजण कोवि णायदि सत्थे।
एगागी भमदि सदा, णहि वीओ अत्थि संसारे॥८॥

आउक्खएवि पत्ते, ण समत्थो कोवि आउदाणेय।
देवेंदो ण णरेंदो, मणिओसह मंतजालाई॥९॥

संपडि जिणवरधम्मो, लद्धोसि तुमं विसुद्धजोएण।
खामसु जीवा सव्वे, पत्ते समये पयत्तेण॥१०॥

तिण्णिसया तेसट्ठि, मिच्छत्ता दंसणस्स पडिवक्खा।
अण्णाणे सद्दहिया, मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज॥११॥

महुमज्जमंसजूआ, पभिदीवसणाइ सत्तभेयाइं।
णियमो ण कथं च तेसिं, मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज॥१२॥

अणुवयमहव्वया जे, जमणियमासील सहगुरुदिण्णा।
जे जे विराहिदा खलु, मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज॥१३॥

णिच्चिदरधादुसत्त य, तरुदसवियलिंदिएसु छच्चेव।
सुरणरयतिरियचउरो, चउदस मणुए सदसहस्सा॥१४॥

एदे सव्वे जीवा, चउरासीलक्खजोणिवसि पत्ता।
जे जे विराहिदा खलु, मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज॥१५॥

पुढवीजलग्गिवाओ, तेओवि वणप्फदी य वियलतया।
जे जे विराहिदा खलु, मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज॥१६॥

मल सत्तरा जिणुत्ता, वयविसये जा विराहणा विविहा।
सामइया खमइया खलु, मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज॥१७॥

फलफुल्लछल्लिवल्लि, अणगल ण्हाणं च धोवणादिहिं।
जे जे विराहिदा खलु, मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज॥१८॥

णो शीलं णेव खमा, विणओ तवो ण संजमोवासा।
ण कदा ण भाविकदा, मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज॥१९॥

कंदफलमूलबीया, सचित्तरयणीयभोयणाहारा।
अण्णाणो जे वि कदा, मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज॥२०॥

णो पूया जिणचरणे, ण पत्तदाणं न चेइयागमणं।
ण कदा ण भाविद मये, मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज॥२१॥

बंभारंभपरिग्गह, सावज्जा बहु पमाददोसेण।
जीवा विराहिदा खलु, मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज॥२२॥

सत्तातिसदरखेत्तभवा, तीदाणागदसुवट्टमाणजिणा।
जे जे विराहिदा खलु, मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज॥२३॥

अरुहासिद्धाइरिया, उवझाया साहु पञ्चपरमेट्ठी।
जे जे विराहिदा खलु, मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज॥२४॥

जिणवयण धम्मचेदि, यजिणपडिमा किट्टियाअकिट्टिमया।
जे जे विराहिदा खलु, मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज॥२५॥

दंसणाणाणचरित्ते, दोसा अट्ठट्ठपञ्चभेयाइं।
जे जे विराहिदा खलु, मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज॥२६॥

मदिसुदओहीमणपज्जयं, तहा केवलं च पंचमयं।
जे जे विराहिदा खलु, मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज॥२७॥

आयारादी अंगा, पुव्वपइण्णा जिणेहिं पण्णत्ता।
जे जे विराहिदा खलु, मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज॥२८॥

पंच महव्वदजुत्ता, अट्ठादससहस्ससीलकदसोहा।
जे जे विराहिदा खलु, मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज॥२९॥

लोए पियरसमाणा, रिद्धिपवण्णा महागणवइया।
जे जे विराहिदा खलु, मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज॥३०॥

णिग्गंथ अज्जियाओ, सड्ढा सड्ढी य चउविहो संघो।
जे जे विराहिदा खलु, मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज॥३१॥

देवा सुरा मणुस्सा, णेरइयातिरियजोणिगदजीवा।
जे जे विराहिदा खलु, मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज॥३२॥

कोहो माणो माया, लोहो एदेय रायदोसाइं।
अण्णाणे जे वि कदा, मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज॥३३॥

परवत्थं परमहिला, पमादजोगेण अज्जियं पावं।
अण्णावि अकरणीया, मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज॥३४॥

एगो सहावसिद्धो सोहं, अप्पा वियप्पपरिमुक्को।
अण्णो ण मज्झ सरणं, सरणं सो एग परमप्पा॥३५॥

अरस अरूव अगंधो, अव्वावाहो अणंतणाणमओ।
अण्णो ण मज्झ सरणं, सरणं सो एग परमप्पा॥३६॥

णेयपमाणं णाणं, समए एगेण हुंति ससहावे।
अण्णो ण मज्झ सरणं, सरणं सो एग परमप्पा॥३७॥

एयाणेयवियप्पप्प, साहणे सयसहावसुद्धगदी।
अण्णो ण मज्झ सरणं, सरणं सो एग परमप्पा॥३८॥

देहपमाणो णिच्चो, लोयपमाणो वि धम्मदो होदि।
अण्णो ण मज्झ सरणं, सरणं सो एग परमप्पा॥३९॥

केवलदंसणणाणं, समये एगेण दुण्णिउवओगा।
अण्णो ण मज्झ सरणं, सरणं सो एग परमप्पा॥४०॥

सगरूव सहजसिद्धो, विहावगुणमुक्ककम्मवावारो।
अण्णो ण मज्झ सरणं, सरणं सो एग परमप्पा॥४१॥

सुण्णो णेय असुण्णो, णोकम्मो कम्मवज्जिओ णाणं।
अण्णो ण मज्झ सरणं, सरणं सो एग परमप्पा॥४२॥

णाणाउज्जोण भिण्णो, वियप्पभिण्णो सहावसुक्खमओ।
अण्णो ण मज्झ सरणं, सरणं सो एग परमप्पा॥४३॥

अच्छिण्णोवच्छिण्णो, पमेय रूवत्त गुरुलहू चेव।
अण्णो ण मज्झ सरणं, सरणं सो एग परमप्पा॥४४॥

सुहअसुहभावविगओ, सुद्धसहावेण तम्मयं पत्तो।
अण्णो ण मज्झ सरणं, सरणं सो एग परमप्पा॥४५॥

णो इत्थी ण णउंसो, णो पुंसो णेव पुण्णपावमओ।
अण्णो ण मज्झ सरणं, सरणं सो एग परमप्पा॥४६॥

ते को ण होदि सुजणो, तं कस्स ण बंधवो ण सुजणो वा।
अप्पा हवेह अप्पा, एगागी जाणगो सुद्धो॥४७॥

जिणदेवो होदु सदा मई, सु जिणसासणे सया होऊ।
सण्णासेण य मरणं, भवे भवे मज्झ संपदओ॥४८॥

जिणो देवो जिणो देवो, जिणो देवो जिणो जिणो।
दयाधम्मो दयाधम्मो, दयाधम्मो दया सदा॥४९॥

महासाहू महासाहू, महासाहू दिगंबरा।
एवं तच्च सया हुज्ज, जावण्णो मुत्ति संगमो॥५०॥

एवमेव गओकालो, अणंतो दुक्खसंगमे।
जिणोवदिट्ठसण्णासे, ण यतारोहणा कया॥५१॥

संपइ एव संपत्तऽराहणा जिणदेसिया।
किं किं ण जायदे मज्झ, सिद्धिसंदोहसंपई॥५२॥

अहो धम्ममहो धम्मं, अहो मे लद्धि णिम्मला।
संजादा संपया सारा, जेण सुक्खमणूपमं॥५३॥

एवं आराहंतो, आलोयणवंदणापडिक्कमणं।
पावइ फलं च तेसिं, णिद्दिट्ठं अजियवम्मेण॥५४॥

॥ इति कल्याणालोचना ॥

कल्याणालोचनां भक्त्या, स्तवीभि च करोति यः।
स्तोत्रेण परया भक्त्या, 'विशद' मोक्ष मार्गगं।।

*****

मंगल गोचर माध्याह्न क्रिया विधि

त्रयोदशी को वर्षायोग प्रतिष्ठापन निष्ठापन के अवसर पर मंगल गोचर माध्याह्न देव वंदना क्रिया में सिद्धभक्ति, चैत्यभक्ति, पञ्चमहागुरुभक्ति, शांतिभक्ति, समाधिभक्ति पढ़ना चाहिये तथा मंगल गोचर भक्त प्रत्याख्यान क्रिया विधि के अंतर्गत आचार्य श्री के समक्ष सिद्धभक्ति, वृहदयोगभक्ति, वृहदआचार्यभक्ति, शांतिभक्ति, समाधिभक्ति करना चाहिये।

वर्षायोग धारण समापन क्रिया विधि

चतुर्दशी को उपवासपूर्वक वार्षिक प्रतिक्रमण करें। वर्षायोग धारण समापन विधि के अंतर्गत सिद्ध भक्ति, योग भक्ति के साथ **पूर्व दिशा में** –

यावन्ति जिन चैत्यानि, विद्यन्ते भुवनत्रये।
तावन्ति सततं भक्त्या, त्रिः परीत्य नमाम्यहम्॥

और ऋषभ अजितनाथ स्तवन पेज नं. 77–78 पर देखें। पश्चात् 'लघु चैत्यभक्ति' पढ़ना चाहिये। **पूर्व दिशा में अरहंत सिद्ध आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु, जिनधर्म, जिनागम, जिनचैत्य, जिनचैत्यालय** को मेरा बारंबार नमोस्तु ॐ ह्रीं पूर्व दिशे दिग्बन्धन करोमि (पीले सरसों या पुष्प छोड़े।)

दक्षिण दिशा में –

यावन्ति जिन चैत्यानि, विद्यन्ते भुवनत्रये।
तावन्ति सततं भक्त्या, त्रिः परीत्य नमाम्यहम्॥

संभवनाथ अभिनन्दन नाथ स्तवन पेज नं. 78, 79 पर पढें। पश्चात् लघु चैत्य भक्ति पढ़ना चाहिए, **दक्षिण दिशा में स्थित अरहन्त, सिद्ध आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु, जिनआगम, जिन चैत्य, जिनचैत्यालय के लिए बारम्बार नमस्कार[3] हो (पीली सरसों छोड़े)**

पश्चिम दिशा में –

यावन्ति जिन चैत्यानि, विद्यन्ते भुवनत्रये।
तावन्ति सततं भक्त्या, त्रिः परीत्य नमाम्यहम्॥

सुमतिनाथ, पदप्रभु स्तवन पेज नं. 81, 82 पर पढ़ें पश्चात् लघु चैत्य भक्ति पढ़ना चाहिए, दक्षिण दिशा में स्थित **अरहन्त सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु, जिन धर्म, जिनागम, जिनचैत्य, जिन चैत्यालय के लिए मेरा बारम्बार नमस्कार[3] हो। (पीली सरसों छोड़े)**

उत्तर दिशा में –

यावन्ति जिन चैत्यानि, विद्यन्ते भुवनत्रये।
तावन्ति सततं भक्त्या, त्रिः परीत्य नमाम्यहम्॥

सुपार्श्वनाथ, चन्द्रप्रभु स्तवन पेज नं. 82, 83 पर पढ़ें पश्चात् लघु चैत्यभक्ति पढ़ना चाहिए, उत्तर दिशा में स्थित **अरहन्त सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु, जिनधर्म, जिनागम, जिनचैत्य, जिन चैत्यालय के लिए मेरा बारम्बार नमस्कार[3] हो। (पीली सरसों छोड़े)**

अन्त में पञ्चमहागुरु भक्ति, शान्ति भक्ति समाधि भक्ति पढ़े।